CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

# युग युगीन उज्जयिनी

**भारतीय इतिहास संकलन समिति-मध्यभारत**

कलियुगाब्द ५०८३

विक्रम संवत् २०४८

**सम्पादक मण्डल**

**सम्पादक**

डॉ. मदनमोहन दुबे

**सहायक**

डॉ. सुधाकर अमृतफले

**सदस्य**

डॉ. विष्णु भटनागर,

डॉ. सुरेन्द्र आर्य

ग्नुभाई

ट बम्बई के सौजन्य से

**प्रकाशक :**

**भारतीय इतिहास संकलन समिति, मध्यभारत**

**(मा. श्री बाबू सा. आपटे स्मारक समिति द्वारा संचालित)**

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

# भारतीय इतिहास संकलन समिति - मध्यभारत

मा. बाबा सा. आपटे स्मारक समिति के अन्तर्गत भारतीय इतिहास संकलन समिति अपनी मातृभूमि भारतवर्ष के विगत इतिहास के विविध उपकरणों के संकलन का कार्य कर रही है। क्योंकि उनके सम्यक् अध्ययन के बिना हमारा इतिहास अपूर्ण है। हमारा इतिहास प्रायः विदेशी लेखकों द्वारा संकलित है जिसमें प्रायः ऐतिहासिक तथ्यों की अवहेलना स्पष्ट दिखाई देती है। सम्भव है उन्होंने विजेता होने के कारण ही हेतु पूर्वक तथ्यों को विकृत करके प्रस्तुत किया हो। इतिहास के प्रति हमारा सम्यक् दृष्टिकोण क्या होना चाहिये—इस विषय में मा. बाबा सा. आपटे का लेख स्मारिका में पर्याप्त मार्ग दर्शक है। उन्होंने इसे राष्ट्रीय कर्त्तव्य कहा है।

पिछले तेरह वर्षों से अपने मध्यभारत में भी इतिहास संकलन समिति का कार्य प्रगति पर है। प्रारंभिक वर्षों में इतिहास चेतना जागृत करने के उद्देश्य से प्रदेश के अनेकानेक नगरों में 'इतिहास दिवस' का आयोजन किया गया। इन्दौर, उज्जैन, धार, मंदसौर, नीमच, भोपाल, ग्वालियर, होशंगाबाद, बैतूल, आदि स्थानों पर इतिहास दिवस आयोजित किये गये। यह एक स्थायी कार्यक्र[म] का भाग है। किसी भी स्थानीय महापुरुष के जन्मदि[न] अथवा कोई भी स्मरणीय प्रसंग इस आयोजन के लि[ए] उपयुक्त होता है। इसी क्रम में धार में एक विशे[ष] आयोजन में पद्मश्री मा. डॉ. श्री वि.श्री. वाकणकर जी [का] सम्मान किया गया एवं एक स्मारिका का विमोचन [मा.] मोरोपंतजी पिंगले के द्वारा सम्पन्न हुआ।

'आर्यन इन्वेजन ए मिथ' अर्थात् आर्यों का आक्रम[ण] (आगमन) एक कपोल कल्पना है। इस ग्रन्थ के लेख[क] श्री डॉ. वन्हाड़पाण्डे जी के इसी विषय पर विश्वविद्याल[य] केन्द्रों पर व्याख्यानों का आयोजन किया गया। उज्जै[न] इन्दौर, भोपाल, ग्वालियर में श्री वन्हाड़पाण्डेजी [के] भाषणों के सफल कार्यक्रम हुए। इतिहास विषयक जाग[ृति] एवं चेतना उत्पन्न करने हेतु इसी प्रकार के विवि[ध] कार्यक्रम प्रायः अन्यान्य स्थानों पर आयोजित क[रना] इतिहास संकलन समिति के स्थायी कार्यक्रम का अ[ंग] है। और इस हेतु वह सतत क्रियाशील है।

---

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

# सम्पादकीय

हमारे देश की मोक्षदायिनी सप्तपुरियों में एक—उज्जयिनी महाकाल की उपस्थिति से अत्यन्त पावन एवं महिमा मण्डित, विक्रम के शौर्य-पराक्रम से दिग् दिगन्त में देदीप्यमान और कविकुल गुरु कालिदास के काव्यालोक से सम्पूर्ण विश्व में गौरवान्वित है। उसका विगत इतिहास हमारे देश की सांस्कृतिक धरोहर है। चिरप्रतीक्षित 'युगयुगीन उज्जयिनी' में उसकी एक झलक प्रस्तुत करने का यह लघु प्रयास भारतीय इतिहास संकलन समिति मध्यभारत में किया है। पुरानी पीढ़ी के अनेक प्रबुद्ध इतिहास-साहित्य एवं संस्कृति प्रेमियों की श्रेष्ठ रचनाओं के साथ कतिपय नवीन लेखकों तथा अध्येताओं की रचनाओं को भी इस स्मारिका में स्थान दिया गया है। हम उन सबके लिये हार्दिक आभार व्यक्त करते हैं। उनका वैदुष्य निश्चय ही प्रचार के कारण लोकोपकारक सिद्ध होगा। अपनी प्राचीन गौरव गाथाओं के साथ ही उत्थान पतन की व्यथा कथाओं की जानकारी हमारे समाज के उज्ज्वल भविष्य के लिये आज भी प्रेरक एवं मार्गदर्शक है। यद्यपि उज्जयिनी के अधिकांश गौरव बिन्दुओं को प्रकाशित करने का प्रयत्न किया गया है तथापि सम्भव है कि सामान्य मानव की सीमित दृष्टि के कारण कतिपय विवेचन में छूट गये हों। आशा है विद्वद्जन नीरक्षीर विवेक से क्षमा करेंगे।

इस स्मारिका के प्रकाशन के लिये सुहृद्-स्नेहियों का सहयोग ही इसका सच्चा सम्बल-आधार है। सब दृष्टियों से इतना व्यापक सहयोग अपने आप में विस्मय कारक है, परन्तु इन मित्रों में से अधिकांश मौन सेवा-व्रती एवं प्रसिद्धि परांगमुख होने के कारण उनका नामोल्लेख उनके निस्वार्थ समाज सेवा कार्य से मेल नहीं खाता है अतः उनके लिये मौन कृतज्ञता ज्ञापित करना ही उपयुक्त है। पुनश्च नये पुराने लेखकों को उनकी रचनाओं के लिये तथा समस्त सहयोगियों के प्रति हम हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करते हैं। वास्तव में कविकुल गुरु कालिदास की निम्न उक्ति इस सम्बन्ध में बड़ी समीचीन है—

सिध्यन्ति कार्याणि महत्स्वपि यन्नियोज्यः
सम्भावना गुणमवेहि तमीश्वराणाम्----------

सामान्यजन भी महान व्यक्तियों के द्वारा बड़े कार्यों के लिये नियुक्त किये जाने पर उसमें सफलता प्राप्त कर लेते हैं क्योंकि महान व्यक्तियों में सम्भावना गुण की विशेष शक्ति रहती है। मा. मोरोपंतजी पिगले की प्रेरणा इसके प्रकाशन की मूल शक्ति रही है। अस्तु अलं अति विस्तरेण।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

# अनुक्रम


| | | पृष्ठ |
|---|---|---|
| ○ कालिदास (कविता) | उदयशंकर भट्ट | १ |
| ○ एक राष्ट्रीय कर्तव्य | उमाकांत केशव आपटे | २ |
| ○ जयनगरी उज्जयिनी | डॉ. हेमचन्द्र राय चौधुरी | ५ |
| ○ उज्जैन के अतीत पर विहंगम दृष्टि | स्व. डॉ. वि.श्री. वाकणकर | १२ |
| ○ अवन्ती क्षेत्र के प्राचीन अभिलेख और इतिहास चयन | डॉ. हरिहर त्रिवेदी | २० |
| ○ प्राचीन भारत में उज्जैन का स्थान | बैजनाथ पुरी | २८ |
| ○ संस्कृत साहित्य में उज्जयिनी | गोपीकृष्ण द्विवेदी | ३१ |
| ○ क्षिप्रा की महिमा | पं. दयाशंकर दुबे/ पं. राम प्रताप त्रिपाठी | ३५ |
| ○ शताब्दियों का उज्जैन | संकलित | ४० |
| ○ उज्जयिनी : युगे-युगे | डॉ. सुधाकर अमृतफले | ४४ |
| ○ प्राचीन उज्जयिनी के कुछ महान व्यक्ति | वृज किशोर चतुर्वेदी | ४९ |
| ○ उज्जैन का प्राचीन वैभव | डॉ. सुलोचना जोशी | ५८ |
| ■ उज्जैन पर्यटन/परिक्रमा | | |
| ○ उज्जैन के दर्शनीय स्थान | ठाकुर उत्तमसिंह | ६० |
| ○ सम्राट विक्रमादित्य | | ७२ |
| ○ विक्रमादित्य की आराध्या हरसिद्धी देवी | | ७३ |
| ○ उज्जैन की वेधशाला | रामचन्द्र विनायक वैद्य | ७४ |
| ○ उज्जयिनी से प्राप्त सिक्कों पर शैवधर्म का प्रभाव | डॉ. श्रीमती भारती श्रोती | ७९ |
| ○ परमारकालीन व्याकरण-शिक्षा सहायक नागबन्ध | बापू (ल.श्री.) वाकणकर 'लिपीकार' | ८१ |
| ■ सिंहस्थ संदर्भ | | |
| ○ उज्जैन का सिंहस्थ महापर्व | इन्द्र कुमार | ८४ |
| ○ कुंभ-सिंहस्थ पर्व का योग कब होता है? | उर्वशी सुधाकर | ८६ |
| ○ सिंहस्थ स्नान की परंपरा | डॉ. भगवतीलाल राजपुरोहित | ८७ |
| ■ इतिहास पुरुष वाकणकर संदर्भ/स्मृति | | |
| ○ कला-साधक इतिहास पुरुष डॉ. वाकणकर | डॉ. दुर्गा शर्मा | ९१ |
| ○ संस्कृति-पुरुष डॉ. वाकणकर | डॉ. विष्णु भटनागर | ९४ |


RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

॥ श्री ॥

# राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ

(प्रधान कार्यालय- नागपुर)

सरसंघचालक : म.द. देवरस     सरकार्यवाह : हो.वे.शेषाद्रि

दूरभाष : ४३००३/४६५८९     डॉ.हेडगेवार भवन, महाल, नागपुर - ४४० ००२

पत्र क्र.४३५     दिनांक १७/१२/९१     तिथि मार्ग शीर्ष शुक्ल एकादशी, गीताजयंति शके १९१३

श्रीमान मदन मोहन दुबे जी,

यह तो अतीव आनंद व हर्ष की बात है कि, भारतीय इतिहास संकलन समिति - मध्यभारत की ओर से अपने देश की गौरवमय संस्कृति के विकास में महत्वपूर्ण स्थान रखनेवाली अवंतिका नगरी के गरिमामय इतिहास की जानकारी एवं सामान्यजनों को सहज रूप से कराने के उद्देश्य से "युगयुगीन उज्जयिनी" नाम से एक स्मारिका का प्रकाशन होने जा रहा है ।

उज्जयिनी जैसी मोक्षदायिनी सप्तपुरीयों में से एक नगरी है, वैसी प्राचीन काल से ही साहित्य व कला - संस्कृति के क्षेत्र में भी उसका योगदान अविस्मरणीय ही कहना होगा । उज्जयिनी प्राचीन काल में जैसी भगवान् श्रीकृष्ण के गुरू सांदिपनी ऋषि की आश्रम स्थली के नाते तथा ऐतिहासिक काल में राजा भोज की राजधानी तथा महाकवि कालिदासजी की दिव्य प्रतिभा से निर्मित अमर काव्य कृतियों से भी जुड़ी हुई हैं, वैसी ही अर्वाचीन काल में बहुमुखी प्रतिभाओं से संपन्न, विद्वान, इतिहासकार व पुरातत्व वेत्ता के नाते विश्वविख्यात तथा अथक परिश्रमों द्वारा अपने सांस्कृतिक परंपराओं का, कलाकृतियों का आविष्कार करने वाले और राष्ट्र समर्पित जीवन बिताने वाले डॉ. वाकणकर जी की कर्मभूमि के नाते भी सर्व दूर विख्यात हैं ।

अत: "युगयुगीन उज्जयिनी" नाम से प्रकाशित होनेवाली इस स्मारिका के लिए भी अपनी शुभेच्छाएँ अर्पित करता हूँ तथा भगवान श्री महाकालेश्वर जी के चरणों में आपके इस उपक्रम की सफलता के लिए प्रार्थना करता हूँ ।

आपका,

म.द. देवरस

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

राज भवन,
भोपाल–४६२००३

दिसम्बर २०, १९९१

राज्यपाल
मध्यप्रदेश

## संदेश

मुझे यह जानकर खुशी हुई कि भारतीय इतिहास संकलन समिति मध्य-भारत द्वारा उज्जैन के गरिमामय इतिहास पर पर 'युगयुगीन उज्जयिनी' स्मारिका का प्रकाशन किया जा रहा है ।

उज्जैन नगर की अपनी एक अलग ऐतिहासिक, सांस्कृतिक और आध्यात्मिक पहचान है । आदि काल से ही यह नगर विद्या और संस्कृति का केन्द्र रहा है । मुझे आशा है कि इस स्मारिका में उज्जयिनि के सांस्कृतिक महत्व पर सारगर्भित सामग्री का संकलन होगा ।

बधाई और शुभकामनाएँ ।

( कुंवर महमूद अली खां)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सुन्दरलाल पटवा
मुख्य मंत्री

मध्यप्रदेश शासन
भोपाल, 462004

दि•19•12•91

संदेश

यह जानकर प्रसन्नता हुई कि भारतीय इतिहास संकलन समिति मध्य भारत द्वारा "युग युगीन उज्जयिनी" स्मारिका का प्रकाशन किया जा रहा है।

आशा है कि इस पुण्यतीर्थ नगरी के गरिमामय इतिहास पर स्मारिका में ज्ञानवर्धक सामग्री का प्रकाशन किया जाएगा।

स्मारिका की सफलता के लिए शुभकामनाएं।

(सुन्दरलाल पटवा)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

**बाबूलाल जैन**
मंत्री
वाणिज्यिक कर विभाग
मध्यप्रदेश

दूरभाष { कार्यालय : 551381
निवास : 554360
555674

बी-19 (74 बंगला)
स्वामी दयानन्द नगर
क्र. 1158
भोपाल, दिनांक 18.12.91.

प्रिय श्री दुबे जी,

यह जानकर अत्यन्त हर्ष हुआ कि भारतीय इतिहास संकलन समिति, मध्यभारत अवंतिकापुरी के गरिमामय इतिहास पर "युगयुगीन उज्जयिनी" नामक स्मारिका प्रकाशित करने जा रही है ।

भारतवर्ष में उज्जैन की आदिकाल से विद्या एवं संस्कृति के क्षेत्र में अपनी एक अलग छाप रही है और उसका अपना एक अलग एवं विशेष महत्व भी है ।

आशा करता हूँ स्मारिका में प्रकाशित होने वाली सामग्री उज्जैन के गौरवपूर्ण इतिहास एवं संस्कृति को जन-जन तक पहुँचाने में सक्रिय भागीदारी निभाएगी एवं एक दुर्लभ व संग्रहणीय पुस्तक के रूप में जानी जाएगी ।

(बाबूलाल जैन)

श्री मदनमोहन दुबे,
संयोजक, भारतीय इतिहास संकलन समिति,
मध्यभारत, "नर्मदा" ई-2/197, अरेरा कॉलोनी,
महावीर नगर, भोपाल ।

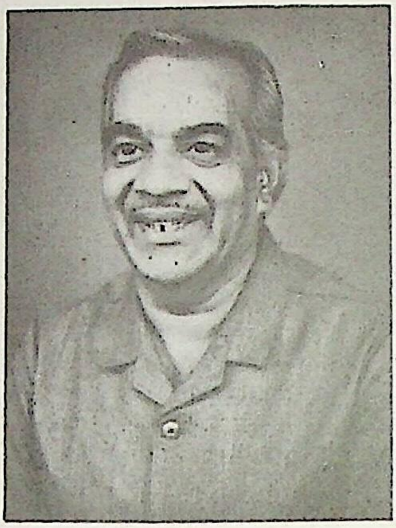

---

**निर्भय सिंह पटेल**
मंत्री
वन
मध्यप्रदेश

दूरभाष { निवास : 54011.
540225
कार्यालय : 550361

9, सिविल लाईन, भोपाल

क्र.930/मं/वन/90, दिनांक 18.12.91

मुझे जानकर प्रसन्नता हुई कि भारतीय इतिहास संकलन समिति, मध्यभारत द्वारा भारत की प्राचीन एवं पुण्यशील गौरवमयी नगरी "उज्जयिनी" पर दुर्लभ स्मारिका का प्रकाशन किया जा रहा है । इस स्मारिका के प्रकाशन से सर्व साधारण जन को उज्जयिनी नगरी के गौरवमय अतीत की सुलभ जानकारी उपलब्ध होगी ऐसा मुझे विश्वास है । इस शुभ कार्य हेतु मेरी ओर से अनेकानेक शुभ कामनाएं ।

(निर्भयसिंह पटेल)

श्री मदन मोहन दुबे,
संयोजक,
भारतीय इतिहास संकलन समिति,
मध्यभारत, भोपाल.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

**किशोरीलाल वर्मा**
राज्यमंत्री, शालेय शिक्षा
मध्यप्रदेश

क्रमांक .3166.........

भोपाल, दिनांक 18-12-91

### : संदेश :

मोक्षदायिनी अवन्तिका पुरी विद्या एवं संस्कृति का केन्द्र रहा है इसके गरिमामय इतिहास पर युगयुगीन उज्जयिनी नामक स्मारिका का प्रकाशन किया जाना उज्जयिनी के गौरव को जन हृदय में अविस्मृत छवी का निर्माण करने में सहायक होगा ।

स्मारिका के प्रकाशन एवं सफलता के लिए मेरी हार्दिक शुभकामनाए ।

(किशोरीलाल वर्मा)

---

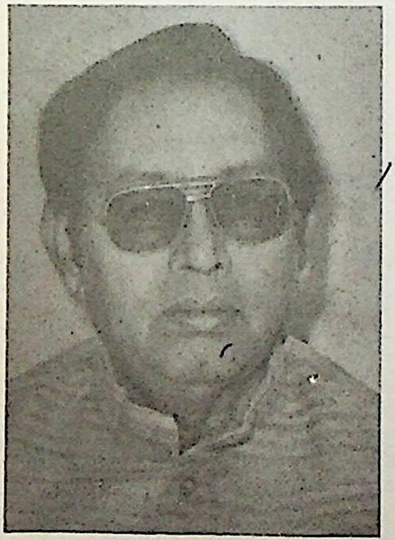

राजेन्द्र धारकर
अध्यक्ष

मध्यप्रदेश गृह निर्माण मंडल

दिनांक 20/12/87

### शुभ-कामना संदेश

प्रदेश में सांस्कृतिक क्षेत्र और पुरातन गौरव की एक समृद्ध परम्परा रही है । अनेक ऐसे नगर हैं, जिनके उज्ज्वल कीर्ति-स्तम्भों और गौरव-पताकाओं को अतीत की गर्द ने लोक-स्मृति से ओझल कर दिया है। ऐसे में उनके खोये हुए ऐतिहासिक अवशेषों का संकलन एक स्तुत्य प्रयास है, जो "भारतीय इतिहास संकलन समिति" द्वारा किया जा रहा है ।

जहाँ तक उज्जयिनी का प्रश्न है, उसकी जड़ें इतिहास के झुरमुट को लांघकर भारतीय प्राचीन संस्कृति के पौराणिक काल तक फैली हुई हैं । उज्जयिनी के इतिहास की खोज केवल एक नगर की ऐतिहासिक खोज तक ही सीमित नहीं है, बल्कि प्रकारान्तर से यह भारतीय अस्मिता को पहचानने और भावी पीढ़ी को समृद्ध विरासत सौंपने का संकल्पित प्रयास है ।

मैं संकलन समिति के लिये अपनी शुभ-कामनायें प्रेषित करता हूं ।

( राजेन्द्र धारकर )

प्रति,

श्री मदनमोहन जी दुबे,
संयोजक,
भारतीय इतिहास संकलन समिति, मध्यभारत,
"संपदा" ई-2/147, अरेरा कालोनी, भोपाल ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

Phones : 3019538
3017443

# The Indian Archaeological Society

**Patrons**
Prof. B.B. Lal
Archaeological Survey of Indi
Purana Qila
New Delhi

Prof. B.P. Sinha
68, Pataliputra Colony
Patna

**Chairman**
Dr. S.P. Gupta
148, Vigyan Vihar
Delhi-110092

**Vice-Chairmen**
Shri J.P. Joshi
Venus Co-operative Housing Society
Rohtak Road, Delhi

Prof. N.C. Ghosh
Viswa Bharati University
Shanti Niketan
West Bengal

**General Secretary**
Shri K.N. Dikshit
Archaeological Survey of India
New Delhi-110011

**Hon. Treasurer**
Dr. Shashi Asthana
National Museum
New Delhi-110011

**Secretary (Prehistory)**
Dr. S.N. Rajaguru
Deccan College, Pune

**Secretary (Protohistory)**
Dr. Makkhan Lal
Aligarh Muslim University
Aligarh

**Secretary (Historical Arch.)**
Prof. A. Sundara
Karnataka University
Dharwad

**Secretary (Science)**
Prof D.P. Agrawal
Physical Research Laboratory
Ahmedabad

**Members of the Executive Committee**
Prof. P. Singh, Varanasi
Dr. V.D. Mishra, Allahabad
Dr. V.H. Sonawane, Vadodara
Dr. R.P. Pandey, Gwalior
Dr. Zarine Cooper, Pune
Dr. W.H. Siddiqui, New Delhi

**Asstt. Secretary/Treasurer**
Shri Jitendra Nath
National Museum, New Delhi

**Editor Monographs**
Shri K.S. Ramachandran
New Delhi

नई दिल्ली
१३/१२/८९

प्रियवर मदन मोहन जी,

आपके कृपा-पत्र के संदर्भ में मुझे यह कहने का दुस्साहस हो रहा है कि आपकी योजना में मैं और अधिक सक्रिय भाग ले सकता था लेकिन आपने मुझे उससे वंचित रखा। उज्जैन का उत्खनन जब से हुआ मैं उस नगरी के इतिहास से जुड़ा और वर्षों से चाहता था कि मैं 'युगयुगीन उज्जयनी' पर कुछ लिखूं। जो मैं आज तक न कर पाया उसे आपने कर दिखाया। सचमुच आप धन्यवाद के सुपात्र हैं।

आपका यह परिश्रम हम सबका मार्ग-दर्शन करेगा, इसी शुभकामना के साथ।

आपका शुभेच्छु
शिवराज प्रकाश [illegible]

C/O ARCHAEOLOGICAL SURVEY OF INDIA, JANPATH, NEW DELHI-110011

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

# कालिदास

□ उदयशंकर भट्ट

पुष्पेषु चम्पा, नगरीषु लंका
नदीषु गंगा, नृवरेषु रामः।

रामासु रम्भा, पुरुषेषु विष्णुः
काव्येषु माघः कवि कालिदासः।

विश्व-भारती कल्प-लता के अमर सुमन-मकरंद अमंद,
युग-युगान्त का तिमिर चीर कर हुए प्रकाशित जिनके छंद,
नग-अधिराज शिखर गौरव से जिनके गाते गीत ललाम,
कवि-कुल-गुरु उन वश्यवाक् श्रीकालिदास को सतत् प्रणाम।

हिमगिरि-शिखर-समाधि-स्थित स्मर-विजयी शंकर मुग्ध हुए,
जिनके वीणा-पाणि-स्तव से प्रलयंकर उद्बुद्ध हुए,
गण-गण गुंजित तांडव-मंडित विश्व-ध्वनि साकार हुई,
क्षण-क्षण अणु परिमाणु हिल उठे गति में अयति पुकार हुई।

रस-हिलोर से सप्त-सिन्धु भर, नाच उठे भूधर सारे,
नंदित स्तव से, भव-वैभव, से आप्लुत हुए स्कंद न्यारे,
तारक-दल खिल झिलमिल-झिलमिल जिनसे निज वैभव पाते,
रवि, शशि, उषा, मेघमालाएँ नितप्रति दूत बने आते।

नव-नव चेतन लिए समीरण पहुँचाता संदेश जहाँ,
यक्ष-प्रिया को घूम-घूम कर ठहर-ठहर निःशेष जहाँ,
अमर भारती वीणानादिनि, जिनको पा कृतकृत्य हुई,
कालत्रय की प्रकृति भाव ले शब्द-शब्द की भृत्य हुई।

अति तेजस्वी, अमर यशस्वी, अपर विधाता अति अभिराम,
उस प्रकाश को, उस विकास को, कालिदास को सतत् प्रणाम्।



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

# इतिहास के प्रति सम्यक दृष्टिकोण-

# एक राष्ट्रीय कर्त्तव्य

□ उमाकांत केशव आप्टे (बाबा साहब आप्टे)

मा० बाबा साहेब आप्टे

**भा**रत का इतिहास जो अब तक लिखा गया है वह मुख्यतः विदेशी लेखकों ने लिखा है। उसमें हमारे भूतकाल को यथार्थ रूप में चित्रित करने की प्रवृत्ति नजर नहीं आती। उसके कई कारण हो सकते हैं। लेखकों का अज्ञान एवं पूर्वाग्रह तो बहुत बड़ी बाधा है ही, परन्तु दुनिया में भारत को बदनाम करने का एवं विजितों में हीन भावना निर्माण करने का अंग्रेजों का धूर्त कुचक्र सबसे प्रबल कारण रहा है।

**इतिहास संबंधी भ्रान्तियां**

उसी हेतु से 'भारत गरम देश होने के कारण यहाँ के लोग अधिक परिश्रम नहीं कर सकते, उनकी बुद्धि केवल तत्वज्ञान अथवा काव्य लिख सकती है', इत्यादि धारणाएँ बनाई गई और उसकी पुष्टि में फिर कहा गया कि 'भारत में आर्य बाहर से आकर बस गये हैं एवं उन्होंने यहां के मूल निवासी द्रविड़ों को जीतकर समूचे देश पर कब्जा कर लिया।' किसी ने इसके आगे जाकर कहा—द्रविड़ भी बाहर से ही आए थे, यहां के मूल निवासी तो उरांव, मुंडा, संथाल, भील, गोंड आदि लोग हैं। इसी के अनुसार इन जातियों को आदिम जाति। आज इन तथाकथित आदिम जातियों की उन्नति के लिए 'आदिम जाति सेवा संघ' भी चलाया जाता है। वास्तव में देखा जाय तो आर्यवंश की बात केवल मनः कल्पित है। भिन्न-भिन्न यूरोपीय भाषाओं में एक ही अर्थ प्रकट करने वाले और समान रूप रखने वाले कई शब्द मिलने के कारण पहले सबके लिए समान भाषा की संभावना बतायी गयी। कुछ लोगों ने उसे आर्यन भाषा कहा, परन्तु उसमें साफ कहा गया था कि यह केवल एक 'टेनटेटिव प्रोपोजीशन' है। वह किसी ऐतिहासिक आधार पर खड़ा किया गया प्रमाणित विचार अथवा सिद्धान्त नहीं था। परन्तु तिल का ताड़ बनाकर भारत पर आर्यों के आक्रमण को एक स्वतः सिद्ध घटना मान लिया गया। हजार में से नौ सौ निन्यानवे विद्वान आंखें मूँदकर उसे स्वीकार करते दिखाई देते हैं। अंग्रेजी स्कूलों एवं कॉलेजों में यही पढ़ाया गया। आज भी यही पढ़ाया जाता है।

उपरोक्त कारणों के फलस्वरूप भारत का, रामायण-महाभारत में जो इतिहास मिलता है उसको कल्पित पौराणिक गाथा (माईथोलोजी) कहा गया और भारत में मुसलमानों के पहले वाले कालखंड को अंधकारमय युग बताया गया। क्या यह आश्चर्य नहीं कि भारतीयों ने उसके सहस्त्रों वर्ष पूर्व आग्नेय-एशिया में विस्तृत उपनिवेश निर्माण कर जो एक अनोखा सांस्कृतिक साम्राज्य निर्माण किया था, उसका नाम भी आज कई पढ़े-लिखे भारतीय नहीं जानते।



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jammu.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ज क़ई द

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

### विकृत दृष्टिकोण

विकृत दृष्टि से भारतीय इतिहास लिखने वालों ने इतिहास के कालखंडों का विभाजन भी अत्यन्त ही विचित्र ढंग से किया। पहला प्राचीन काल, दूसरा शक—हूणादि के आक्रमणों का काल, तीसरा मुस्लिम काल एवं चौथा ब्रिटिश काल। फिर इतिहास लिखने के लिए जो आधारभूत सामग्री ली गयी वह कौन सी थी? विदेशी लेखकों के प्रवास वर्णन तथा उन्हीं के शोध-निबंधादि। यह भी एक सिद्धान्त सा ही माना गया कि भारतीय सामग्री विश्वसनीय नहीं है। अतः इस आधार पर जो पुस्तक लिखी गई उनमें विदेशियों को महत्व और प्राधान्य मिलना स्वाभाविक ही था। भारत के पुत्रों के पुरुषार्थ एवं प्रतिभा के चित्रण इनमें नहीं के बराबर ही स्थान पाते रहे। लेखकों के मतों में भारत केवल एक भौगोलिक इकाई मात्र था, फिर भारत को मातृभूमि मानकर उसके पुत्र होने में गर्व का अनुभव करने वालों का उल्लेख कहां से होता? इसलिए महाराणा प्रताप सिंह तथा छत्रपति शिवाजी जैसे राष्ट्रीय महावीरों को अकबर एवं औरंगजेब के विरुद्ध बगावत करने वाले पुरुषों के रूप में अत्यंत ही गौण स्थान देकर वर्णन किया गया। राष्ट्र के चिरंतन स्फूर्ति-स्रोत बने हुए महापुरुषों की इस प्रकार उपेक्षा होती रहेगी तो गत हजार वर्षों की विदेशी दासता के फलस्वरूप भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में जो जटिल समस्याएं खड़ी हुई हैं, उनका निराकरण कर, समर्थ एवं समृद्ध राष्ट्र के रूप में भारत को खड़ा करना, कठिन ही नहीं, अपितु असम्भव भी हो जायगा।

### भारतीकरण की प्रक्रिया

भारतीय इतिहास के तथ्यपूर्ण पुनर्लेखन का एक और महत्व का उपयोग है। इस इतिहास के अध्ययन से कई ऐतिहासिक घटनाओं की सकारण मीमांसा की जा सकती है और इसके प्रकाश में वर्तमानकालीन व्यवहार की दिशा निश्चित हो सकती है। 'ग्रीक, शक, हूणों को पहले हमने आत्मसात् किया, आज हम मुसलमानों को आत्मसात् क्यों नहीं करते हैं?' ऐसा प्रश्न आज जाने-माने नेता भी पूछते हैं। इस पर इतिहास की साक्ष्य यदि ली जायगी तो इतिहास हमें कहेगा कि विदेशियों के सामने घुटने टेककर उनको हजम नहीं किया जा सकता। अभारतीयों का भारतीयकरण जिस प्रक्रिया से हुआ, उसमें चार अवस्थाएं देखी जा सकती हैं। पहली अवस्था विदेशी आक्रमण की। देश की विशालता, आवागमन के साधनों की कठिनाइयों एवं भारत की एकता राजनीतिक न होकर सांस्कृतिक होने के कारण विदेशियों का तुरन्त प्रतिकार नहीं होता और फलतः भारत के कुछ भागों पर उन विदेशियों का शासन स्थापित हो जाता है। दूसरी अवस्था में भारत की संतान जागृत एवं संगठित होकर विदेशी शासन का पराभव कर देती है। उसके बाद तीसरी अवस्था प्रारंभ हो जाती है, जब विदेशी समाज शांतिपूर्वक जीवन बिताने को बाध्य हो जाता है। भारतीय प्रजा उनको भारत छोड़ने को नहीं कहती। वे अपनी-अपनी सामाजिक रूढ़ियों का पालन करते हैं, उसमें भारतीय प्रजा कोई बाधा नहीं पहुँचाती। इस प्रकार जब दो-चार अथवा अधिक पीढ़ियाँ बीत जाती हैं, तब धीरे-धीरे विदेशी समाज भारत के साथ एक रूप हो जाता है। यह चौथी अवस्था है। प्रायः इसी क्रम से ग्रीक, शक, हूणादि विदेशी समाज भारतीय बन सके हैं। इस बात का यदि ठीक ज्ञान रहता तो पिछले चालीस-पचास वर्षों का इतिहास कुछ और ही प्रकार का घटित होता और अखंड भारत के स्थान पर खंडित भारत का निर्माण न हुआ होता।

### आत्म-गौरव का संस्कार

भारत की नयी पीढ़ी के चरित्र-निर्माण कार्य को सम्पन्न करने के लिए भी भारत के इतिहास का राष्ट्रीय दृष्टि से पुनर्लेखन होना अतीव आवश्यक है। अंग्रेजों के आने के पहले भारत में लाखों मठ-मंदिरों में रामायण, महाभारत एवं पुराणों का परिचय आबाल-वृद्ध स्त्री-पुरुषों को प्रवचनादि के द्वारा कराया जाता था। इसलिए वे व्यक्तिगत रूप में चरित्रवान एवं धर्मभावना-युक्त बन जाते थे। उनमें राजनैतिक स्तर पर संगठित भाव



RajGuru Math, Shivala Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भले ही न हो, किन्तु उनमें अधिकांश लोग भारत भक्त बन जाते थे। आज की नई पीढ़ी उस पवित्र संस्कार से वंचित रह जाती है। मठ-मंदिरों में वह कार्य उस मात्रा में नहीं होता और 'इंडिया इस ए नेशन इन द मेकिंग' (भारत एक निर्माणाधीन राष्ट्र है) के झूठे सिद्धान्त के पीछे लगने के कारण देश का वातावरण ऐसा बन गया कि बूढ़े-अनपढ़ लोगों को छोड़कर मंदिरों में कोई जाता ही नहीं। नयी पीढ़ी को देशभक्ति एवं चरित्र निर्माण के संस्कार इतिहास के सम्यक् अध्ययन के द्वारा प्राप्त हो सकते हैं। इस दृष्टि से मार्गदर्शक सिद्ध होने वाले श्रेष्ठ पुरुषों की खानें हमारे यहाँ भरी पड़ी हैं, किन्तु उनके ओर पीठ फेरने वालों क लिए भला वे क्या कर सकते हैं?

## पश्चिम की चकाचौंध

हमारी गई पीढ़ी पश्चिम की ओर देखती है। कारण, अमेरिका रूस आदि की प्रशंसा-गाथा बार-बार उनके कानों पर आती रहती है और उसका अत्यंत अनिष्ट परिणाम उन पर होता है। पश्चिम के देश अपने उत्कर्ष के शिखर पर होने के कारण और हम भारतीय किसी जबरदस्त बीमारी से जैसे-तैसे बाहर निकले हुए रोगी के समान होने के कारण, उनके साथ अपनी तुलना करने में हमारे विद्यार्थियों के मन पर पश्चिम की चमक-दमक का प्रभाव पड़ जाता है और अपरिपक्व बुद्धि के कारण वे इस निष्कर्ष पर पहुँच जाते हैं कि भारत में जन्म ग्रहण करना अपना परम दुर्भाग्य है। उनके शिक्षक और पालक भी उनका मार्गदर्शन नहीं कर सकते, क्योंकि भारतीय इतिहास के तथ्य एवं उसके सत्य स्वरूप का ज्ञान उनको भी अप्राप्त सा ही रहता है। इस प्रकार की मनोदशा का परिणाम, इस संकल्प में हो रहा है कि यदि किसी पाश्चिमात्य देश में जाकर बसना सम्भव हो तो वहां ही जाकर रहेंगे। इस प्रकार गत बीस-पच्चीस वर्षों में विदेश में जाकर बसने वाले बुद्धिमान, कर्तृ-सम्पन्न भारतीयों की संख्या हजारों, लाखों में गिनी जा सकती है।

## लेखकों की आत्मविश्वासहीनता

भारत के इतिहास का पुनर्लेखन करने का प्रयास कुछ भारतीय लेखकों ने छुट-पुट रूप में अवश्य किया है। परन्तु वे भी इस मनोवृत्ति से ग्रस्त है कि भारतीय ग्रंथों में उल्लिखित किसी घटना को तब तक प्रमाणित नहीं माना जा सकता, जब तक उसे किसी विदेशी लेखक का समर्थन प्राप्त न हो। कुछ लोग इससे भी आगे बढ़कर 'भूत में से वर्तमान एवं उसी के आधार पर भविष्य का निर्माण' इस सिद्धान्त को भुलाकर, भूतकालीन इतिहास के रूप को तोड़-मरोड़ कर वर्तमान की भूमिका के अनुरूप रंग में रखने का दुस्साहस करते दिखाई देते हैं।

## भविष्य के निर्माण का आधार

यद्यपि भारतीय इतिहास का राष्ट्रीय दृष्टि से पुनर्लेखन का काम सरल नहीं और छोटा भी नहीं, परन्तु भूतकालीन इतिहास के समुचित ज्ञान के आधार के बिना भविष्य के निर्माण की दृष्टि और प्रेरणा राष्ट्रीय समाज के घटकों को कदापि प्राप्त नहीं हो सकती और इसी कारण संसार की राष्ट्रमालिका में भारत को उचित स्थान नहीं मिल सकता। संसार के विभिन्न राष्ट्रों के सामने भारत की प्रतिमा ठीक प्रकार से उजागर करना जहां हमारे आज के प्रयत्न-पुरुषार्थ पर निर्भर है, वहीं उसकी पार्श्वभूमि के रूप में उनको हमारे भूतकाल का सम्यक् दर्शन कराना भी हमारा आवश्यक कर्तव्य है। इस ओर यदि ध्यान नहीं दिया तो स्वामी विवेकानन्द, योगी अरविंद, लोकमान्य तिलक, महात्मा गांधी, रवीन्द्रनाथ ठाकुर आदि महापुरुषों ने समस्त संसार में भारत के प्रति जो आदर एवं श्रद्धा के भाव जगाए थे, वे विफल हो जायेंगे और ऐसा कहना पड़ेगा कि भारत के भाग्योदय का दिन अभी बहुत दूर है। □

---

आकाशे तारकं लिंग पाताले हाटकेश्वरम्।
मृत्युलोके महाकालं लिंग त्रय नमोस्तुते।।



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

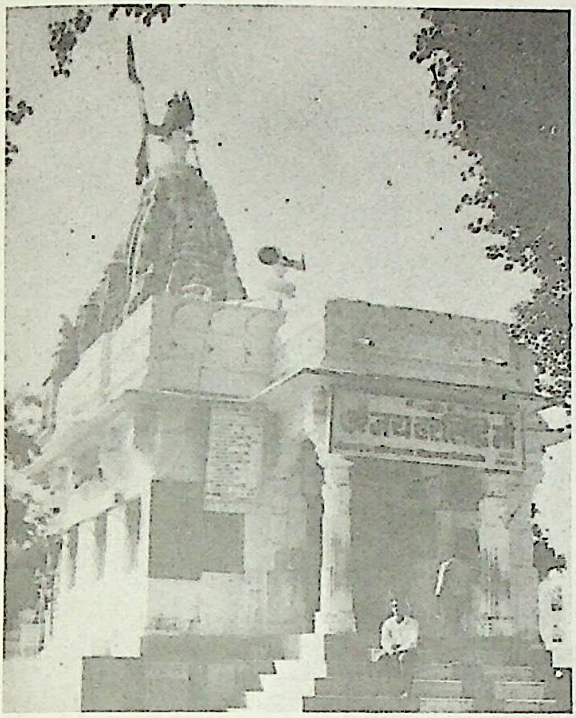

हरसिद्धि मंदिर, उज्जैन

# जयनगरी उज्जयिनी

☐ डॉ. हेमचन्द्र राय चौधुरी

जयनगरी[१] उज्जयिनी भारतीय इतिहास को गौरवमय बनाने वाले प्रभावशाली राजनीतिक एवं सांस्कृतिक केन्द्रों में से है। बनारस तथा मथुरा के समान शाश्वत नगरी होने का सम्मान इसे प्राप्त है और टाइबर नदी के तट पर स्थित प्रसिद्ध सप्त गिरीन्द्रों के नगर रोम से तथा सारोन की खाड़ी के समीपस्थ नील-लोहित-पुष्प-किरीट-शोभित नगर (City of the violet crown i.e., Athens) से उसकी तुलना की जा सकती है। प्रद्योत एवं वासवदत्ता, अशोक तथा मुंज, नवसाहसांक और भोज, सवाई जयसिंह तथा महादजी शिन्दे की स्मृतियों के प्रभा-मण्डल से उज्जयिनी दीप्तिमती है। सर्वाधिक यह उस विक्रमादित्य की राजधानी थी जिसे परम्परा उस संवत् से सम्बद्ध करती है। इसी में उन सभाओं का आयोजन हुआ था जिनमें कालिदास और अमर, भारवि एवं पद्मगुप्त ने कीर्ति प्राप्त की थी। भारतीयज्योतिर्विदों की प्रथम मध्याह्न रेखा (meridian) का यह स्थान थी। उज्जयिनी की अनेक प्रकारों वाली संभ्रमकारी नामावली इस प्रकार है—अवन्तिका, पद्मावती, भोगवती, हिरण्यवती, कनकशृंग, कुशस्थली, कुमुद्वती तथा प्रतिकल्पा[२]। इस सूची में ल्यूअर्ड (Luard) द्वारा उल्लिखित नवतेरीनगर तथा शिवपुरी नाम और जुड़ जाते हैं। उज्जयिनी के ९ कोस चौड़ाई तथा १३ कोस लम्बाई

[१] उज्जिवतो दानवो यस्मात् त्रैलोक्ये स्थापितं यशः। तस्मात् सर्वैः सुरश्रेष्ठैर्ऋषिभिस्सनकादिभिः।।
कृतं नाम ह्ययवन्त्या वा उज्जयिनी पापनाशिनी। अवन्ती च पुरा प्रोक्ता सर्वकामवरप्रदा।।
स्कन्द, आवन्त्य, ४३।५३-५४ तथा मिलाइए Badauni (Low) Vol. II, P. 43 n.

[२] मेघदूत, १।३१; कथासरित्सागर, २ पृ. २७५ (Tawney का अनुवाद), स्कन्दपुराण, आवन्त्यखण्ड, प्रथम भाग, अध्याय ४०-४८, P.H.A.I., चौथा संस्करण, पृष्ठ ४६८।



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

के विस्तार से नवतेरीनगर नाम की उत्पत्ति मानी गई है[३]।

विक्रमादित्य की यह राजधानी सदा से भारत की सात पवित्र नगरियों में गिनी जाती है[४]--

अयोध्या मथुरा माया काशी काञ्ची अवन्तिका।
पुरी द्वारावती चैव सप्तैता मोक्षदायिकाः।।

इसकी पावनता को स्कन्दपुराण के आवन्त्यखण्ड में इस प्रकार स्वीकृत किया गया है[५] :—

तस्माद्धिकरं क्षेत्रं कुरूणां वै सुरोत्तमाः।
तस्माद्दशगुणं मन्ये प्रयागंतीर्थमुत्तमम्।।
तस्ताद्दशगुणा काशी काश्या दशगुणा गया।
ततो दशगुणा प्रोक्ता कुशस्थली च पुण्यदा।।

नगर के बाह्य प्रदेश में यहाँ महाकाल (शिव) और उनकी चिरसंगिनी मंगलचण्डी (दुर्गा का रूप विशेष) का प्रसिद्ध मन्दिर वर्तमान था। ये मंगलचण्डी शाक्तसंगमतंत्र में इस प्रकार उल्लिखित अवन्तिदेश की कालिका ही होंगी :—

उज्जयिन्यां कुर्परश्च मांगल्यः कपिलांवरः।
भैरवः सिद्धिदः साक्षाद्देवी मंगलचंडिका।।
अवन्तीसंज्ञको देशः कालिका तत्र तिष्ठति।।
शक्तिसंगमतंत्र।।६।।

उज्जयिनी चम्बल की सहायक नदी शिप्रा के पूर्वी तट पर (अक्षांश २३.११ अंश उत्तर, देशांतर ७५.५० अंश पूर्व) समुद्रतल से १६९८ फुट की ऊँचाई पर स्थित है। पुरातन नगरी वर्तमान उज्जैन से दो मील उत्तर की ओर थी। इसके सम्बन्ध में यह कहा जाता है कि इसे "भूकम्प अथवा शिप्रा की असाधारण बाढ़ ने नष्ट कर दिया था। प्राचीन नगरी की भूमि पर प्राचीन नीवें आज भी दिखाई देती हैं और यहाँ पुरातत्त्व की असंख्य वस्तुएँ, रत्न, अक्ष, मुद्रा, आभूषण तथा सिक्के" प्राप्त हुए हैं। वर्तमान नगर आयताकार है और कभी गोल शिखरों वाले प्रस्तर प्राकार से परिवेष्टित था; जिसका मालवा के सुल्तानों के द्वारा ईसवीं १५वीं शताब्दी में निर्मित होना बताया जाता है। किन्तु मालकम के समय में ही इस प्राचीर के अनेक भाग ध्वस्त हो रहे थे। १८१० ई. में राजधानी का स्थान-परिवर्तन ग्वालियर के समीप लश्कर को हो जाने के साथ ही प्रसिद्ध शिन्दे राजवंश की राजधानी होने का इसका महत्त्व समाप्त हो गया। यह नगर अनेक विभागों में विभक्त है और ऐसे प्रत्येक विभाग का नाम उसके संस्थापक के अथवा उसमें निवास करने वाले नागरिकों की श्रेणी के नाम पर हैं। सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण भाग हैं जयसिंहपुरा—जयपुर के महाराज सवाई जयसिंह द्वारा संस्थापित—जो १७३३-१७४३ तक मालवा सूबा के शासक थे; शिया मुसलमानों के एक विभाग बोहराओं के नाम पर बोहराबाखल तथा कोट या किला जो सम्भवतः संस्कृत साहित्य में प्रसिद्ध महाकालवन के स्थल का संकेत करता है। जयसिंहपुरा में वैज्ञानिक अध्ययन में तीव्र रुचि वाले जयपुर के सवाई महाराज द्वारा निर्मित सुविश्रुत वेधशाला है[६]।

उज्जयिनी भारतवर्ष के प्राचीनतम नगरों में से है। यद्यपि यह कहना कठिन है कि मंत्रदृष्टा ऋषियों के काल में इसके प्राकार तथा कंगूरे वर्तमान थे, तथापि यह असंदिग्ध सत्य है कि महाभारतकार महाकाल के प्रागंण से तथा कोटितीर्थ (निश्चित रूप से उज्जयिनी का[७]) से, जिसका उल्लेख वे नर्मदा, दक्षिणसिन्धु, चर्मण्वती तथा पश्चिमी भारत के अन्य तीर्थस्थलों के सम्बन्ध में करते हैं, परिचित थे।

महाकालं ततो गच्छेत् नियतो नियताशनः।
कोटितीर्थमुपस्पृश्य हयमेधफलं लभेत्।[८]

इसी तारतम्य में यह भी कहा जा सकता है कि कालिदास, बाण, अलबेरूनी तथा सोमदेव के ग्रंथों में

[३] Luard, Gwalior State Gazetteer, I., पृष्ठ-२९९।
[४] C.H.I., पृष्ठ-५३१ टिप्पणी; Memoirs of Jahangir (Rogers) I., पृष्ठ-३५४।
[५] प्रथम भाग, Chap. XLII, २३-२४।
[५] तुलना कीजिए शब्द-कल्पद्रुम (पीठ के अन्तर्गत), भारतचंद्र; अन्नदामंगल (ग्रंथावली), पृष्ठ ९२; Ind. Culture Vol. VIII, P. 39. ३९
[६] Luard, Gwalior State Gazetteer Vol. I., P. 299f. २९९
[७] स्कन्दपुराण, आवंत्य खण्ड, प्रथम भाग, अध्याय ७१, ९।
[८] महाभारत ३, ८२, ४९।



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उज्जयिनी के महाकाल के महत्त्वपूर्ण उल्लेख प्राप्त होते हैं।[९]

रामायण अवन्ति से परिचित है, जो उज्जयिनी के समीप के प्रदेश का नाम ही नहीं है, वरन् स्वयं नगरी के नाम के रूप में उल्लिखित है।[१०]

उज्जयिनी (प्राकृत—उज्जेनी) नाम के अन्य प्राचीन उल्लेखों के लिए पुरातन पालि सूत्रों की ओर अग्रसर होना होगा, जिनमें उज्जयिनी के महाकच्चान के जन्मस्थान के रूप में तथा बुद्ध एवं महावीर के समकालीन चण्डपज्जोत (चण्डप्रद्योत) की राजधानी के रूप में उल्लेख है। गोदावरी के तट से गंगा की घाटी को जाने वाले मार्ग पर यह प्रधान स्थल था।[११] प्रद्योत, उसकी सुता वासवदत्ता तथा वासवदत्ता के पति वत्सराज उदयन से सम्बन्धित कथाएँ भास, कालिदास, श्रीहर्ष एवं सोमदेव के पीछे के काल में भी सुविस्तृत प्रदेश में लोकप्रिय थीं। भारतीय कविकुलगुरु ने उज्जयिनी के समीपवर्ती ग्रामों के वृद्धजनों का 'उदयन कथा में सुप्रवीण' के रूप में विशेष रूप से उल्लेख किया है। प्रद्योत के पुत्र पालक का मृच्छकटिक एवं जैन अनुश्रुति में वर्णन प्राप्त होता है। ईसवी पूर्व चतुर्थ तथा तृतीय शताब्दी में अवन्ति के स्वतंत्र राज्य का अस्तित्व समाप्त हो गया था। अशोक के शासन लेख में मौर्य सम्राट् के प्रतिनिधि-राजकुमार के स्थान के रूप में उज्जयिनी का उल्लेख प्राप्त होता है और इस तथ्य का साक्ष्य बौद्ध साहित्य में भी प्राप्त होता है। जैन ग्रन्थकर्ता अशोक पौत्र सम्प्रति की राजधानी के रूप में इस नगर का नाम लेते हैं। यह नाम पीछे से उजेनिहार प्रदेश को प्राप्त हुआ।[१२] ईसवी सन् की प्रारम्भिक शताब्दियों में उज्जयिनी पश्चिमी भारत के शक शासकों तथा दक्षिण के सातवाहन सम्राटों के बीच युद्ध का कारण प्रतीत होती है। कुछ विद्वान् शकनिषूदन एवं वर वारनविक्रम चारुविक्रम उपाधिधारी एक सातवाहन विजेता को ईसवी पूर्व ५८-५७ में संवत् प्रवर्तन करने वाले शकारि विक्रमादित्य से अभिन्न मानने की सीमा तक चले जाते हैं। किन्तु अनुश्रुति के अनुसार उज्जैन के महान् विक्रम से सातवाहन अथवा शालिवाहन, जिसकी राजधानी प्रतिष्ठान थी, स्पष्ट रूप से भिन्न था। पेरिप्लस ऑफ दि एरीथ्यिन सी (Periplus of the Erythrean Sea) का अज्ञातनाम लेखक जो ईसवी प्रथम शताब्दी का एक यूनानी नाविक था, उज्जयिनी का उल्लेख 'ओजेनी' (Ozene) के रूप में करता है और उसे भूतपूर्व राजधानी कहता है। इसी स्थान से देश की समृद्धि के लिए आवश्यक तथा व्यापार की वस्तुएँ जैसे संगेशाह एवं संगसुलेमानी, भारतीय मलमल आदि वस्त्र, प्रचुर मात्रा में साधारण वस्त्र बरिगज (Barygaza भृगुकच्छ, भरोच) को आता है। इसी क्षेत्र तथा उत्तरप्रदेश में होकर पोक्लेस (Poclais, वर्तमान पश्चिमोत्तर सीमाप्रान्त का चरसद्द) में होकर आने वाली जटामांसी प्राप्त होती है।

टालेमी (Ptolemy) के काल में (ईसवी दूसरी शताब्दी) प्रसिद्ध रुद्रदामन के पितामह चष्टन के अधीन, जिसे उसने टियस्टनीज लिखा है, 'ओजेनी' ने राजधानीत्व का महत्त्व पुनः प्राप्त किया। इन शासकों से अपनी वंशानुक्रम मानने वाले राजाओं की परम्परा को गुप्तवंश के सुविश्रुत चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य ने (जिसे कृतज्ञ सन्तति ने शक-नृपति-निषूदन एवं उज्जयिनीपुरवराधीश्वर के रूप में उद्घोषित किया) अन्तिम रूप से समाप्त कर दिया था।

वह महान् कवि, जिसे परम्परा विक्रम के सूर्य विक्रमादित्य के चतुर्दिक स्थित दीप्यमान नक्षत्रमाला में सर्वाधिक जाज्वल्यमान नक्षत्र के रूप में स्मरण करती है, अपने अमर मेघदूत-काव्य में मेघदूत से उसकी प्रिय नगरी (उज्जयिनी) का दर्शन करने के लिए अपने मार्ग से किंचित् मुड़ने की प्रार्थना करता है।

महाराज हर्ष की राजसभा को सुशोभित करने

---

[९] मेघदूत, १।३४-३७; रघुवंश, ६।३४; कादम्बरी (Ridding) पृष्ठ २१०, Alberuni's India (Sachau), I, 202. कथासरित्सागर, पेञ्जर का संस्करण, भाग १०, पृष्ठ २१८।

[१०] किष्किंधाकाण्ड, ४२, १४; स्कन्दपुराण, आवन्त्यखण्ड ४३।५४। C.H.I. 1.531 n (अवन्तिका) आवन्तक रूप के लिए बृहत्संहिता १४।१२।

[११] Malalsekera, Dictionary of Pali Proper Names, Vol. I, 344.

[१२] Luder's List, No. 268.



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वाला एक अन्य महान् कवि 'कादम्बरी' में उज्जयिनी के सम्बन्ध में कहता है—"त्रिभुवन का उज्ज्वलतम रत्न, सतुयुग की जन्मभूमि, महाकाल द्वारा सृजित, गम्भीर परिखा से आवेष्टित, रक्षा-प्राकार से घिरी हुई दीर्घ पण्यवीथियों से सुशोभित एवं शिप्रा सरिता से परिवेष्टित" चित्रित प्रकोष्ठ, उज्ज्वल मन्दिर, भ्रमरावलि से श्यामवर्ण हुई कुंजें तथा गजदन्त के अट्ट "मालव-ललनाओं के यौवन-माधुर्य-मत्त मुखमण्डलों" के समान ही नगर को सुशोभित करते थे। एक समकालीन चीनी यात्री ने नगर को वु-शे-येन-ना लिखा है और उसकी परिधि ३० ली (५ मील) बतालाई है। "उसके निवासी समृद्ध एवं सम्पन्न थे। उसमे कुछ दशक बौद्धमठ थे और उतनी ही संख्या देव-मन्दिरों की थी।" लगभग चार शताब्दी पश्चात् 'नवसाहसांकचरित' का लेखक इस नगर की तुलना देवताओं की राजधानी अमरावती से करता है और इसका सम्बन्ध श्रीविक्रमादित्य से बतलाता है।

अस्ति क्षितावुज्जयिनीति नाम्ना,
पुरी विहायस्यमरावतीव।
बबंध यस्यां पदमिन्द्रकल्पः,
श्रीविक्रमादित्य इति क्षितीशः।।

चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य के पश्चात् इस नगर को जो राजनीतिक परिवर्तन देखने पड़े, उनका वर्णन यहाँ केवल संक्षिप्त रूप में ही हो सकता है। पंचम शताब्दी ने चन्द्रगुप्त के पौत्र एवं महेन्द्रादित्य के पुत्र स्कन्दगुप्त विक्रमादित्य तथा म्लेच्छों—संभवतः हूणों—में चलने वाला युद्ध देखा, जिसका उल्लेख जूनागढ़ के अभिलेख तथा कथासरित्सागर में है। इसके पश्चात् हमें मन्दसौर के यशोधर्मन की तथा सम्राट्-प्रतिनिधि नैगम वंशी विजयों की सूचना प्राप्त होती है। ईसवी छठी शताब्दी के अन्तिम भाग में उज्जयिनी, आभोणा एवं सरसवणी के ताम्रपत्र-अभिलेखों के कटच्चुरियों के शासन में चली गई, जिनका उन्मूलन मैत्रक राजा खरग्रह प्रथम ने किया था।[13] हुएनत्संग के काल में वु-शे-येन-ना में एक ब्राह्मणवंश राज्य करता था। इसके पश्चात् 'त्वष्ट्र' वंश के शासक हुए।[14] उनका अन्त सम्भवतः सिन्ध के शासक जुनैद (Junaid) के नेतृत्व में आक्रमण करने वाली एक अरब सेना ने किया था, जिसने ईसवी आठवीं शताब्दी के प्रथम तथा द्वितीय दशकों में उजेन (Uzain) तथा पश्चिमी भारत के अन्य नगरों पर आक्रमण किये थे। तदनन्तर विक्रमादित्य की यह राजधानी 'मानकीर' (Mankir) अथवा मान्यरखेट के राष्ट्रकूट 'बल्हराओं' (Balharas) एवं जुर्ज (Zurz, गुजरात तथा कन्नौज) के प्रतिहार राजाओं के महासम्मर्द का विषय बन गई। अनुश्रुति के अनुसार राष्ट्रकूट राजवंश के दन्तिदुर्ग ने उज्जयिनी में हिरण्यगर्भ उत्सव किया, जिसमें गुर्जर आदि नरेशों को द्वारपाल बनाया गया था। ईसवी सन् ७८३-८४ में अवन्ति के सिंहासन पर प्रतिहार सम्राट् वत्सराज ने अथवा उनके समकालीन किसी अन्य वत्सराज ने, जो दन्तिदुर्ग के चचेरे भाई ध्रुव का प्रतिस्पर्धी था, अधिकार कर लिया। वत्सराज के साम्राज्य-स्व[...] राष्ट्रकूट शासक ने ध्वस्त कर दिए। किन्तु उसका पु[...] नागभट द्वितीय मालव पर, जिसके पश्चिमी भाग में उज्जयिनी सम्मिलित थी, आधिपत्य स्थापित करने में सफल हुआ। दक्षिण से शीघ्र ही उस पर एक नवीन आक्रमण हुआ और उसके नवनिर्मित साम्राज्य पर इससे तीव्र आघात पहुँचा। नागभट के पौत्र भोज आदिवराह पर सौभाग्य-लक्ष्मी अनुरक्त हुई और उसने प्रतिहार साम्राज्य की सीमा गिरनार पर्वतमाला तक पहुँचा दी। ऐसा प्रतीत होता है कि उज्जयिनी उसके उत्तराधिकारियों के आधिपत्य में ९४६ ईसवी तक रही जब उस प्रसिद्ध नगर में भोज के पपौत्र महेन्द्रपाल द्वितीय के 'तंत्रपाल महासामन्त महादण्डनायक' माधव के नियुक्त रहने की सूचना प्राप्त होती है।

प्रतिहारों का स्थान शीघ्र ही परमारों ने ले लिया जो अकालवर्ष को, जिसे कृष्ण तृतीय मानने का लो[...] उत्पन्न होता है, अपना पूर्व पुरुष मानते थे। इस सम्बन्ध

[13] P.H.A.I., चतुर्थ संस्करण, पृष्ठ ५३५।

[14] Tod. Rajasthan, I, 618-19 (Calcutta Edition) Bhandarkar's List of Inscriptions No. 16



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

में हर्ष सीयक के हरसौलवाले ताम्रपत्र का उल्लेख किया जा सकता है, जिसमें एक कृष्णराज को परमारों का पूर्व पुरुष कहा गया है। इस वंश के प्रारंभिक शासक वाक्पति प्रथम का वर्णन "मालव-बालाओं के नयन सरोजों के लिए सूर्य" के रूप में किया गया है। वाक्पति द्वितीय ने, जो मुंज नाम से अधिक विख्यात है और जिसने सरस्वती को संरक्षण देने में विक्रमादित्य के अनुकरण का प्रयत्न किया, ऐसा प्रतीत होता है कि उज्जयिनी को राजधानीत्व का गौरव प्राप्त कराया। उसके भाई सिन्धुराज का विरुद 'नवसाहसांक', जिसका अर्थ नवीन विक्रमादित्य है, यह सूचित करता है कि उसने भी विक्रमादित्य की प्रज्वल परम्परा को पुनरुज्जीवित करने का प्रयत्न किया था। पद्मगुप्त तथा उदयपुर प्रशस्ति, गुप्तवंश के स्कन्द उनको विक्रमादित्य के समान उसे हूणों पर विजय प्राप्त करने का यश प्रदान करते हैं। सोड्ढल विक्रमादित्य के पश्चात् विद्या के अत्यन्त मुक्तहस्त संरक्षक भोजदेव के साथ विक्रमादित्य, श्री हर्ष (कन्नौज का हर्ष शीलादित्य अथवा परमार सीयक) तथा मुंज के नाम जोड़ता है।[१५]

बारहवीं शताब्दी में परमारों को उत्तर तथा पश्चिम के अपने समीपवर्ती शासकों से कठिन संग्राम लड़ने पड़े थे। अजमेर का चाहमान शासक अजयराज उज्जैन तक देश जीत लेने का दावा करता है। अनहिलवार के प्रसिद्ध राजा जयसिंह सिद्धराज ने नगर पर विजय प्राप्त करके 'अवन्तिनाथ' उपाधि धारण की। इसके पश्चात् बल्लाल नामक राजा हुआ जिसने अवन्ति, मालव एवं धार पर आधिपत्य स्थापित किया। उसका जयसिंह सिद्धराज के उत्तराधिकारी कुमारपाल के एक माण्डलिक ने वध कर दिया। इस पर शिप्रा के तटों पर चालुक्य शासन की पुनः स्थापना हुई। "महाकाल की नगरी" के परमारों के एक दानपत्र से ऐसा प्रतीत होता है कि भाग्यचक्र में पुनः एक परिवर्तन हुआ और भोज के वंशजों ने एक बार फिर उज्जयिनी को प्राप्त किया। यह घटना ईसवी सन् १२१३ से पूर्व कभी हुई होगी।

उज्जैन में परमारों के शासन पर दिल्ली के सुल्तानों ने अन्तक आघात किया। कुतबुद्दीन ऐबक, जब वह इतिहास प्रसिद्ध मुहम्मद गौरी का प्रतिनिधि ही था, उज्जैन के सीमान्त प्रदेशों तक विनाश करता चला गया था।[१६] चालीस वर्ष पश्चात् कुतबुद्दीन के जँवाई और इलबरी शासकों में सबसे बड़े सुल्तान इल्तुतमिश (१२११-१२३६ ईसवी) का उज्जैन नगरी पर निर्दय आक्रमण हुआ। नगर नष्ट-भ्रष्ट कर दिया गया और महाकाल का मन्दिर पूर्ण रूप से ध्वस्त किया गया था। सुलतान अपने साथ महाकाल की तथा पीतल की ढली हुई विक्रमादित्य आदि की मूर्तियाँ दिल्ली ले गया और उसने उन्हें जामा मसजिद के द्वार पर रखवा दिया। अलाउद्दीन खिलजी (१२९६-१३१६) के अधिकारी मलिक ऐन-उल-मुल्क ने उज्जैन तथा मालवा के अन्य प्रसिद्ध दुर्गों को बरबाद कर दिया।[१७] ऐसा प्रतीत होता है कि इसके थोड़े समय पश्चात् ही विक्रमादित्य एवं नवसाहसांक की राजधानी दिल्ली के सुल्तानों के अधिकार में अन्तिम रूप से चली गई।

पन्द्रहवीं शताब्दी में मालवा के मुसलमान प्रान्तपति दिलावरखाँ गौरी ने अपने आपको स्वतंत्र घोषित कर दिया। सुलतानों ने महमूद खिलजी प्रथम के अधीन सर्वाधिक शक्ति प्राप्त की और उसने गौरी शासकों का उन्मूलन कर दिया। उज्जयिनी का, जिसकी प्रतिस्पर्धा धारा से थी ही, इस समय तक महत्त्व समाप्त हो चुका था। मालवा में मुसलमान शासक का केन्द्र माण्डू—शादियाबाद में था लेकिन पुरानी राजधानी उज्जैन को, जिले का प्रधान कार्यालय होने से थोड़ी बहुत प्रतिष्ठा रह गई थी। उज्जैन के समीप कालियादेह पर सुल्तान नसीरुद्दीन खिलजी (१५००-१५१० ई.) ने बाग फीरोज में एक प्रासाद निर्मित कराया जिसकी जहाँगीर

१५ प्रियदर्शिका (नरीमॅन आदि द्वारा अनूदित) पृष्ठ XXXVII।
१६ तबकात-इ-नासिरी (Raverty) खण्ड १, पृष्ठ ५१७।
१७ Briggs, 1, 361.
१८ तबकात-इ-अकबरी (दे) खण्ड ३, पृष्ठ ५६९; Memoirs of Jahangir (Rogers), खण्ड १, पृष्ठ ३५४।
१९ तबकात-ए-अकबरी (दे), खण्ड ३, पृष्ठ ३५६ तथा ६१५-१६।
२० अकबरनामा (Beveridge), खण्ड १, पृष्ठ ३०१।
२१ वही, पृष्ठ ३१८।



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ने भी प्रशंसा की है।[१८] अन्तिम खिलजी सुलतान के शासनकाल में उज्जैन पर राजपूत अधिकारी सिलाहदी पूरबीय ने, जिसने दरबार में महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त कर लिया था, अधिकार कर लिया। गुजरात के सुलतान बहादुर ने जिसने १५३१ ई. में मालवा हस्तगत कर लिया था, इस राजपूत अधिकारी का उज्जैन पर स्वत्व स्वीकृत किया। इसने अपने आपको विपरीत सिद्ध किया और उज्जैन का अधिकार दर्याखां मन्दोवाली को प्राप्त हुआ।

मुगल सम्राटों के अभ्युदय की कहानी में उज्जयिनी का प्रमुख स्थान है। सुलतान बहादुर के विरुद्ध हुमायूं ने अभियान किया और ऐसा प्रतीत होता है कि उसने अपना केन्द्रीय कार्यालय इसी प्रसिद्ध नगर में स्थापित किया था।[२०] उसने उस गुजरात के शासक को परास्त किया था और उसके पश्चात् उत्पन्न होने वाली अव्यवस्था में मालवा के खिलजी सुल्तान के अधिकारी मल्लूखाँ ने उज्जैन नगर को घेर लिया तथा उसमें आश्रय लेने वाले मुगलों के अधिकारियों को आत्मसमर्पण के लिए बाध्य किया।[२१] वह किसी प्रकार साम्राज्य-समर्थकों द्वारा भगा दिया। हुमायूं के आगरा लौट जाने पर मल्लूखाँ ने कादिरशाह उपाधि धारण करके अपने आपको सुल्तान घोषित कर दिया। ऐसा प्रतीत होता है कि उज्जैन को उसने अपनी राजधानी बनाया। मालवा-विजय के समय शेरशाह ने अपनी उपस्थिति से इस नगर को सुशोभित किया और इसे शुजाअतखाँ को प्रदान किया किन्तु इस्लामशाह ने उसका स्थान कुछ समय के लिए ईसाखाँ सूर को दिया। शुजाअतखाँ ने शासनाधिकार पुनः प्राप्त होने पर नगर की शासन व्यवस्था के लिए अपने दत्तक पुत्र दौलतखाँ अजियाला को नियुक्त किया। शुजाअतखाँ के दूसरे पुत्र मियाँ बायाजीद ने, बाजबहादुर उपाधि के साथ सिंहासन पर बैठा था और अपने समय के उच्चकोटि के गायक के रूप में तथा सुन्दरी रूपमती का प्रेमी होने के लिए प्रसिद्ध था, दौलतखाँ का वध करके नगर पर अधिकार किया।[२२] जब अकबर के अधिकारियों ने पुनः मालवा पर विजय प्राप्त की, उज्जैन पीरमुहम्मद को प्रदान की गई।[२३] मालवा के सूबे में इसी नाम की सरकार का यह केन्द्रीय नगर बना दिया गया। हॉकिन्स (Hawkins) (१६०८-१३ ई.) लिखता—"उजम" (Ugam) मालवा का प्रधान नगर था और सर टॉमस रो (Thomas Roe) इस मत का समर्थन करता है। डीलेट (Delact, १६३१ ई.) तथा मंडेल्स्लो (Mandelslo, १६३८ ईसवी) मालवा की राजधानी का नाम रन्तिपुर लिखते हैं। एक प्राचीन मानचित्र में इसकी स्थिति उज्जैन के उत्तर में दिखाई गई है, किन्तु कुछ विद्वान् इसे जयपुर राज्यान्तर्गत रणथंभोर मानते हैं।[२४]

सत्रहवीं शताब्दी के योरोपीय यात्रियों के वर्णन सूचित करते हैं कि उस काल में भी दक्षिण से गंगा के दोआब को जाने वाले मार्ग पर एक महत्त्वपूर्ण केन्द्र के रूप में उज्जैन की स्थिति अक्षुण्ण थी। राल्फ फिट्श (Ralf Fitch) लिखता है कि नगर में कपास, सूती वस्त्र का व्यापार समृद्ध था और वहाँ औषधियों का प्रचुर संग्रह था।[२५] आइन-ए-अकबरी के अनुसार उज्जैन की सरकार की राजस्व की आय ४३,८२७,९६० दाम थी। मनुक्सी, जिसने राजकीय कागद-पत्र देखे थे, लिखता है कि 'उजेन' (Ugen) का प्रदेश केन्द्रीय राजकोष को दो कॅरोल (Carols) देता था।[२६]

उज्जैन के समीप ही धरमत है जो उस नाटक के प्रथम दृश्य का प्रक्षेक था जिसका अन्त आलमगीर (१६५८-१७०७ ई.) द्वारा सिंहासन प्राप्त कर लेने पर हुआ था।

मालवा के मुगल प्रान्तपतियों में प्रसिद्ध राजपूत राजा सवाई जयसिंह था, जिसका संस्कृति के केन्द्र के

[२२] मल्लूखाँ, शुजाअतखाँ तथा बाजबहादुर के लिए देखिए तबकात-इ-अकबरी (दे) खण्ड ३, पृष्ठ ६१७-६२९।

[२३] अकबरनामा (Beveridge), खण्ड २, पृष्ठ २१४।

[२४] Early Travels in India (Foster), पृष्ठ १००; De Lact, Empire of the Great Mogols (Hoyland and Banerjee) पृष्ठ ९; Luard, Gwalior Gaz. पृष्ठ ३०५।

[२५] Foster, Early Travels, पृष्ठ १७, Luard, Gwalior Gaz. खण्ड १, पृष्ठ ३०४।

[२६] आइन-इ-अकबरी खण्ड २, पृष्ठ १९८, Catrou's edition of Manucci (बंगवासी), पृष्ठ ३५८।



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

रूप में उज्जैन की कीर्ति के प्रति किया गया सत्प्रयास निरूपण की अपेक्षा नहीं करता।

अठारहवीं शताब्दी के लगभग मध्य में एक नवीन दृश्य का प्रादुर्भाव हुआ। पेशवा बाजीराव प्रथम (१७२०-१७४० ई.) की सेनाएँ मालवा में पहुँची। सन् १७२६ ई. में उन्होंने अपने प्रतिनिधि राणोजी शिन्दे तथा मल्हारराव होल्कर को उस प्रान्त की चौथ तथा सरदेशमुखी ग्रहण करने का अधिकार दिया। आलीजाह शिन्दे राजवंश के संस्थापक राणोजी (१७२६-४५ ई.) ने महाकाल तथा विक्रम की प्राचीन नगरी में अपना केन्द्रीय कार्यालय स्थापित किया। उसके वंश के राजा अहमदशाह अब्दाली से भारतवर्ष की रक्षा करने के लिए वीरता से लड़े। इस राजवंश के महत्तम शासक महादजी शिन्दे (१७६१-९४ ई.) उच्च श्रेणी के राजनीतिक वैचक्षण्य-युक्त एवं श्रेष्ठ सामरिक प्रतिभा से सम्पन्न व्यक्ति थे। उनके अधीन अन्तिम बार उज्जैन एक विस्तृत राज्य की राजधानी बनी। महादजी के उत्तराधिकारी दौलतराव द्वारा राजधानी का स्थानान्तर लश्कर को होने के साथ ही "राजाओं की राज्यपीठ" की पदावनति प्रान्तीय नगर के रूप में हो गई। किन्तु यह आवश्यक नहीं है कि हम सुबन्धु के "सा रसवत्ता विहता" क्रन्दन की पुनरावृत्ति करें। उज्जयिनी के गर्भ में आज भी एक महान् भविष्य प्रसवोन्मुख है।

---

**राष्ट्रीय कवि कालिदास :**

कवि तो बहुत होते हैं, पर ऐसे कवि कम ही होते हैं जिन्हें राष्ट्र की समग्र सांस्कृतिक चेतना को अभिव्यक्ति देने की कला पर अधिकार होता है। कालिदास ऐसी ही राष्ट्रीय सांस्कृतिक चेतना को मूर्ति देने वाले महान कवि हैं। भारतवर्ष के ऋषियों, संतों, कलाकारों, राजपुरुषों और विचारकों ने जो कुछ उत्तम और महान दिया है, उसके सहस्त्रों वर्ष के इतिहास का जो सौंदर्य है उसने मनुष्य को पशु सुलभ धरातल से उठाकर देवत्व में प्रतिष्ठित करने की जितनी विधियों का संधान किया है उन सब को ललित-मोहन और सशक्त वाणी देने का काम कालिदास ने किया है। भारतवर्ष बहुत विशाल देश है—स्थान में भी और काल में भी। यह विशाल भूखण्ड भौगोलिक दृष्टि से सब प्रकार से एक अविभाज्य इकाई है। उत्तर में पर्वतराज हिमालय दोनों भुजाओं से पूर्व और पश्चिम समुद्र को छूता हुआ इस प्रकार छाया हुआ है मानो पृथ्वी का मानदण्ड हो। कालिदास ने कहा है—

'अस्त्युत्तरस्यां दिशि देवात्मा हिमालयो नाग नगाधिराजः।
पूर्वापरौ तोयनिधीवगाह्य स्थितः पृथिव्या इव मानदण्डः।।

हिमालय के प्रदेशों को कालिदास ने देवभूमि कहा है—पितुः प्रदेशास्तव देवभूमयः और हिमालय पर्वत को देवात्मा। भारत भूमि का वर्णन करते हुए उन्होंने कहा—आसमुद्र क्षितीशानाम्—समुद्र तक फैली हुई पृथ्वी के शासक। सो देवात्मा नगाधिराज हिमालय द्वारा विभाजित समुद्र-मेखला भारतभूमि ही वह महान राष्ट्र है जो कालिदास की वाणी में अपने सम्पूर्ण आध्यात्मिक और आधिभौतिक वैभव के साथ प्रकट हुआ है।------- वे सम्पूर्ण राष्ट्रीय चेतना को ललित रूप देने में कृतकार्य हुए। उनकी वाणी में भारतवर्ष का महान् उदात्त और शोभन रूप मुखरित हुआ है। उन्होंने भारतवर्ष की अन्तरात्मा को वाणी दी है। उस वाणी में इस देश की अपूर्व मनीषा और महान जीवन आदर्शों को रूप मिला है। वे सही अर्थों में हमारे राष्ट्रीय कवि हैं।

संकलित



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

# उज्जैन के अतीत पर विहंगम दृष्टि

☐ डॉ. वी.श्री. वाकणकर

उज्जयिनी का नाम प्रतिकल्पा है। इसका अतीत गहन है। उत्खननों से इसके पूर्वेतिहास का केवल एक धुंधला-सा चित्र स्पष्ट होता है। वास्तव में यहां ताम्राश्मीय अवशेष मिलना चाहिये थे पर आज तक वे मिल नहीं पाये हैं। संभव है मौर्य पूर्व प्रलयंकारी बाढ़ों ने जिनमें दंगवाड़ा कायथा, गंगधार (गर्गरा तटपुर) नष्ट हुए इसकी प्राचीन बस्तियां भी नष्ट हो गईं। फिर इसका पुरातात्विक सर्वेक्षण कुछ नये तथ्य प्रस्तुत करता है।

**उज्जयिनी का प्रागेतिहास :** उज्जयिनी के पूर्व में देवास मार्ग पर ६ कि.मी. पर एक टेकरी है इस पर कुछ वर्षों पूर्व मुझे गोलाश्म उपकरण मिले हैं जिनका अनुमानित काल ५ लाख वर्ष से पूर्व का है, ऐसे उपकरण मालवा में भीमबेटका, भोपाल, राऊ तथा इन्दौर के बीच की पहाड़ियां तथा आगर, आमला, नलखेड़ा आदि स्थानों पर मिले हैं। आद्यमानव के अस्तित्त्व का आभास इनसे होता है। अश्यूलीय शैली के अश्मकुदाल एवं अश्मकुठार भी इस क्षेत्र में मिले हैं ऐसे उपकरण क्षिप्रा के निम्नतर बालुका संचयों से मिले हैं इनका काल १ लाख वर्ष से ५ लाख वर्ष के बीच का है। पूर्ववर्ती अस्ट्रालोपिथेकस मानव के स्थान पर अब यूरोपीय निअण्डर्थल मानव के समान मानव मालवा में सर्वत्र विचरण करता रहा है। अभी तक पृथ्वी की जलवायु पर्याप्त उष्ण और नम थी इसके परिणाम स्वरूप यहां की ज्वालामुखी तप्त रस से बनी चट्टानें जो संभवतः २० करोड़ वर्ष पूर्व ही बन चुकी थीं, सड़ती रहीं और उनमें स्थित लौह तथा अल्युमिनिया के रासायनिक परिवर्तन से नीमच, आगर, महू, भोपाल, गुना आदि में मिलने वाली लौह मृत्तिका तैयार होती रहीं। प्रातिनूतन काल, जो अनुमानतः ३० से ७० लाख वर्ष के पूर्व प्रारंभ हुआ होगा, इसी जलवायु से प्रभावित रहा। वर्ष भर में १५० इंच से अधिक वर्षा तथा तापमान ११० से सतत ऊपर रहा होगा। करीब इन्हीं दिनों हिमालय में हिम तथा अंतरहिम या हिमोत्तर युग की श्रृंखला प्रारंभ हुई। हिमयुग में भारतीय प्रायद्वीप भयानक ठंड तथा शुष्क जलवायु रहती थी तथा हिमोत्तर युग प्रलयंकारी। इसके परिणाम स्वरूप प्रथम व द्वितीय प्रलयंकर युग में लोहमृत्तिका का स्थानान्तरित संचय प्रारंभ हुआ जो भीमबेटका ।।। ए-२८/२९/३० तथा आगर विदिशा, विलखिरिया, भोपाल आदि स्थानों पर आज भी विद्यमान है। इन्हीं में अश्यूलीय शैली के उपकरण मिलते हैं। इन्हीं युगों में सर्वत्र नदी घाटियों में निम्नतर स्तरों में भी ये उपकरण मिलते हैं, उज्जयिनी के क्षिप्रा तटों पर भी मिले हैं। इसके पश्चात् मध्यपूर्वाश्मीय तथा उत्तर पूर्वाश्मीय काल के अश्मोपकरण उज्जयिनी के चारों ओर फैली पहाड़ियों पर यथा धर्मवलडा, सोढंग, माधवपुरा, नवलखा, बिजासनी, हासामपुरा आदि। इन दिनों नदी ने जो रेतीले स्तर जमाये हैं उनमें हाथी की पृष्ठ हड्डी या स्केप्युला मिला है ऐसे ही परवर्ती रेतीले स्तर से ऊँट के पैर की अश्मीभूत हड्डी मिली है जो उतरपुराश्मीय काल की है। उतरपुराश्मीय (अपर



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पॅलिओलिथिक) काल में संपूर्ण भारत भयानक खुश्की की चपेट में आ गया था तथा उज्जयिनी व आसमंत मालवा पठार पर शतुरमुर्ग का संचार हो रहा था। इस प्राणी के अण्डे हमें रविशंकर नगर भोपाल तथा उज्जैन जिले में दंगवाड़ा के पास कपिलेश्वर में मिले हैं। इन्हीं दिनों आज के प्राज्ञ मानव (होमोसेपियन) का अवतार या विकास हुआ। यह धर्नुधारी था तथा शैलाश्रयी चित्रकला का आविष्कारक था। यह काल साधारणतया ३० हजार से १६ हजार वर्ष पूर्व तक विद्यमान रहा। पुनश्च नमी का प्रवेश हुआ और आज से १० से १२ हजार वर्ष पूर्व 'कुलावनी' या मानसून जलवायु का प्रारंभ हुआ।

**ताम्राश्मीय युग** : मालवा के क्षेत्र में आज से ४५०० वर्ष से पूर्व से, मांधाता के नेतृत्व में हैहयों ने प्रवेश किया। उन्हें यहां वन्य जातियों के कर्कोटक नागों (संभवतः कोरकू) से संघर्ष लेना पड़ा। यह संघर्ष संभवतः मध्याश्मीय वन्य जातियों व कृषिकार जातियों का था तथा कृषिकार अपने ताम्र-कांस्य उपकरणों के कारण यहां स्थायी निवास कर पाये। ये कृषिकार कायथा सभ्यता के उन्नायक थे। इनकी सभ्यता के अवशेष उज्जयिनी में नहीं पाये गये हैं जबकि उज्जयिनी के आसपास कायथा, दंगबाड़ा मसवाडया, आजाद नगर, इन्दौर, बांगड़, बिलावली, कपिलेश्वर, मसवाडया, मक्सी आदि स्थानों पर मिले हैं।

परवर्ती आहाड़ सभ्यता ४ हजार से ३८०० वर्ष पूर्व तथा मालव ताम्राश्मीय सभ्यता ३८०० से ३५०० वर्ष के मध्य मालवा में विद्यमान थी। उनके भी अवशेष यहां नहीं मिले हैं। ऐसा लगता है कि इन दिनों याने कायथा, आहाड़ व मालव ताम्राश्मीय सभ्यताओं के काल में माहिष्मती (महेश्वर) ही मालवा का प्रमुख केन्द्र रही है।

**पुराण काल** : महाभारत का प्रसंग हड़प्पीय सभ्यता के अंतिम काल में हुआ है और उसके पश्चात् जो सांस्कृतिक शैथिल्य आया है वह ताम्राश्मीय सभ्यताओं के पश्चात् के स्तरों में सर्वत्र दिखाई देता है माहिष्मती के राजा अवंतिअधिपति, विंद अनुविंद के महाभारत में मारे जाने पर यह स्थिति आई होगी। इस समय मौर्य पूर्व के काले लाल पात्रों का काल इस क्षेत्र में सर्वत्र दिखाई देता है। उज्जैन में सांदीपनी आश्रम क्षेत्र में धूसर तथा काले राजित पात्रों (एन.बी.पी.) के पूर्व की बस्तियां पाई गई हैं और यही महाभारत का काल माना जा सकेगा। उन दिनों उज्जयिनी महानगर नहीं था अपितु सांदीपनी आश्रम का सहयोगी महाग्राम रहा होगा। यह बस्ती आश्रम के आसपास तथा ऋणमुक्तेश्वर तक रही। विंद अनुविंद की मृत्यु के पश्चात् माहिष्मती का स्थान उज्जयिनी को मिला। यद्यपि यह ज्ञात नहीं है कि उनके पश्चात् किन राजाओं ने यहां राज्य किया पर यह संभव है कि नंदों के मगध मे उदय के साथ प्रद्योतपूर्वज मालवा में आये और अपने साथ चित्रित धूसर पात्रीय सभ्यता जो लोहप्रयोगी थी, यहां ले आये। यही काल था जब हड़प्पीय प्राकार (ईंटों के) के स्थान पर विशाल मृण्मय प्राकार सर्वत्र विसकित हुए। उज्जयिनी में भी उन दिनों ऐसे विशाल प्राकार गढ़ क्षेत्र में तथा आग्यापीर की तलाई से कालिया देह दरवाजे तथा वहां से अवंतिपुरा गोवर्धन ताल के उत्तरी किनारे होते हुए नगर कोट की रानी तथा मण्डी प्रांगण से कानीपुरा की ओर जाते थे। बीच में एक घुमाव था जो नगर कोट की रानी से मण्डी प्राङ्गण के पश्चिम से ऋषि तलाई तक था। इस मृण्मय प्राकार पर ईंटों की दीवार भी थी जो ईंट चुराई में नष्ट हो गई पर मंडी प्रांगण बनाते समय स्पष्टतया दिखाई दी थी। ऐसी प्राकार रचना विदिशा, कायथा, आजाद नगर, इन्दौर में देखी गई है। चण्ड प्रद्योत पालक आदि प्रद्योत के समय इस नगर का विकास हुआ था। गढ़ कालिका के मूल प्राकार में पूर्व से आने का एक मार्ग था। यह मार्ग विश्व का सबसे प्राचीन गिट्टी का बना मार्ग था इसे डॉ. बॅनर्जी ने १९५४-५६ के उत्खनन बीच खोजा था। संभवतः इसी मार्ग से प्रद्योत कन्या वासवदत्ता का हरण कर वत्सराज उदयन भागा था। प्रद्योत पूर्व काल में प्रचण्ड जल प्लावन के कारण उज्जैन नगर को क्षिप्रा ने पश्चिम की ओर काटना प्रारम्भ किया। उस समय नगर को बचाने



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

के लिये सीसम, काला अंजन तथा सागवान की विशाल लाटों का संरक्षण प्राकार खड़ा किया गया। यह प्राकार ऋणमुक्तेश्वर से ओखलेश्वर के निकट नदी घुमाव तक बनाया गया था तथा इसने नदी को ढाई हजार वर्ष तक आगे बढ़ने नहीं दिया। मत्स्येन्द्रनाथ के निकट १९३६ में इसकी खुदाई की गई और वे पाट आज विक्रम कीर्ति मंदिर में प्रदर्शित हैं। इन ४३ वर्षों में नदी ने पुराने टीलों को बीस फुट से अधिक काट दिया है। प्रद्योत के प्रासाद का पता नहीं चला किन्तु भर्तृहरि गुफा के पीछे ३६ इंच लंबी, ६ इंच मोटी तथा १८ इंच चौड़ी ईंटों का ३६ फुट लम्बाई-चौड़ाई का जो कुण्ड मिला है, वह संभवतः उसकी वाटिका की पुष्करणी हो। यहां मौर्य पूर्व मुद्रा भी मिली थी।

**मौर्य काल :** प्रद्योत के पश्चात् उसका छोटा लड़का पालक राज्य करने लगा पर उसके अत्याचारों से तंग आकर उज्जयिनी जनपद ने गोपाल को जो पालक का बड़ा भाई था तथा उसके द्वारा बंदी किया गया था, राज्यासीन किया। उसके पश्चात् विशाखयूप तथा बाद में आर्यक तथा नंदिवर्धन अवंतिवर्धन ने यहां राज्य किया। प्रद्योत से मगध का संघर्ष प्रारम्भ हुआ और उसका अन्त नंदिवर्धन की पराजय तथा प्रद्योत साम्राज्य की समाप्ति में हुआ। प्रद्योत का राज्य तक्षशिला तथा मगध के पश्चिम तक था वह पुराणों के अनुसार १३८ वर्षों में नष्ट हो गया। ३४ वर्षों के शैशुनाग आधिपत्य के पश्चात् ४० वर्ष नंदों का आधिपत्य यहां रहा पर उनके अस्तित्व के प्रमाण उज्जयिनी में अब नहीं मिलते। चन्द्रगुप्त मौर्य के अधीन अवंति प्रदेश रहा होगा। संभवतः पश्चिमी साम्राज्य के संरक्षणार्थ यहां प्रान्तीय राजधानी रखी गई थी। संभव है इसी समय यहां कानीपुरा (कन्हग्राम) का स्तूप बनाया गया। यह चारों ओर ईंटों का बनाया था तथा बीच में आसपास की गिट्टी भर दी गई थी। इस विशाल स्तूप के मलवे का ढेर आज ७० फीट ऊँचा है तथा वैश्या टेकरी के नाम से जाना जाता है। महावग्गानुसार यह अशोक पूर्व का है इसके निकट दो और किन्तु छोटे स्तूपों की टेकरियां हैं कतिपय इतिहासकारों ने इसे वैश्य पुत्री अशोकपत्नी देवी तथा छोटे स्तूपों को महेन्द्र संघमित्रा से जोड़ा है पर ग्रांथिक प्रमाण या पुरातत्वीय प्रमाण नहीं है। अशोक उज्जयिनी में महाकुमार के रूप में राज्य करता रहा। वह जब महाकुमार था तभी उसने बौद्ध धर्म अंगीकार कर लिया था। इसका प्रमाण अभी कुछ वर्ष पहले बुदनी तहसील में पानगुरिया या सारोमारी स्थान पर मिले अशोकीय अभिलेख से मिलता है। वह वहां धर्म यात्रा के लिये गया था इसका उसमें उल्लेख है। द्वितीय अभिलेख में धर्म संबंधी चर्चा है। अशोक के उज्जयिनी अस्तित्व के ये ठोस प्रमाण मिले हैं।

(१) सोढंग उज्जयिनी के उत्तर-पश्चिम में ६ कि.मी. पर एक ग्राम है। वहां संकिशा के समान हस्ति स्तंभ शीर्ष का टूटा हाथी उपलब्ध हुआ है जो ओपयुक्त है तथा चुनार के सिकताश्म का बना है।

(२) चुनार सिकताश्म की सिंहिनी का मुख बहादुरगंज से, जो योगेश्वर टेकरी के पूर्व में है, मिला है।

(३) चुनार सिकताश्म का व्यालुमुख गोमती कुण्ड स्थान से मिला है।

(४) सांदीपनी आश्रम स्थित शिव मंदिर का खड़ा नंदी मौर्य कालीन प्रतीत होता है।

(५) दो अन्य ऐसे खड़े नंदी ओखलेश्वर से प्राप्त हुए हैं।

मौर्य स्तंभों का पता नहीं लग पाया किन्तु स्तंभ शीर्ष परंपरा बराबर चलती रही और संभवतः मौर्योत्तर काल में शुंग, रट्ठी व आद्य मालवों तथा सातवाहनों ने इस परंपरा को जीवित रखा।

(१) भूरे सिकताश्म का एक धर्मचक्र का खण्डित भाग गढ़कालिका के पूर्व दिशा के खेत से मिला है।

(२) रज्जुलोलक युक्त स्तंभशीर्ष का निचला भाग प्रताप नगर (उर्दुपुरा) से नागमहाराज की गवाड़ी स्थान से मिला है।

(३) मेल या महलवाड़ा में, जो गढ़कालिका के टीले के दक्षिण-पूर्व में हैं, एक मिट्टी का छोटा-सा उर्ध्वकमलाधिष्ठित नंदी का स्तंभशीर्ष मिला है।

(४) वैसे ही उर्ध्वकमल तथा सिंहयुक्त मृत्तिका स्तंभशीर्ष प्रतापगढ़ से मिला है।

(५) मेहलवाड़ा के फलकू के कुआं क्षेत्र के खेत से



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हलके गुलाबी रंग के सिकताश्म का पॉलिश किया अष्टकोण युक्त स्तंभ प्राप्त हुआ है।

**शुंग आद्य मालव काल :** मौर्यों के पश्चात् यहां यद्यपि यह मान्यता है कि पुष्पमित्र ने राज्य किया किन्तु उसकी या अग्निमित्र की कोई मुद्राएं यहां नहीं मिली है किन्तु यहां मौर्यों के पश्चात् रट्ठी मदन, सवित्र, भूमिमित्र, दत्त तथा शातकर्णियों का आधिपत्य रहा है। रट्ठी मदन ने संभवतः एक पुष्कर तथा नहर बनाई थी। उसके सिक्कों पर यह दृश्य अंकित है तथा श्री नी.र. बैनर्जी को नहर के अवशेष भर्तृहरि की गुफा के उत्तर पूर्व में मिले थे। उज्जयिनी से प्राप्त मुद्राओं से प्रतीत होता है कि यहां मकरध्वज, मीनध्वज, चक्रध्वज, हस्तिध्वज, सिंहध्वज, नंदिध्वज, हलध्वज, मंदिरों के सन्मुख खड़े किये गये थे क्योंकि उपर्युक्त ध्वज उज्जयिनी चिह्न वाली मुद्राओं पर अंकित पाये गये हैं। शुंग काल के यक्ष की प्रतिमा बुधवारिया रामोला (रामद्वारा) से प्राप्त हुई है। एक सील स्तम्भ पर यक्ष यक्षिणी का उत्कीर्ण चित्र, मिट्टी का यक्षमुख, हारीति, बुद्ध तथा स्त्री युक्त पात्र, हत्ते मिले है। इस युग की वेदिका जो साँची-विदिशा परंपरा में है, मिट्टी के खिलौने के रूप में मिली है। चंपा पुष्प अलंकरण, कपिजातक का अंकन भी मिला है। पिङ्गलेश्वर की मूल प्रतिमा पंचमुख शिवलिंग भी शुंगकालीन है। इसका ऊपरी मुख टूट चुका है पर चार अभी भी शेष हैं। वेदिका का एक भाग हरिफाटक की हरिजन बस्ती के पास पड़ा है। योगेश्वर टेकरी जो नगर के मध्य है तथा क्षीर सागर उत्खनन के मलवे से बनी है मौर्यशुंग कालीन स्तूप का ही संभावित खण्डहर लगता है। यह संभव है कि अशोक सिंहनी त्रिसिंह युक्त स्तंभ शीर्ष के समान यहां भी युक्त स्तंभशीर्ष स्तूप के पूर्व खड़ा किया होगा। एकदली मुद्रा से उज्जयिनी में साँची के समान शुंगकालीन द्वार भी था ऐसा प्रतीत होता है। महाकाल मंदिर के कोट मोहल्ला क्षेत्र में तथा चौबीस खंभा के पूर्व केन्द्रीय पुरातत्व विभाग द्वारा श्री नी.र. बैनर्जी के मार्गदर्शन में खुदाई हुई थी तथा मैंने ही वह निखात निरीक्षक के नाते खोदा था। उससे यह प्रमाणित हुआ है कि निम्नतर स्तरों में घने जंगल (महाकाल वन) के प्रमाण काली स्याही मिट्टी के रूप में मिले हैं। इस मिट्टी से घर्षित चमकीले लाल काले पात्र मिले हैं जो मौर्य-शुंगकाल से संबंधित हैं। महाकाल मंदिर के अहाते में अभी जो खुदाई हुई थी उसमें शुंगकालीन ईंटों की दीवारें मिलीं थी तथा उनके नीचे भी वास्तु अवशेष देखे गये थे। इसका अर्थ है महाकाल मंदिर का अस्तित्व शुंगकाल से पूर्व का होगा। स्व. पं. सूर्यनारायणजी को महाकाल क्षेत्र से शुंग व गुप्तकालीन मृत्तिका चित्र भी मिले थे। इसी क्षेत्र में अनादि कलपेश्वर मंदिर की जलाधारी निश्चित ही कुषान-शक कालीन मकर मुखयुक्त है। उसका शिवलिंग भी ऊपर से कम चौड़ा तथा नीचे से अधिक चौड़ा है जो निश्चित ही शक, कुषाण, शुंग या उसके पूर्व की परंपरा है। ऐसा एक शिवलिंग मन्दसौर से १२ मील दूर अशोकीय लिपि में उत्कीर्ण, तापुसेन के, जो अपरक (आव्रा) का राजा था, स्तंभ लेख के पास मिला है। हो सकता है यह मंदिर रुद्रदामन या रुद्रसेन ने बनाया हो तथा तभी रुद्र सागर की निर्मित हुई हो।

**शक-सातवाहन काल :** उज्जयिनी में शकों का प्रथम आक्रमण महेन्द्र गर्दभिल्ल के समय कालकाचार्य प्रेरित था। महेन्द्र गर्दभिल्ल ने कालकाचार्य की बहन सरस्वती का हरण कर गांधर्व विवाह कर लिया था। उसके कारण कोप में आकर कालकाचार्य ने सिंध के शाहनुशाही शकों को निमंत्रित कर महेन्द्र को हराया था। वह संभवतः सातवाहनों के आश्रय में चला गया। यहाँ उज्जयिनी में शाहानुशाहियों का आधिपत्य अल्पकालिक था। समृद्ध जैन परम्परा, हाल की गाथा सप्तशती में उल्लेखित विक्रम ने, जिसका नाम 'कृत' था और जिसकी मृतिका-मुद्रा पर कतस उजेनीय लिखा मिला है तथा जिस पर मकारयुक्त स्वस्तिक अंकित है, इनके राज्य की समाप्ति की। इस बीच वाशिष्ठी पुत्र शातकर्णी व गौतमी पुत्र पुलुमायी' तथा यज्ञसेन शातकर्णियों का बीच-बीच में आधिपत्य रहा। ग्रीक राज्यों व व्यापारियों से उज्जयिनी का सम्बन्ध रहा होगा क्योंकि उज्जयिनी में मिट्टी की ग्रीक मुद्राएँ या 'बुले' पर्याप्त प्रमाण में मिली हैं। इनमें रस्सी में पिरोने का ऊपर अलंकरणयुक्त गोल



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

रहता था तथा नीचे गोल लोलक सदृश आकार पर अपोलो, डायना या कभी राजा-रानी, अन्नदेवता व कमल अंकित रहता था। अभी तक ऐसी दस मृणमुद्राएँ उपलब्ध हुई हैं। रोमन एम्फोरा (सुरापात्र) भी यहाँ बड़े प्रमाण में मिलते हैं।

शकों ने प्रथम शताब्दी के पश्चात् पुनः उज्जयिनी पर अपना आधिपत्य जमाया—उनकी अनेक चाँदी की तथा तांबे पर चाँदी के लेपन वाली मुद्राएँ उज्जैन से मिली हैं। अभी तक जो शक मुद्राएँ मानी जाती हैं यथा हमुगम बलाक, माहू, दास सौम, ये निश्चित उज्जयिनी से मिली हैं इसका प्रमाण नहीं है। आद्यमालवों की अनेक मुद्राएँ उज्जैन से मिलती हैं जिन पर मगज (संभवतः मालव गणस्य जयः का संक्षिप्त रूप) गज, मप आदि लिखा होता है और जो आद्यमालव वंश की हैं जिनमें कृत विक्रम प्रमुख था तथा आद्यशकों को हराकर जिसने कृत मालव या विक्रम संवत् का प्रवर्तन किया। इतिहास के पटल से उसे प्रेमियों ने हटा ही दिया था। आज वह पुनः अपनी कतसउजेनीय मुद्रा के कारण ऐतिहासिक प्रमाण के साथ प्रतिष्ठित है। प्रथम शताब्दी के आसपास की काँच की मुद्राएँ भी उज्जैन से मिली हैं जिनमें सूँड़ उठाया हुआ हाथी, ध्वज दण्ड, स्वस्तिक चिह्न अंकित हैं। ऐसी एक मुद्रा महेश्वर से प्राप्त हुई है तथा उज्जयिनी से दो मिली हैं। काँच उद्योग की प्रगतिशीलता का यह द्योतक है। काँच के ताटंक चक्र व चूड़ियाँ तो इस काल की मिलती ही हैं। इसके पश्चात् रुद्रदामन, जीवदामन, रुद्रसेन, रुद्रसिंहादि शक राजाओं का आधिपत्य दो शताब्दी तक मध्यांतरों से चलता रहा।

**मालव-औलिकर काल :** पुनश्च तीसरी-चौथी शताब्दी ईसवी में मालवगण ने अपना सिर उठाया तथा उज्जयिनी पुनश्च मालवगण राज्य के रूप मे प्रतिष्ठित हुई। विष्णु, रूदिल, रविल राम, अमात्य महानंद पुत्र—नंद आदि ने यहाँ अपना स्वतंत्र अस्तित्व बनाये रखा तथा गुप्तों की साम्राज्य शक्ति से संघर्षरत रहकर मालवा के अवंति क्षेत्र में गुप्तों का आधिपत्य जमने नहीं दिया। इसी कारण उज्जयिनी और उसके आसपास गुप्त शिल्पों, गुप्त लेखों व गुप्त मुद्राओं का अस्तित्व ही नहीं है। पश्चिमोत्तर मालवा में भी उनका वर्चस्व नगण्य था क्योंकि कुमारगुप्त के राज्य का उल्लेख मात्र बंधुवर्मन के लेख में है पर मालव संवत् का प्रयोग कर अपनी अस्मिता तो उसने बनाई ही है। मालव-औलिकर की शक्ति ही हूणों को पराजित कर सकी। मालव राजा रामगुप्त निश्चित ही उज्जयिनी-विदिशा का राजा था तथा वह गुप्त रामगुप्त से भिन्न था। अन्यथा उसकी मुद्राएँ अयोध्या, कौशाम्बी आदि स्थानों पर भी मिलतीं। इसका आधिपत्य एरण, विदिशा व उज्जयिनी पर रहा। इसने सिंह, गरुड़, शंख, चक्र, स्वस्तिकयुक्त मुद्राएँ प्रचलित कीं तथा एक मुद्रा धनुर्धारी भी है। यह संभवतः भागवतानुयायी तथा जैनाश्रयी था तथा इसके राज्य में विदिशा में जैन प्रतिमाएँ प्रतिष्ठित की गईं। मन्दसौर क्षेत्र में इन दिनों २०० से अधिक वर्ष तक औलीकरों का आधिपत्य रहा तथा उनमें से कुछ उज्जयिनी पर भी राज्य करते रहे। श्री रूणवाल को मिले मन्दसौर अभिलेख में तथा म.प्र. पुरातत्त्व विभाग व विक्रम विश्वविद्यालय द्वारा आयोजित मन्दसौर उत्खनन से कुछ नये राजाओं का बोध होता है। औलीकर वंश का प्रारंभ किसी सोम नामक आद्य पुरुष से हुआ तथा द्वितीय नाम वीरसोम, पुष्यसोम आदि हैं और फिर नगरी व दशपुर की अन्य शाखाएँ आती हैं। दशपुर शाखा में वर्मा, वर्धन तथा धर्म्मा नामान्त से नाम पाये जाते हैं जिनमें वर्मा नाम पूर्व के तथा

---

**कालिदास अद्वितीय-कवि :**

किसी पुराने कवि ने कालिदास का परिचय देते हुए कहा था कि जब मैं सच्चे कवियों की गिनती करने लगता हूँ तो कनीनिका (सबसे छोटी उँगली) पर पहला नाम कालिदास आता है, पर दूसरे नम्बर पर अनामिका नामक उँगली है जिस पर और कोई नाम सूझता ही नहीं है, क्योंकि आज तक उस टक्कर का कोई दूसरा कवि हुआ ही नहीं, यह देखकर लगता है कि इस उँगली का नाम जो 'अनामिका' अर्थात् बिना नाम की उँगली दिया गया है सो बिल्कुल ठीक ही है—

पुरा कवीनां गणनाप्रसङ्गे कनिष्ठिकाधिष्ठित कालिदासः।
अद्यापि तत्तुल्यकवेरभावा दनामिकासार्थकवती वभूव।।



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

धर्मा तथा वर्धन बाद के हैं। नये अभिलेख में भास्कर वर्मा तथा कुमार वर्मा तथा कृष्ण का उल्लेख है। सभी पराक्रमी थे तथा पुण्यप्राप्ति हेतु विजयोपरांत इन्होंने विशाल जलाशय बनाये। औलीकर उज्जयिनी में राज्य करते थे ऐसी मान्यता है। औलीकरों के सर्वांति पश्चात् का लेख भानपुरा के इन्द्रगढ़ हनुमान के स्थान पर मिला है। यहाँ भी भूमिदान का उल्लेख है। किन्तु औलीकर श्रेणी के सिवाय इस भग्न शिलालेख में और कुछ नहीं है। लिपि के आधार पर यह सातवीं शताब्दी का है। मन्दसौर के नये शिलालेख के अलावा उत्खनन से एक नया नाम मिला है। वहाँ एक भव्य प्रासाद के अवशेष मिले हैं जिसके सोपान मार्ग के पास के कक्ष से काँच पर अंकित दो अभिज्ञान मुद्राएँ मिली हैं जिन पर 'श्रीप्रकाश धर्म्म' अंकित है। यहाँ संभवतः यशोधर्म का एक सिक्का ढालने का ठप्पा मिला है जिस पर 'ईश्वर' नाम अंकित है। यह भी मन्दसौर के औलीकर वंश का ही कोई राजा होना चाहिये। भानपुरा के दो अभिलेखों से लगता है कि मालवा पर औलिकरों का आधिपत्य गुर्जर-प्रतिहारों के कारण समाप्त हुआ हो तथा उनका स्वामित्व भी बाद में राष्ट्रकूटों ने समाप्त कर दिया। उज्जयिनी के एक भग्न अभिलेख के जो संभवतः ६ठी-७वीं सदी ई. का है अपनी सेना के बल पर शत्रु विष्णुदेव को पराजित करने का उल्लेख मिलता है। पर कौन उसका कर्त्ता था यह अज्ञात है। महाकाल के मंदिर में औलीकर शैली के शिव की आदमकद मूर्ति थी तथा उसी समय की एक शिव प्रतिमा ओखलेश्वर घाट पर भी लगी है। वहीं एक शिव ताण्डव की प्रतिमा भी उसी शैली की मिली है।

**राष्ट्रकूट-प्रतिहार काल :** प्रतिहारकालीन विष्णु प्रतिमाएँ ओखलेश्वर, भैरवगढ़, महाकाल तथा रामघाट के पास मिली हैं। मालवा पर राष्ट्रकूट (मान्यखेट) णण्णप्प के आधिपत्य के पश्चात् (यानि ७६७ वि.सं.) प्रतिहारों का आधिपत्य रहा होगा। नागभट्टादि प्रतिहार यहाँ थे और इन्हें दंतिदुर्ग राष्ट्रकूट ने हिरण्यगर्भ यज्ञ में प्रतिहार के रूप में खड़ा किया था, ऐसी मान्यता है। अभी तक राष्ट्रकूटों का कोई अभिलेख उज्जयिनी में नहीं मिला है किन्तु महाकाल क्षेत्र में राष्ट्रकूट शैली की कुछ प्रतिमाएँ अवश्य मिली हैं जिनमें शिव-पार्वती लास्य-ताण्डव, शिव-पार्वती कल्याण सुन्दर प्रतिमाएँ, चामुण्डा प्रतिमा तथा रंगबावड़ी से महिषापुरमर्दिनी प्रतिमा मिली है।

**परमार काल :** राष्ट्रकूट खोटिग्गदेव को उसके पादानुध्यात (अंकित) सीयक-II ने हराकर परमारों का स्वतंत्र राज्य मालवा में प्रतिष्ठित किया तथा उन्हीं दिनों उसने अपनी राजधानी को गढ़ तथा आसपास के क्षेत्र से हटाकर महाकाल वन में बसाया। महाकाल के चारों ओर प्रारंभिक परमारकाल में ही विशाल परकोटा बनवाया तथा उसके उत्तर तथा पूर्व की ओर परमारों ने अपना नगर बसाया। महाकाल के प्राकारित भाग को आज भी कोट-मोहल्ला कहते हैं। इस कोट का उत्तरी द्वार चौबीस खम्बा है। प्रवेश द्वार के उत्तर मुख के दोनों ओर महालया व महापद्मा की प्रतिमाएँ थीं जो मुसलमानी आक्रमण के बाद छील दी गईं तथा पुनश्च मराठाकाल में मुखौटों के रूप में प्रतिष्ठित हुईं। परमारकालीन कोट का कुछ भाग महाकाल थाने के पीछे आज विद्यमान है। परमारकालीन उज्जयिनी के अतुलनीय शिल्प तथा वास्तु-वैभव की कल्पना करना आज असंभव-सा प्रतीत होता है क्योंकि आज का उज्जैन उसके पुराने मकान तथा मसजिदें पूर्वकालीन वास्तु अवशेषों से ही बनी हैं। इसके प्रमाण कोट मोहल्ला, नमक मंडी, कार्तिक चौक, ढाबा, सब्जी मंडी, निजातपुरा, नयापुरा, कालियादेह दरवाजा आदि में सर्वत्र देखने को मिलता है। मंदिर अवशेषों का प्रयोग जामा मसजिद, मोचियान मसजिद, श्री नाथजी के मंदिर के निकट की मसजिद, व्यायामशाला के निकट की मसजिद, सब्जी मंडी तथा दौलतगंज की मसजिदों में सर्वत्र प्राचीन मंदिर स्तंभ व अन्य वास्तु अवशेषों का प्रयोग हुआ है। मराठाकाल में मंदिरों की पुनर्निर्मिति में भी प्राचीन वास्तु अवशेषों व प्रतिमाओं का प्रयोग प्रायः सभी मंदिरों में हुआ है। परमारकाल में महाकाल मंदिर के सभागृह संस्कृत-प्राकृत अभिलेखों से मण्डित थे उनमें से कुछ तो स्वर्गीय पं. सूर्यनारायणजी



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

व्यास के अथक परिश्रम के कारण हमें उपलब्ध हो सके। इनमें परमारों के साकेत विजय तथा खजुराहो विजय का उल्लेख है। एक शिलालेख में हिमालय के मुर्धिशिखर से दक्षिण समुद्र तक तथा पूर्व से उत्तर समुद्र तक साम्राज्य विस्तार का उल्लेख है। रंग बावड़ी के शिलालेख से प्रतीत होता है कि यह अतिशयोक्ति नहीं होगी क्योंकि वेणु कवि द्वारा जिसे उज्जयिनी की ज्ञानभिज्ञ सभा में कवीन्द्र पदवी दी गई, अपने काव्य में परमार सेनापति के अपनी सेनाओं सहित दशाश्वमेध घाट काशी तथा प्रयाग के सरित्संगम पर स्नान का उल्लेख है। इसके ही प्रमाणक वे दो शिलालेख भी हैं जिनमें 'खजुरी विडवध के वंसे' को पराजित करने का तथा अपनी सेना को साकेत के उपवनों में विश्रांति दिलाने का उल्लेख है। यह शिलालेख भोज के समय का है क्योंकि सोमवर्मा के अनुज गोविन्द को 'निजांक मारोप्य स भोज भूपतिः' ऐसा उल्लेख है। शिलालेख के भग्न होने से पर्याप्त बातों का संबंध लगाना कठिन है। परमार काल की एक विक्रम प्रशस्ति भी गढ़कालिका से मिली है जिसमें विक्रमादित्य (यह प्रथम शताब्दी का विक्रमादित्य होना चाहिये) को इन्द्र, गोप्तोपिगोप्ता, क्षितावक्षत श्री विक्रमादित्य नाम, दयाद्रिरिव तथा कलपद्रुम कहा गया है। स्व. डॉ. ह.रा. दिवेकर को कौनशीतिकी उपनिषद् की दारिलस्वामी कृत टीका पर सोमेश्वर का भाष्य मिला है। तथा उसमें भोज के महमूद (सोमनाथ विध्वंसक महमूद गज़नवी) के आक्रमण के समय उसे अभिचार कर्म करने को कहा था। उज्जयिनी से मिले एक परमार नगरी शिलालेख मिला है जो इस बात की पुष्टि करता है। इस भग्न अभिलेख में "तुरुष्क विजय पर्वणि स्ना भोजदेव (कुशली)" ने दान दिया, ऐसा उल्लेख है।

**चौबीस खम्भा :** अभिलेख तथा बहादुरगंज से प्राप्त लेख से भी ज्ञात होता है कि अलतुतमिश के क्षणिक विध्वंसकारी आक्रमण के पश्चात् देवपाल देव ने उज्जयिनी तथा भेलसा (भलस्वामिपुर) पर अपना अधिकार कर लिया था। देवपालदेव के समय आशाधर तथा विल्हण विद्यमान थे। विंध्यवर्मा के समय विल्हण महामाण्डलिक था। उज्जैन जिले में करेडी नामक स्थान पर इसके एक लेख में इसने 'खण्डुदेव्यावतारितां' लिखा है। संभवतः यह खण्डोबा का उल्लेख है तथा सर्वाति प्राचीन उल्लेख है। संभव है यह दाक्षिणात्य होगा। आशाधर पुत्र केल्हण के दो अभिलेख मिले हैं—एक जावरा के पास इगुणिपद्र (रिगणोद) तथा दूसरा भोजपुर से। द्वितीय भोज के समय धार तथा माण्डव पर खुरासानियों का आधिपत्य हो गया था फिर भी उज्जयिनी में विज्जसिंह 'अरिशंकु' का आधिपत्य था तथा उसने 'खुरासानी खरों' को हराया था। अंतिम परमार राजा शिलादित्य पर माण्डू सुलतानों ने आक्रमण कर उसे जीवित पकड़ा तथा उज्जयिनी से हिन्दू आधिपत्य का अंत हो गया। रायसेन के किले में शीलादित्य व उसके भाई लक्ष्मणसेन के समय परमारों का अंतिम संघर्ष तथा राजपूत महिलाओं का अंतिम जौहर हुआ था। भोज द्वितीय के मंत्री गोगा ने योगेश्वर टेकरी के ऊपर एक शिवमंदिर बनाया था। उसके ही नाम से इस टेकरी को गोगाशाह की टेकरी कहा जाता है। इसने उज्जयिनी के संरक्षणार्थ आईने-उल-मुलतानी जो अलाउद्दीन का सेनापति था, से भीषण संघर्ष किया तथा संघर्ष में ही वह उज्जयिनी के लिये धराशायी हो गया।

**बादशाही काल :** परमारों के पश्चात् 'बुतपरस्तान उज्जैनी' का सौंदर्य, वैभव तथा श्री पूर्णतया विलीन हो गई। ई.स. १२३४ में अल्तुतमिश का उज्जयिनी पर आक्रमण हुआ और फिर मंदिरों के विनाश का सिलसिला प्रारम्भ हुआ। यह विनाश बाजबहादुर के समय समाप्त हुआ और मुगलों के आगमन से निर्मिति का नया अध्याय प्रारंभ हुआ। बादशाह जलालुद्दीन अकबर ने उज्जयिनी तथा मालवा से बाजबहादुर की सत्ता समाप्त कर उज्जैन में नगर संरक्षणार्थ ४ वर्ष में एक नगर प्राकार खड़ा करवाया। नदी दरवाजा, कालियादेह दरवाजा, सती दरवाजा, देवास दरवाजा, इन्दौर दरवाजा आदि उसी परकोटे के द्वार थे। सती दरवाजे के ऊपर १६वीं सदी के एक लेख में किसी शिवा नामक महिला के सती हो जाने का लेख मिला है। औरंगजेब के समय मिर्जा राजा जयसिंह मालवा के सूबा थे उन्हीं दिनों वेधशाला,



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

रामजनार्दन मंदिर, कालभैरव आदि मंदिरों का निर्माण किया गया। ये मराठा पूर्व स्थापत्य के उत्कृष्ट उदाहरण हैं। औरंगजेब ने कई मंदिरों को सनदें दी थीं जो आज भी अनेक पण्डितों के पास सुरक्षित है। दाराशिकोह को समाप्त कर औरंगजेब ने अपना अक्षुण्ण आधिपत्य जमाने पर भी दाराशिकोह के गुरु कवीन्द्राचार्य सरस्वती को सम्मान देता रहा तथा उसने मुसलमानों के नाम एक फरमान निकाला कि जिस ग्रन्थ पर कवीन्द्राचार्य सरस्वती के हस्ताक्षर हो, उन्हें अपमानित न किया जाये। कवीन्द्राचार्य सरस्वती के हस्ताक्षर युक्त अनेक ग्रन्थ सिन्धिया प्राच्य विद्या संस्थान के हस्तलिखित ग्रन्थालय में विद्यमान हैं।

**मराठा काल :** सत्रहवीं सदी के प्रारम्भ में मराठों ने मालवा पर आक्रमण प्रारम्भ किये तथा होलकर शिंदे (सिंधिया), पवारों के नेतृत्व में एक के बाद एक महल और कचहरियां उनके कब्जे में आ गईं। यहाँ तक कि महादजी शिंदे ने पानीपत के द्वितीय युद्ध के पश्चात् लाहौर तक धावे किये। राघोबा दादा की अटक तक राघोभरारी प्रसिद्ध ही है। महादजी शिंदे लाहौर से अपने साथ चाँदी का एक दरवाजा लाये थे जो उनके महाराजवाड़ा महल में कुछ समय लगा रहा। वायजा बाई शिंदे (दौलतराव शिंदे मोतीवाले की पत्नी) बड़ी कृष्ण भक्त थीं। उन्होंने गोपाल मन्दिर बनवाया तथा वे द्वार आज उस मंदिर में सुशोभित हैं। अहमदशाह इन द्वारों को गज़नी से लाहौर लाया था। सोमनाथ की लूट के साथ वे गज़नी गये थे। पांचों पत्थरों को मूल द्वार से निकालकर तत्कालीन सेरसेनिक शैली के द्वार बनाये गये और आज वे पुनः भारत में एक मंदिर को सुशोभित कर रहे हैं।

मराठों के काल में संपूर्ण मालवा में एक नवजागरण प्रारम्भ हुआ। उज्जयिनी के चौरासी महादेव महाकाल, गोपाल मंदिर आदि अनेक मंदिर इसी काल में निर्मित हुए। पूना के चित्रकारों का इस क्षेत्र में आगमन हुआ। कांगड़ा के चित्रकार इस क्षेत्र में आये थे। राजस्थान से जयपुर तथा नाथद्वारा की चितेरे, वृन्दावन, मथुरा के चितेरे और लखनऊ के चितेरे ग्वालियर, झाँसी, दतिया तथा बुरहानपुर तक पहुँचे। मालवा में मूल मालवा या अवंति शैली का प्रारंभ हुआ तथा इसके उदाहरण प्रतापगढ़, मन्दसौर, रामपुरा, भानपुरा, संधारा, पीपलरवां, देवास, इन्दौर, धार, अमझेरा तथा उज्जैन में देखने को मिलते हैं। यह वह तथाकथित मालव शैली नहीं है जिसका उल्लेख कतिपय कला समीक्षकों ने मालव शैली के नाम से किया है तथा जिसके अधिकांश चित्र मालवा की भूमि से उपलब्ध हुए ही नहीं हैं। कांगड़ा से आये चित्र शैली का प्रभाव राम जनार्दन मंदिर की एक छत पर तथा तिलकेश्वर मंदिर के चित्रों से स्पष्ट है। कोटा-बूंदी का प्रभाव मन्दसौर, रामपुरा मंदिर के भित्तिचित्रों तथा संधारा मंदिर चित्रों में स्पष्ट है। मन्दसौर के चित्रों की शैली का विकास होलकर तथा शिंदे वंशों के अधिकार समय में हुआ है। इसी शैली में बने चित्र प्रतापगढ़ में पाये जाते हैं। पर उज्जयिनी की अपनी शैली दो प्रवाहों में विभक्त थी। मराठा शैली के प्रभाव में बने चित्र राम जनार्दन, काल भैरव, अनादि कल्पेश्वर तथा तिलकेश्वर में पाये जाते हैं जबकि श्रीराम मंदिर, दिगम्बर अखाड़ा, सांदीपनी क्षेत्र के मंदिरों में, सेठ कालूराम की हवेली की दीवालों पर तथा अवंतिपुरा, मालीपुरा, प्रतापनगर, नयापुरादि की गृहभित्तियों पर मालवी शैली की प्रभाव परम्परा दिखाई देती है। मराठाकाल में काष्ठ-भवन कला का भी पर्याप्त विकास हुआ। महाराजवाड़ा में दूसरी मंजिल पर काष्ठ का उत्कृष्ट कार्य था जो नवीनीकरण में नष्ट कर दिया गया। ऐसा ही सुन्दर बाड़ा कार्तिक चौक में आपटे का बाड़ा नाम से विख्यात था। वहाँ अब धर्मशाला बन गई है और उसकी उत्कृष्ट काष्ठ कला कबाड़ियों के यहाँ बिकी। अब एकमात्र अमझेरा वाले का बाड़ा बचा है। म.प्र. में कई उत्कृष्ट काष्ठ भवन काल-कवलित हो रहे हैं। काष्ठ कला के उत्कृष्ट उदाहरण सब्जी मंडी, बोहरा बाखल तथा कार्तिक चौक, सिंहपुरी, पानदरीबा मे आज भी विद्यमान हैं। यूरोप में ऐसे प्राचीन मोहल्लों व स्थापत्यों को बनाये रखने के अथक प्रयत्न होते हैं और हमारी घोर उपेक्षा के कारण हम इन्हें खोते जा रहे हैं। □



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

# अवन्ती क्षेत्र के प्राचीन अभिलेख और इतिहास चयन

□ डॉ. हरिहर त्रिवेदी

अवन्ती क्षेत्र का महत्त्व धार्मिक ही नहीं अपितु ऐतिहासिक दृष्टि से भी समस्त भारतवर्ष में विख्यात है। प्राचीनकाल में मालव-प्रदेश दो भागों में विभक्त था; इसका पूर्वी भाग आकर के नाम से प्रसिद्ध था, जिसकी राजधानी विदिशा थी और पश्चिम-मालव अवन्ती कहलाता था, जिसका प्रमुख केन्द्र उज्जैन (उज्जयिनी) था। पश्चिमी क्षत्रप वंश के पराक्रमी नरेश रुद्रदामन् के गिरनार (सौराष्ट्र) में मिले शिलालेख में "पूर्वापरा-करावन्ती" यह प्रयोग आया है।

इस क्षेत्र की सीमा पश्चिम में चर्मण्वती (चम्बल), पूर्व में एरिकेण (एरण, सागर जिला), दक्षिण में विन्ध्याचल की श्रेणियां तथा उत्तर में पूर्व-वाहिनी चम्बल, इस प्रकार निर्धारित की गई हैं। जैसा कि इस दोहे से स्पष्ट है :

इत चम्बल उत बेतवा, मालव होय सुजान।
दक्षिण दिसि है नर्मदा, यह पूरी पहचान।।

स्थूल दृष्टि से मालवा का पठार और नर्मदा नदी के उत्तर का विस्तृत धरातल इस क्षेत्र के अन्तर्गत माना जाता है।

ईसा की तीसरी-चौथी शताब्दियों में इस क्षेत्र पर पश्चिमी शक-क्षत्रप वंश का आधिपत्य था। इस वंश की राजधानी उज्जयिनी थी। इस वंश के चार उपवंश हुए हैं, जो इतिहास में क्षहरात, कार्दमक, स्वामी जीवनदामन् और द्वितीय रुद्रदामन् द्वारा प्रवर्तित वंश—इन नामों से अभिहित किए जाते हैं। इस वंश का एक भी अभिलेख इस भूभाग में उपलब्ध नहीं हुआ, यद्यपि उज्जैन से लगभग ११५ किलोमीटर वायव्य में आवरा नामक प्राचीन स्थल (मंदसौर जिला) के उत्खनन में क्षत्रप कालीन मृद्भाण्ड प्राप्त हुए हैं, जो इस सारे क्षेत्र की महत्त्वपूर्ण उपलब्धि है (मध्यप्रदेश इतिहास परिषद् पत्रिका ४ पृ. ३१)

अनंतर काल में इस भूभाग पर पाटलिपुत्र के गुप्तवंश का प्रभुत्व स्थापित हुआ। वस्तुतः गुप्तों के अभ्युदय के पूर्व इस धरातल के इतिहास को आलोकित करने वाली समुचित सामग्री का अभाव ही है। क्षत्रप वंश का समुच्छेद गुप्त-वंश के नरेश चंद्रगुप्त द्वितीय ने किया था और उस वंश के समूल नष्ट करने के कारण ही उसे 'शंकारि' विरुद से अभिहित किया जाता है। इसी नरेश ने विक्रमादित्य की उपाधि भी धारण की थी। कथा-सरित्सागर और काव्य-मीमांसा (कथा-सरित्-सागर, ७,४-९ काव्य मीमांसा, पृ. ५५) में चन्द्रगुप्त को उज्जयिनी का राजा कहा गया है, इस आधार पर हम कह सकते हैं कि संभवतः पूर्वी मालवा की विजय कर लेने के पश्चात् उसने उज्जैन को अपनी पश्चिमी राजधानी बनाने का गौरव प्राप्त किया, यद्यपि उसकी अन्य राजधानियाँ पाटलिपुत्र और अयोध्या भी थीं।

चन्द्रगुप्त द्वितीय का आधिपत्य-क्षेत्र कहां तक विस्तृत था यह निश्चित रूप से अज्ञात है, फिर भी इतना अवश्य जाना गया है कि उज्जैन का उत्तर-पश्चिम भूभाग दशपुर तक उसकी सीमा में था। दशपुर के



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्राचीन स्थल पर एक शिलालेख उपलब्ध हुआ है, जिसमें जयवर्मन् के पौत्र और सिंहवर्मन् के पुत्र नरवर्मन् का नाम आया है। यह अभिलेख मालव संवत् ४६१ अर्थात् ४०४ ईसवी का है, जिसके अनुसार नरवर्मन चन्द्रगुप्त का समकालीन माना गया है। इस लेख में नरवर्मन् के लिए "सिंह विक्रान्त गामिन्" यह विशेषण प्रयुक्त है और इसके आधार पर अनुमान लगाया जाता है कि इसने चन्द्रगुप्त का आधिपत्य स्वीकार कर लिया था, जिसके सिक्कों से ज्ञात "सिंह विक्रम" विरुद भी है, यद्यपि यह मत अनिश्चित ही है। इस और इसी प्रकार के अन्य आधारों पर चन्द्रगुप्त द्वितीय को ही उज्जयिनी का विक्रमादित्य सिद्ध करने का प्रयत्न किया जाता है। यद्यपि यह मत विवादास्पद है।

इसी स्थल पर चन्द्रगुप्त द्वितीय के पुत्र कुमारगुप्त प्रथम के समय का एक शिलालेख उपलब्ध हुआ है। सुन्दर संस्कृत के विभिन्न ५४ श्लोकों में रची हुई यह एक प्रशस्ति है और इसका कवि वत्स भट्टि था, अतः यह उसके नाम से विख्यात है। पश्चिमोत्तर मालव की तत्कालीन राजनीतिक परिस्थिति के निरूपण की दृष्टि से यह प्रशस्ति महत्त्वपूर्ण है। उसमें उल्लिखित है: जब कुमारगुप्त पृथ्वी पर शासन कर रहा था, उसका एक राज्यपाल, विश्ववर्मन यहाँ अवस्थित था। व शुक्र और वृहस्पति के समान बुद्धिमान् और पृथ्वी के राजाओं का आभूषण तथा पार्थ (अर्जुन) के समान शक्तिशाली था। वह दीनानुकम्पी था; आर्त और दुखियों पर दया करता था; दयालु तथा मित्रों के लिए कल्पवृक्ष था। वहाँ बसने वालों को यह अभय देता था और भयभीतों का परित्राण करता था। विश्ववर्मन् का पुत्र बन्धुवर्मन् गंभीर, नीतिमान् तथा लोकप्रिय था।

लेख से यह आभास होता है कि बन्धुवर्मन् की स्थिति कुमारगुप्त के समान अथवा एक अधीन शासक के सदृश थी। आन्तरिक मामलों में वह पूर्णतः स्वतंत्र था।

इस लेख में आगे कहा गया है कि दशपुर-भू-भाग में व्याप्त शान्ति और समृद्धि से आकृष्ट होकर, लाटदेश (गुजरात) के तन्तुवायों (बुनकरों) की एक श्रेणी दशपुर में आई जिसे नृपति बन्धुवर्मन् का संरक्षण प्राप्त हुआ था। उस बुनकर श्रेणी ने निजी आय से दशपुर में एक भव्य एवं अद्भुत सूर्य मन्दिर का मालव संवत् ४९३ (ई. ४३६) में निर्माण किया और कालान्तर में इस मन्दिर का एक भाग ध्वस्त हो जाने पर उसी श्रेणी ने उसका जीर्णोद्धार भी मालव संवत् ५२९ (ई. ४७३) में किया।

उक्त अभिलेख ऐतिहासिक दृष्टि से ही नहीं, अपितु भाषा, साहित्य, रचना-सौष्ठव और उन्नत विचार-सरणि की दृष्टि से भी महत्त्वपूर्ण है। अतः उसमें आया हुआ केवल दशपुर वर्णन यहाँ मूल श्लोकों में देने की प्रवृत्ति का संवरण हम नहीं कर पाते। वे श्लोक इस प्रकार हैं:

ते देश-पार्थिव-गुणापटुताः प्रकाश—
मध्वादिजान्यविरलान्यसुखान्यपास्य
जातादरा दशपुरं प्रथमं मनोभि—
र्न्वागताः ससुखबन्धुजनास्समेत्य।।५।।

मत्तेभ-गण्ड-तट-विच्युत-दान-बिन्दु—
सिकोपलाचल सहस्र-विभुषणायाः।
पुष्पावनम्र-तरु-मण्ड-वतंसकाया
भूमैः परं तिलक-भूतमिदं क्रमेण।।६।।

तटोत्थ-वृक्ष-च्युत-नैक-पुष्प-विचित्र-तीरान्त-जलानि भान्ति।
प्रफुल्ल-पद्माभरणानि यत्र सरांसि कारण्डव-संकुलानि।।७।।
विलोल-वीची-चलितारविन्द-पतद्रजः पिंजरितंश्च हंसैः।
स्व-केसरोदार-भराभुग्कैः क्वचित्सरांस्यम्बुरुहैश्च भान्ति।।८।।

स्व-पुष्प-भारावनर्तनगेन्द्रर्मद-प्रगल्भालि-कुल-स्वनैश्च।
अजस्र गाभिश्च पुरांगनाभिर्वनानि यस्मिन् समलंकृतानि।।९।।

चलत्पकान्यबला-सनाथान्यत्यर्थशुक्लान्यधिकोन्नतानि।।
तडिल्लता-चित्र सिताभ्र-कूट-तुल्योपमानानि गृहाणि यत्र।।१०।।

कलास-तुंग-शिखर-प्रतिमानि चान्या—
न्याभान्ति दीर्घ-वलभीनि सवेदिकानि।
गान्धर्व-शब्द मुखराणि निविष्टचित्र।
कर्माणि लोल-कदली-वन-शोभितानि।।११।।
प्रासाद-मालाभिरलंकृतानि धरौ विदार्यैव समुत्थितानि।



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विमान-माला-सदृशानि यत्र गृहाणि पूर्णेन्दु-करामलानि।।१२।।

यद् भात्यभिरम्य-सरिद्-द्वयेन चपलोर्मिणा समुपगूढ़म्।
रहसि कुच-शालिनीभ्यां प्रीति-रतिर्भ्यास्मरांगमिव।।१३।।

सत्य-क्षमा-दम-शम-वृत्त-शौच-धैर्य—
स्वाध्याय-वृत्त-विनय-स्थिति-बुद्ध्युपेतैः।।
विद्या-तपो-निधिभिरस्मयितैश्च विप्रैर्—
यद्राजते ग्रहगणैः समिव प्रदीपैः।।१४।।

अथ समेत्य निरन्तर-सङ्ग-तैरहरहः प्रविजृम्भित-सांहृदाः।
नृपतिभिस्सुतवत् प्रतिभानिताः प्रमुदिता न्यवसन्त सुखं पुरे।।१५।।

श्रवणसुभगधानुर्वैधं दृढं परिनिष्ठिताः।
सुचरित-शतासङ्गाः केचिद्विचित्र-कथाविदः।
विनय-निभृतास्सम्यग्धर्म्म-प्रसंग-परायणाः
प्रियमपूरुषं पतथ्यं चान्ये क्षमा बहु भाषितुम्।।१६।।

केचित् स्व-कर्म्मण्यधिकास्तथान्यैर्विज्ञायते ज्योतिषमात्मवद्भिः।
अद्यापि चान्ये समर-प्रगल्भाः कुर्वन्त्यरीणामहितं प्रसह्य।।१७।।

प्राज्ञामनोज्ञ-वधवः प्रथितोरूर्वंशा
वंशानुरूप-चरिताभ्रणास्तथान्ये।
सत्यव्रताः प्रणयिनाभुपकार-दक्षा
विस्रम्भ-पूर्वमपरे दृढ़सौहृदाश्च।।१८।।

विजित-विनयह-सङ्गंर्धर्म्मशीलैस्तथान्यै—
मुदुभिरधिक-सत्वैर्लोक-यात्राभरैश्च—
स्व-कुल-तिलक-भूतैर्मुक्तरागैरूदारै—
रधिकमभिविभाति श्रेणिरेवं-प्रकारं।।१९।।

(यहाँ ये श्लोक उद्धृत करते समय शिला पर उत्कीर्ण अक्षरों की अशुद्धियों और तकनीकी बारीकियों पर ध्यान नहीं दिया गया है।)

**संक्षिप्त स्वतंत्रानुवाद :**

दशपुर-नरेश की ख्याति से आकृष्ट होकर लाट देश के बुनकरों की एक श्रेणी अपने स्वजनों के साथ इस नगर में आकर बस गई थी। यह नगर वस्तुतः मदमत्त गज-समूह से शोभित पर्वतमालाओं तथा पुष्पाच्छादित तरुमण्डपों से पृथ्वी के तिलक के समान है। इसमें कहीं विकच कमलों के पराग से कर्बुरित कारण्डवों से संकुल सरोवर हैं, कहीं पुष्पित तरुमालाओं के बीच सरिताएँ प्रवाहित होती हैं, और कहीं मदप्रगल्भ अलिगण के गुंजार और पुष्पभार से पहाड़ियाँ झुकी-सी दिखाई देती हैं। कहीं वनों में पुरांगनाएँ बिहार करती हैं। वातान्दोलित पताकाओं तथा आती-जाती रमणियों से सुशोभित जिसके उन्नत एवं सुधाधवलित घर बिजली की चमक से युक्त मेघ-समूह से नजर आते हैं। उनमें कहीं संगीत का आयोजन होता है, कहीं चित्रशाला है, और कहीं कदली-वृक्ष की झांकियाँ बनी हैं। अनेक कक्षों से अलंकृत, विमान माला के समान ऊँचे तथा चन्द्रकिरणों के सदृश अमल ये घर मानों भूतल को चीरकर ऊपर उठ आए हों। दो जलधाराओं से घिरे हुए इस नगर के निवासी शम, दम और पवित्रता से संयुक्त, विद्वान्, अध्ययनरत होकर अपने कर्म में प्रवृत्त रहते हैं। वे पराक्रमी भी हैं। उनका पारस्परिक सौहार्द्र दर्शनीय है। यहाँ का राजा उन्हें पुत्रवत् मानता है।

इस प्रशस्ति के एक श्लोक का तात्पर्य आज तक विद्वानों में विवादास्पद बना है—श्लोक यह है :

बहुना समतीतेन कालनान्यैश्च पार्थिवैः।
व्यशीर्यतैकदेशोस्य भवनस्य ततोधुना।।

स्वयशोवृद्धये सर्व्वमत्युदारमुदारया।
संस्कारित भिदेभूयः श्रेण्या भानुमतो गृहम्।।

बहुत समय व्यतीत हो जाने के पश्चात् समय और अन्य नरेशों के समय में (अथवा द्वारा) इस मन्दिर का एक भाग टूट जाने (अथवा तोड़ा जाने) के कारण मन्दिर का पुनर्निर्माण उसी श्रेणी ने किया।

प्रथम श्लोक में आए हुए "व्यशीर्यत" इस पद के अर्थ की संस्कृत व्याकरण की दृष्टि से बहुत खींचातानी हुई है। इसके दोनों अर्थ होते हैं—"टूट गया" और "तोड़ा गया"। "तोड़ा गया" इस अर्थ को अन्यैः पार्थिवैः" (दूसरे राजाओं द्वारा) के साथ लेकर कुछ विद्वान् इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि यहाँ हूणों का निर्देश है, जो मन्दिरों को ध्वस्त करने में प्रसिद्ध थे।



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

यह मत सर्वमान्य नहीं है। कुछ भी हो यह निर्विवाद है कि कुमारगुप्त के अन्तिम दिनों में (लगभग ४५६-५७ ईसवी) उत्तर से आए बर्बर हूणों ने मन्दसौर की पार्श्व-भूमि को आकम्पित कर दिया था, और कुमारगुप्त के पुत्र स्कन्दगुप्त ने उन पर पूर्ण विजय प्राप्त की थी। ईसा की पाँचवीं सदी के अन्तिम चरण और छठी सदी के प्रारम्भ में इस भू-भाग पर हूणों के निरन्तर उपद्रव होते रहे। विष्णुवर्धन यशोधर्मन् नामक नरेश ने उन्हें अन्तिम रूप से खदेड़ा जिसके दो प्रस्तराभिलेख मन्दसौर में उपलब्ध हुए हैं। मालव (विक्रम) संवत् ५८९ (५३२ ई.) में उत्कीर्ण एक लेख में यशोवर्मन् को "राजाधिराज परमेश्वर" इस उपाधि से अलंकृत किया है और इसमें उसके मंत्री धर्मदास के अनुज दक्ष द्वारा कूप-निर्माण का उल्लेख है। इस मंत्री का वंश भी अभिलेख में दिया है।

दूसरा लेख दो पाषाण-स्तम्भों पर गुप्तलिपि में उत्कीर्ण है, जिनमें एक-दूसरे की प्रतिकृति है। ये दोनों स्तम्भ मन्दसौर से लगभग सात किलोमीटर दूर सौंधनी नामक ग्राम के पास उपलब्ध हुए हैं। लेख में कुल नौ श्लोक हैं, जिनमें केवल अन्तिम अनुष्टुभ् और शेष आठ संस्कृत शिखरिणी वृत्त में हैं।

इस अभिलेख के मूल श्लोक यहाँ उद्धृत किए जाते हैं :

वेपन्ते यस्य भीम-स्तनित-भय-समुद्भ्रान्त-दैत्या दिगन्ताः
रटंगाघातैः सुमेरोव्विघटित-दृषदः कन्दरा यः करोति।
उक्षाणं तं दधानः क्षितिधर-तनया-दत्त-पञ्चाङ्गुलाङ्कं
द्राधिष्ठः शूलपाणेः क्षपयुत भवतां शत्रुतेजांसि केतुः।।१।।

आविर्भूतावलेपैरविनय-पटुभिर्ल्लङ्घि ताचार-मार्गैर्—
म्मोहादैदं-युगीनैरपशुभ-रतिभिः पीडयमाना नरेन्द्रैः।
यस्य क्षमा शार्ङ्गपाणेरिव कठिन-धनुर्ज्या-किणाङ्क-प्रकोष्ठं
बाहुं लोकोपकार-व्रत-सफलं-परिस्पन्द-धीरं प्रपन्ना।।२।।

निन्दयाचारेषु योऽस्मिन्विनयमुषि युगे कल्पना-मात्र-वृत्त्या
राजस्वन्येषु पांसुष्विव कुसुम-बलिर्नाविभासे प्रयुक्तः।
स श्रेयोधाम्नि समाडिति मनु-भरतालर्क-मान्धातृ-कल्पे
कल्याणे हेम्नि भास्यान्मणिरिव सुतरां राजते यत्र शब्दः।।३।।

ये भुक्ता गुप्त-नाथैर्न्न सकल-वसुधाक्क्रान्ति-दृष्ट-प्रतापैर्—
नाज्ञा हूणाधिप नां क्षितिपति-मुकुटाध्यासिनी यान्प्रविष्टा।
देशांस्तान्धन्व-शैल-द्रुम-गहन-सरिद्वीर-बाहूपगूढ़ान्
वीर्यावस्कन्न-राज्ञः स्व-गृह-परिसरावज्ञया यो भुनक्ति।।४।।

आलौहित्योपकण्ठात्तल-वन-गहनोपत्यकादा महेन्द्रा—
दा गङ्गाश्लिष्ट-सानोस्तुहिनशिखरिणः पश्चिमादा पयोधेः।
सामन्तैर्यस्य बाहु-द्रविण-हृत-मदैः पादयोरानमद्भिश्—
चूड़ा-रत्नांशु-राजि-व्यतिकर-शबला भूमि-भागाः क्रियन्ते।।५।।

स्थाणोरन्यत्र येन प्रणति-कृपणतां प्रापितं नोत्तमाङ्गं
यस्याश्लिष्टो भुजाभ्यां वहति हिमगिरिर्दुर्ग-शब्दाभिमानम्।
नीचैस्तेनापि यस्य प्रणति-भुज-बालावर्जित-क्लिष्ट-मूर्ध्ना
चूड़ापुष्पोहारैम्मिहिरकुल-नृपेणार्च्चितं पाद-युग्मम्।।६।।

गामेवोन्मातुमूर्द्धं विगणयितुमिव ज्योतिषां चक्रवालं
निर्देष्टुं मार्ग्गगुच्चैर्द्दिवं इव सुकृतोपार्ज्जितायाः स्व-कीर्त्तेः।
तेनाकल्पान्त-कालावधिरवनिभुजा श्री-यशोधर्म्मणायं
स्तंभः स्तंभाभिराम-स्थिर-भुज-परिघेणोच्छ्रितिं नायितोत्र।।७।।

श्लाघ्ये जन्मास्य वंशे चरितमघहरं दृश्यते कान्तमस्मिन्
धर्म्मस्यायं निकेतश्चलति नियमितं नामुना लोकवृत्तम्।
इत्युत्कर्षं गुणानां लिखितुमिव यशोधर्म्मणश्चन्द्र-बिम्बे
रागादुक्षिप्तं उच्चैर्भुर्ज इव रुचिमान्यः पृथिव्यां विभाति।।८।।

इति तुष्टूषया तस्य नृपतेः पुण्य-कर्म्मणः।
वासुलेनोपरचिताः श्लोकाः कक्कस्य सूनुना।।९।।
उत्कीर्ण्णा गोविन्देन।।

यह एक प्रशस्ति है, जिसमें तत्कालीन परिस्थिति-निदर्शनपूर्वक यशोधर्मन् का पराक्रम अंकित किया है। सभी श्लोक शुद्ध, उन्नत, संस्कृत, गौड़ी रीति में हैं। प्रथम श्लोक में यह बताया गया है कि श्रेय-भाजन, मनु, भरत, अलर्क और मान्धाता के समतुल्य, सुवर्ण-कंकण में मणि के समान शोभित शार्ङ्गपाणि (विष्णु) के समान यशोधर्मा नें उन नरेशों को परास्त किया जो मदमस्त, विनय से शून्य और सच्चे मार्ग से च्युत हो गए थे, और जिनके अत्याचारों से पृथ्वी पीड़ित हो गई थी। चौथे श्लोक में यह कहा गया है कि



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

यशोधर्मन् उतने भू-भाग पर आधिपत्य करता था, जितना न तो गुप्त नरेशों के आधीन और न हूणों के। पाँचवें श्लोक की वर्ण्य वस्तु यशोधर्मन् की सीमा है, जो लौहित्य (ब्रह्मपुत्र), हिमालय, पश्चिम समुद्र से दक्षिण के महेन्द्र पर्वत तक विस्तृत थी। छठे श्लोक में कहा गया है कि वह शिव का भक्त था और उसके पादपद्म मिहिर कुल (हूण नरेश) ने भी अर्चित किए थे। सातवाँ श्लोक कवि कल्पना का सुन्दर उदाहरण है। उसमें यह उत्प्रेक्षा है कि यशोधर्मन् ने यह स्तम्भ खड़ा किया, इसका उद्देश्य मानो पृथ्वी को नापना था या आकाश के तारे गिनना अथवा अपनी कीर्ति को स्वर्ग का मार्ग बतलाना था। आठवें श्लोक में फिर स्तम्भ का ललित भाषा में वर्णन है। उसमें कहा गया है कि श्लाघ्य वंश में जन्मे इस राजा के गुण और पराक्रम को चन्द्रबिम्ब में अंकित करने की दृष्टि से यह स्तंभ खड़ा किया। अंतिम श्लोक में बतलाया है कि यह रचना कक्क के पुत्र वासुल ने की थी। समाप्ति में उत्कीर्णकार गोविन्द का नाम दिया है।

काल-मान से इसके बाद का लेख उसी जिले में भानपुरा से लगभग ५ कि.मी. इन्द्रगढ़ नामक प्राचीन स्थल पर उपलब्ध हुआ है। इस लेख का संपादन लेखक ने बिहार रिसर्च सोसाइटी की पत्रिका भाग XL I, पृ. १-१३ में किया है। विक्रम संवत् ७६७ (ई. ७१०) के इस लेख की १९ पंक्तियों में १५ संस्कृत भाषा के श्लोक के साथ अंतिम चार पंक्तियाँ गद्य में हैं। भाषा सुन्दर और काव्यमय है। प्रथम तीन श्लोकों में शिव-वन्दना, चौथे श्लोक में राष्ट्रकूट वंश के नन्नप्प नरेश का उल्लेख और ५-८ श्लोकों में पाशुपताचार्य विनीत-राशि और उसके शिष्य दानराशि का नाम आता है। दानराशि ने इस स्थल पर एक विशाल शिव मंदिर का निर्माण किया था। १०-११ श्लोकों में मंदिर की अन्य जानकारी दी है और १२वें श्लोक में इसके दीर्घ काल तक स्थिर रहने की कामना की है। श्लोक, १३-१४ में सनय का उल्लेख है और श्लोक १५ में यह बतलाया है कि इस प्रशस्ति की रचना गौड़ देश से आए दुर्गादित्य ने की थी और चामुण्डराज ने इसे उत्कीर्ण किया। इसके बाद गद्य भाग में मंदिर की भूमि की सीमा के साथ कतिपय दान-कर्ताओं का उल्लेख है।

धार्मिक दृष्टि से जिस महत्त्वपूर्ण निष्कर्ष का संकेत हमें मिलता है वह यही है कि इस स्थल के पार्श्ववर्ती भूभाग में उस समय शैवमत का प्राबल्य था और उसके अनुयायी विद्वान् आचार्यों का यहाँ निवास था। इसके आसपास के क्षेत्र में उपलब्ध हुई लकुलीश शिव की प्रतिमाओं से इस मत की पुष्टि होती है।

इस क्षेत्र में पाशुपत मत का प्राबल्य कम से कम ५-६ शताब्दियों तक रहा। इस स्थल के पास ही मोड़ी नामक ग्राम में मिले एक खंडित शिलालेख से सिद्ध होता है। इस लेख में अनन्तरकालीन परमार नरेश जयवर्मन् द्वितीय के समय में मोड़ी में वि.सं. १३१४ (ई. १२५२) में इसी मत के एक आचार्य द्वारा मंदिर निर्माण का उल्लेख है। इस लेख के चार में से केवल दो टुकड़े उपलब्ध हुए हैं जो इन्दौर संग्रहालय में सुरक्षित हैं। इस समय से लगभग चार सौ बरसों तक अवन्ती-क्षेत्र में कोई प्राचीन अभिलेख उपलब्ध नहीं हुआ। यह वही समय था जब दक्षिण के राष्ट्रकूटों का कन्नौज के गुर्जर-प्रतीहारों से संघर्ष जारी था, जिसके कारण उज्जैन के आसपास का समस्त भू-भाग प्रभावित हो गया था। इस निरन्तर लम्बे संघर्ष के फलस्वरूप ये दोनों प्रबल शक्तियाँ धीरे-धीरे क्षीण हो गईं और इनके अधीनस्थ शासक अपना सिर ऊँचा उठाने लगे। यही स्थानीय शासक परमार-नरेशों का उदय-काल है। इस वंश के पराक्रमी नरेश वाक्पति-मुंज के चार ताम्र-लेख इस क्षेत्र में पाए गए हैं। उनका विवरण इस प्रकार है :

| प्राप्ति स्थल | वि. संवत् | ईसवी सन् |
|---|---|---|
| १. धरमपुरी (जिला धार) | १०३१ | ९७४ "उज्जयिनी सभावासिते" |
| २. उज्जैन | १०३६ | ९८० "महा विजय स्तंभ धारे" "भगवत्पुरावासिते" |
| ३. गोनरी (उज्जैन जिला) | १०३८ | ९८२ "हूण मंडले" |
| ४. गोनरी (उज्जैन जिला) | १०५३ | ९८६, "अवन्ती मंडले उज्जयिनी विषये" |



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मालव-क्षेत्र के कुछ भाग को जीतने वाला सर्वप्रथम परमार नरेश वाक्पति मुञ्ज का पिता सीयक था, जिसके दो दान-पत्र गुजरात के अहमदाबाद जिले में मिले हैं। इनका समय ई. ९४९ और ९६९ है। इन सभी ताम्रपत्रों के तुलनात्मक अध्ययन से संभावित निष्कर्ष यही है कि उज्जैन के आसपास का भूभाग या तो सीयक के अंतिम दिनों में अथवा मुंज के प्रारंभिक दिनों में परमार-वंश के अधिकार में गया।

ऊपर बतलाए हुए तीनों स्थलों में परवर्ती स्थल उसके पहले के स्थल के पूर्व में है, इससे मुंज के पश्चिम से पूर्व की ओर बढ़ने का अनुमान लगाया जाना आसान है। इन ताम्रपत्रों के तुलनात्मक अध्ययन से कुछ और तथ्य प्रकट होते हैं। धरमपुर में मिला अभिलेख उज्जैन से वितरित किया गया था और उसमें निर्दिष्ट 'शिवतडाग' जहां मुंज ने स्नान किया था, महाकाल के प्रांगण का कुण्ड होना संभव है। उज्जैन में उपलब्ध ताम्रपट्ट का दान 'भट्टेश्वरी देवी' की पूजा-साहित्य जुटाने और उसके मंदिर की टूट-फूट की दुरुस्ती के हेतु किया गया है। यह देवी उज्जैन की गढ़कालिका या हरसिद्धि होना संभव है। गोनरी (१) में हूण मंडल में दान देने का भी ताम्रपत्र में उल्लेख है, जिससे अनुमान है कि मुंज उस समय हूणों से रण में जूझ रहा था जो मंदसौर जिले के आसपास उस समय तक स्थायी रूप से बस गए थे। स्कंदगुप्त द्वारा हूणों के पराभव का उल्लेख ऊपर आया है। गोनरी (२) में जो भौगोलिक वर्णन किया है उससे यह ज्ञात होता है कि उस समय मंडल, विषय और भुक्ति ये शासकीय नाम थे (territorial divisions)।

मुंज का भतीजा इतिहास प्रसिद्ध भोजदेव है। जिसके बारे में एक उल्लेख है कि उसने इतने ताम्रपत्र दान किए जिनके कारण ताँबा महँगा हो गया और शत्रुओं के पांवों में सांकलें डालने के कारण लोहा। अवन्ती क्षेत्र में उसके ताम्रपत्र इन स्थानों पर मिले हैं—महुडी (सीहोर जिला) सं. १०७४, बेटमा (धार जिला) सं. १०७६, उज्जैन सं. १०७८, देपालपुर (इन्दौर जिला) १०७९। धार की भोजशाला की सरस्वती मूर्ति (जो आजकल ब्रिटिश म्यूजियम लंदन में प्रदर्शित है) इसी के समय की है। यह भोज की आराध्य-देवी थीं। विस्तार भय से इन अभिलेखों का विवरण इस लेख में देना संभव नहीं है।

भोज के अनुज और उसके अनुवर्ती परमार उदयादित्य के दो अभिलेख इस क्षेत्र में उपलब्ध हुए हैं। इनमें एक लेख, जो आज धार ही में है, पार्वती की सुन्दर प्रतिमा के पादपीठ पर वि.सं. १०३८ (ई. ९८१) में उत्कीर्ण किया गया था, और दूसरा कमेद नामक गांव में मिला है जो उज्जैन से ८ कि.मी. दूर है। इसका संवत् विक्रम १०४० (ई. ९८३) है।

उज्जैन का एक शिलालेख अपनी विशेषता के कारण सारे भारतवर्ष में अद्वितीय है। यह लेख महाकाल-मंदिर के प्रवेश द्वार के बांईं ओर एक छोटी मंदरी की भींत से जुड़ा है। इसका तकनीकी नाम 'वर्ण-नाग-कृपाणिका' है—अर्थात् छुरी के समान फण वाला साँप, जिस पर अक्षर उत्कीर्ण किए हैं। स्लेट रंग की यह शिला ३५ सें.मी. चौड़ी और ४४ सें.मी. ऊँची है। लेख की कुल २८ पंक्तियाँ हैं। पहली १७ पंक्तियों में शार्दुल विक्रीड़ित छन्द में संस्कृत के ६ सुन्दर शिवस्तुति के श्लोक दिए हैं। जिनमें से बहुतों के अंत में 'ज्योति सतां शाम्भवम्' यह दिया है। उसके बाद ५ पंक्तियों में देवनागरी अक्षर और पाणिनीय सूत्र (अइउण् आदि), और अंतिम ६ पंक्तियों में उदयादित्य की प्रशंसा के साथ अंत में कवि का नाम दिया है। नागरी-वर्णों की जमावट एक साँप की गेंडुरियों में की गई है और उसकी पूँछ पर संस्कृत के धातु-प्रत्यय उकेरे गए हैं। साँप का फण छुरी या कटार के आकार का है।

इसी प्रकार के लेख ऊन (नेमाड़ जिला) और धार में भी मिले हैं। धार के लेखों का संपादन धार के दिवंगत के.के. लेले ने और तदनन्तर इन सब का संपादन श्री शास्त्री ने एपिग्रफियो इंडिका, भाग ३१, पृ. २९ पर किया है। शास्त्री ने यह भी कल्पना की है कि जब इसके पहले श्लोक के अनन्तर क्रमांक ७९



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

है तब यह निर्विवाद है कि इसके पहले के १-७८ श्लोक किसी अन्य प्रस्तर पर उत्कीर्ण हों। मंदिर के ऊपरी भाग पर २-३ छोटे-छोटे पाषाण-खंड हैं, जो संभवतः इसी के अंश हों, यद्यपि यह निश्चित रूप से कहने में हम असमर्थ हैं। शास्त्री का यह भी अनुमान है कि इस लेख के पूर्व भाग में परमार वंश का वर्णन हो सकता है। स्थानाभाव के कारण हम यहां इस लेख का केवल एक श्लोक उद्धृत करते हैं, जो कवि-कल्पना एवं दर्शनशास्त्र की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है :

क्रीड़ा-कुण्डलितोरगेश्वरतनूकाराधिरू ढाम्बरानुस्वारं
कलयन्नकाररूचिराकारः कृपार्द्रः प्रभुः।
विष्णोर्विश्वतनोरवन्ति-नगरी-हृत्पुण्डरीके वसन्
ओंकाराक्षरमूर्तिरस्यतु महाकालोन्तकालं सताम्।।

इस श्लोक के पूर्वार्ध में 'अकार' का स्वरूप बतलाया है, जो क्रीड़ा से कुण्डलित शेष नाग सरीखा होकर आकाश तक पहुँच गया है। उत्तरार्ध में 'ओं' का स्वरूप बतला कर उसका महाकाल से साम्य प्रदर्शित किया है और अन्त में आशीर्वाद में यही कहा है कि अवन्ति नगरी के हृदय-रूपी कमल में निवास करने वाला वह महाकाल सज्जनों के अन्तकाल को दूर करे।

इस श्लोक में यह भी कहा है कि विश्वव्यापी विष्णु ही महाकाल है यह कथन शिव और विष्णु का ऐक्य स्थापित करता हुआ, "शिवस्य हृदयं विष्णुर्विष्णोश्च हृदयं शिवः"—अर्थात् शिव और विष्णु एक ही है—इस उक्ति का स्मरण कराता है।

अवन्ती-क्षेत्र में कुछ ही वर्ष पूर्व मिले एक ताम्रपत्र का संक्षिप्त उल्लेख करना हम आवश्यक समझते हैं, जिसकी प्राप्ति की कथा रोचक है। यह ताम्रपत्र पूरे अभिलेख का पहला पत्रा है, जिसका दूसरा पत्रा अनुपलब्ध है। देवास के एक तमेरे ने इसमें से दो गोल टुकड़े काटे; उसका विचार उन्हें किसी छोटी बालटी के पेंदे में लगाने का था। बचेखुचे टुकड़े बेच दिए जो उज्जैन के पास की एक फैक्ट्री में गलने के लिए गए। मेरे दिवंगत मित्र डॉ. नागू अथक परिश्रम से इन सबको समेटकर मेरे पास लाए और उन सबको ढाल कर पूरा ताम्रपत्र पहले जैसा बनाया गया। उस लेख से उदयादित्य की अंतिम तिथि (१०९३ ईसवी-पूर्व) ज्ञात हुई जो इतिहासों में नई बात ही है। ताम्रपत्र आज तक दिल्ली के संग्राहलय में सुरक्षित है।

उज्जैन में ही उपलब्ध हुए तीन ताम्रपत्रों का संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत करके हम इस लेख को समाप्त करते हैं। ये तीनों ताम्रपत्र उन्नीसवीं सदी के प्रारंभिक वर्षों में कर्नल (बाद में मेजर) टाड ने खोजे थे। इनमें से प्रत्येक का लेख दो पत्रों में पूर्ण होता है, किन्तु आश्चर्य है कि प्रत्येक का केवल एक ही पत्रा मिल सका। फिर भी ये सब तत्कालीन मालव के इतिहास के निर्माण में सहायक होते हैं। इनका प्राप्ति का विवरण इस प्रकार है :

| राजा का नाम | पहला या दूसरा पत्रा | वि. संवत् | ईसवी सन् |
|---|---|---|---|
| १. यशोवर्मन् (परमार नरवर्मन् का पुत्र) | दूसरा | ११९२ | ११३५ |
| २. जयवर्मन् (यशोवर्मन् का पुत्र) | पहला | तिथि रहित | |
| ३. लक्ष्मीवर्मन् (जयवर्मन् का भाई) | दूसरा | ११९१ और १२०० | ११३५ और ११४४ |

प्राप्तिकर्ता ने ये तीनों ताम्रपत्र ग्रेट ब्रिटेन की रॉयल एंशियाटिक सोसायटी को प्रदान कर दिए जहां ये आजकल सुरक्षित हैं। इन तीनों का संपादन कीलहार्न ने इंडियन एंटिक्वेरी भाग १९ पृष्ठ ३४५ पर किया है।

अपनी अपूर्णावस्था में भी ये तीनों ताम्रपत्र ईसा की बारहवीं सदी के मध्यकाल का परमार-इतिहास जानने के अनन्य साधन हैं। राजा भोज (११००-११५० ई.) के अंतिम समय में मालव-भूमि पर चारों ओर से शत्रुओं के आक्रमण प्रारंभ हो गए थे और भोज के भाई और उत्तराधिकारी उदयादित्य के पुत्र नरवर्मन् के राज्यकाल में इन आक्रान्ताओं ने सारी मालव-भूमि को झकझोर डाला था। नरवर्मन् के पुत्र और उत्तराधिकारी यशोवर्मन् के प्रारंभिक वर्षों में ही सन् ११३८ में गुजरात नरेस चालुक्य जयसिंह ने मालव का विस्तृत भाग अपने



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अधिकार में कर लिया और उसके दोनों पुत्र, जयवर्मन् और लक्ष्मीवर्मन् अपने राज्य में ही इधर से उधर भागते रहे। वे जयसिंह के अधिकार में न थे, जैसा कि इन ताम्रपत्रों से ज्ञात होता है। इसी समय के आसपास मालव पर उनकी पूर्वीय सीमा पर स्थित चन्देल नरेशों के आक्रमण भी होते हैं। मालव सीमा में ही भिन्न-भिन्न भागों से ये तीनों ताम्रपत्र प्रदान करने का उल्लेख है। इनमें से अंतिम ताम्रपत्र में दो तिथियों के साथ यह भी उल्लेख है कि पहली तिथि (११३५ ई.) में दिए हुए दो गांव लक्ष्मीवर्मन् ने सन् ११४४ में फिर से दिए। इससे हम इसी निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि इन दोनों ग्रामों के आसपास की भूमि गुजरात के राजा जयसिंह ने अपने अधिकार में कर ली थी।

इस प्रकार अनेक ऐसे तथ्य वंशावलि के साथ इन ताम्रपत्रों के आधार पर प्राप्त होते हैं। जिनमें तत्कालीन मालव के शासन पर प्रकाश पड़ता है। इन सब तथ्यों को लेकर इतिहासज्ञों में मतभेद भी है जिसका विवेचन विस्तारभय से यहाँ करना असंभव है।

चौलुक्यों का अधिकार इस भूमि पर लगभग चालीस वर्ष रहा जिसका विवेचन यहां करना अनावश्यक ही है।

ये तीनों ताम्रपत्र उज्जैन-क्षेत्र में मिली अंतिम ऐतिहासिक उपलब्धियां हैं।

**कालिदास के काव्य की विशेषता :**

भारतीय धर्म, दर्शन, शिल्प और साधना में जो कुछ उदात्त है, जो कुछ दृप्त है, जो कुछ महनीय है, जो कुछ ललित और मोहन है उनका प्रयत्न पूर्वक सजाया-सँवारा रूप कालिदास का काव्य है। यही कारण है कि सैकड़ों वर्ष तक उनकी कविता ने हमारे इस महान देश को आनंद और प्रेरणा दी है। वाल्मीकि और व्यास की कविता के समान ही उनकी कविता भी शक्तिशाली और महनीय चरित्रों की सृष्टि करने में समर्थ हुई है। सुकुमारता के साथ सुशीलता का, मानसिक मृदुता के साथ चारित्रिक दृढ़ता का, अपार वैभव के साथ विपुल वैराग्य का—सौंदर्य के साथ धर्म का—ऐसा मणिकाञ्चन योग संसार के साहित्य में विरल है। कालिदास की कविता आज सारे संसार के सहृदयों को मुग्ध बना रही है पर यह नहीं भूला जा सकता कि उसमें भारतवर्ष का जो कुछ सर्वोत्तम है, उसी का स्वर गूँज रहा है।

संकलित



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

शिला-लेख लिपि

# प्राचीन भारत में उज्जैन का स्थान

□ बैजनाथ पुरी

सम्राट् विक्रमादित्य की राजधानी उज्जैन पर साहित्यिक तथा ऐतिहासिक दृष्टिकोण से प्रकाश डालना अति उपयुक्त होगा। क्षिप्रा नदी के दाहिने किनारे पर बसा हुआ उज्जैन आज भी अपनी प्राचीन संस्कृति और सभ्यता के लिए प्रसिद्ध है। इस प्राचीन नगर ने भारतीय इतिहास के लगभग २५०० वर्षों का उथल-पुथल अपने नेत्रों से देखा। कौशल-सम्राट उदयन की सुन्दरी रानी वासवदत्ता ने यहीं अपने बाल्यकाल के स्वर्ण दिवस व्यतीत किये थे, अशोक ने अपने पिता बिन्दुसार की मृत्यु के पश्चात् यहीं से अपने को सम्राट् घोषित किया था, सम्राट् चष्टन की राजधानी के नाते व्यापार का यह प्रसिद्ध केन्द्र था और यहीं से होकर सार्थवाह भड़ौंच और सोपारा के बन्दरगाह को जाते थे यह वही स्थान है जहाँ सम्राट् चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य धन्वन्तरि, क्षपणक, अमरसिंह, शंकु, बेतालभट्ट, घटकर्पर, कालिदास, वराहमिहिर और वररुचि नामक नवरत्नों के साथ अपना दरबार करते थे। इस प्राचीन नगर का इतिहास पूर्ण रूप से सुरक्षित है और यहाँ यह कहना अनुपयुक्त न होगा कि यद्यपि प्राचीन काल के अन्य स्थान जैसे कौशल, तोशाली, सुवर्णगिरि उत्थान के पश्चात् पतन की ओर अग्रसर हुए, उज्जैन अब भी उसी नाम से भारत में प्रसिद्ध है।

उज्जैन विशाला, पद्मावती, भोगवती तथा हिरण्यवती नामों से प्राचीन भारत में प्रसिद्ध था। हिन्दुओं के सात विशाल तीर्थों में यह एक तीर्थ था। धार्मिक मतानुसार यह नगर प्राचीन काल से विख्यात था। यहीं पर शिवजी की प्रथम पत्नी सती की कुहनी कटकर गिरी थी। इसी से इसका नाम पीकस्थान पड़ा। इस नगर की ऐतिहासिक महत्ता ईसवी पूर्व छठी शताब्दी से आरम्भ होती है। उस समय प्राचीन भारत में सोलह जनपद थे। इनमें से एक अवन्ति भी था जिसकी सीमा वर्तमान मालवा, निमाड़ तथा मध्यप्रदेश मे स्थित कुछ स्थानों तक सीमित थी। डॉक्टर भांडारकर के मतानुसार यह जनपद दो भागों

[1] सैक्रेड बुक ऑफ़ दी ईस्ट, जिल्द १७, पृष्ठ १८७।



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

में विभाजित था—उत्तरी भाग की राजधानी उज्जैन थी; और दक्षिण भाग जिसे अवन्ति-दक्षिणापथ कहते थे, उसकी राजधानी माहिस्सती अथवा माहिष्मती थी, जिसकी समानता नर्मदा पर स्थित वर्तमान मानधाता से की जाती है। उस समय अवन्ति के सिंहासन पर प्रद्योत नामक राजा राज्य करता था। उसके तीन पुत्र थे, जिनके नाम पोपालक, पालक और कुमारसेन थे। इसके अतिरिक्त उसके वासवदत्ता नामक एक कन्या भी थी जो बाद में कौशल-सम्राट् उदयन की प्रधान रानी हुई। प्रद्योत के चरित्र के विषय में महाभाग[१] में लिखा है कि वह क्रूर था किन्तु सच यह है कि उसने पास के राजाओं को अपने आधिपत्य में कर लिया था। उसकी बढ़ती हुई शक्ति के डर से मगध सम्राट् बिम्बसार के पुत्र अजातशत्रु ने अपनी राजधानी राजगृह को सुरक्षित कर लिया था। इस बात का पता मज्झिम निकाय से चलता है। धम्मपद की टीका में प्रद्योत की पुत्री वासवदत्ता और उदयन के विवाह का उल्लेख है और इसी आधार पर दण्डिन् ने भी अपनी वासवदत्ता लिखी। उज्जैन इसी अवन्ति-सम्राट् प्रद्योत की राजधानी थी। ईसा से चौथी शताब्दी पूर्व यह मगध साम्राज्य में चली गई और तभी से मौर्य सम्राट् की ओर से यहाँ एक राज्य-प्रतिनिधि रहने लगा। उज्जैन में एक प्रसिद्ध विहार था और बौद्धकाल में श्रावस्ती से पैठन जाते समय उज्जैन विश्राम का स्थान था।[२]

ईसा से चौथी शताब्दी पूर्व उज्जैन मौर्य साम्राज्य में चला गया। महाबोधिवंश (पृष्ठ ९८) में लिखा है कि मौर्य साम्राज्य में उज्जैन अवन्ति-प्रान्त की राजधानी थी और अशोक को उसके पिता बिन्दुसार ने यहाँ राज्य-प्रतिनिधि बनाकर भेजा था। उज्जैन एक प्रसिद्ध नगर ही नहीं, किन्तु मौर्य साम्राज्य में महत्त्वपूर्ण स्थान रखता था, अशोक के कलिंग के लेख से यह पूर्णतया विदित है। धर्म प्रचार के लिए वहाँ से महामात्र भेजे जाते थे। महाबोधिवंश (पृष्ठ ११६) के अनुसार सम्राट् अशोक अपने पिता के समय में उज्जैन में राज्य प्रतिनिधि था। यहीं उसने वेदिसा महादेवी से विवाह किया। बिन्दुसार की मृत्यु के पश्चात् यहीं से अशोक ने अपने सिंहासनारूढ़ होने की घोषणा की थी।

मौर्य साम्राज्य के अन्त के साथ ही साथ उज्जैन की प्रभुता भी घट गई, किन्तु क्षत्रप राजाओं के समय में चष्टन की यह राजधानी हो गई। टालेमी[३] के कथनानुसार ओजीन अथवा उज्जैन चष्टन राजधानी थी। यह अभी प्राचीन प्रभुता थोड़े ही दिन तक रख सका था कि गौतमीपुत्र शातकर्णि ने चष्टन को हराकर इस पर अधिकार कर लिया। इस बात का पता गौतमी के नासिक के लेख[४] से लगता है इसमें गौतमीपुत्र की राज्यसीमा में अवन्ति का भी उल्लेख है। सातवाहनों का अधिकार अधिक समय तक उज्जैन पर न रह सका। शीघ्र ही रुद्रदामन ने अवन्ति तथा अन्य प्रदेशों को फिर से अपने अधिकार में कर लिया जैसा कि आन्ध्र[५] और गिरनार[६] के लेखों से विदित है। यह लेख क्रमशः शक संवत् ५२ और ७८ के रुद्रदामन के समय के हैं। उज्जैन फिर क्षत्रपों की राजधानी हो गई। इस समय में इसने बड़ी उन्नति की। पेरीप्लस में लिखा है कि यह एक बड़ा व्यापारिक केन्द्र था। सोपारा और भड़ौंच नामक बन्दरगाहों को यहीं से माल जाता था। यहाँ से मुख्यतया सुलेमानी पत्थर, मलमल तथा भाँति-भाँति की मणि और रेशमी वस्त्र बाहर भेजे जाते थे। क्षत्रप राजाओं का अन्त चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य ने किया और उस समय से यह गुप्त साम्राज्य में सम्मिलित हो गया।

परम्परागत कथा प्रसिद्ध है कि यहीं विक्रमादित्य अपने नवरत्नों के साथ राज्यसभा करता था। इन नवरत्नों में कालिदास का स्थान संस्कृत साहित्य में सबसे श्रेष्ठ और उच्च है। कालिदास के मेघदूत में जिस नगरी का मार्ग, कवि ने यक्ष द्वारा बतलाया है, उससे यह प्रतीत होता है कि उसका तात्पर्य उज्जयिनी से ही रहा होगा।

---

[२] रायस डेविस्—बौद्ध भारत, पृष्ठ १०३।
[३] प्राचीन भारत, पृष्ठ १४६।
[४] एपिग्राफिया इण्डिका, जिन्दल ८, पृष्ठ ६०।
[५] वही, जिल्द १६, पृष्ठ १९।
[६] वही, जिल्द ८, पृष्ठ ३६।
[७] बील, जिल्द २, पृष्ठ २१०।
[८] राधाकुमुद : इण्यिनशिपिंग, पृष्ठ १६७।



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कालिदास ने श्लोकों में उज्जयिनी का वर्णन किया है। इन श्लोकों में वहाँ की अपार सम्पत्ति, क्षिप्रा नदी सम्बन्धित कथाएँ, प्रसिद्ध महादेव का मन्दिर, सन्ध्याकाल की आरती तथा नृत्य और रात्रि में अभिसारिकाओं का प्रेम-मिलन बड़े सुन्दर रूप में वर्णित है। इससे कालिदास का उज्जैन अथवा उज्जयिनी से सम्बन्ध प्रतीत होता है।

गुप्त सम्राटों के पश्चात् महाराज हर्ष के समय में भी यह एक प्रसिद्ध नगर रहा। उसका उल्लेख हुए-नच्वांग[७] ने किया है। उसका कहना है कि यहाँ के लोगों की चाल-ढाल सुराष्ट्र के लोगों की जैसी थी। यहाँ के लोग धनी थे। यहाँ कोई ३०० बौद्ध पुरोहित थे जो हीनयान तथा महायान मतों के अनुयायी थे। यहाँ पर बहुत से मन्दिर भी थे जो भिन्न-भिन्न मतों के थे।

उज्जैन भारत के बाहर भी प्रसिद्ध था, इसका पता एक चीनी पुस्तक से लगता है।[८] इसमे लिखा है कि ५४८ ई. में परमति नामक एक उज्जैन निवासी को लायऩवंश के सम्राट वू ने बुलाया था और वह चीन के दक्षिण भाग में उतरा।

सम्राट् हर्ष की मृत्यु के पश्चात् उत्तरी भारत में राज्य-विप्लव हुआ। उज्जैन इस ठोकर को न सह सका। इसका परिणाम यह हुआ कि यह अपनी उन्नति के शिखर से गिर गया। यहाँ पहिले परमार राजाओं का आधिपत्य रहा किन्तु निकटवर्ती गुजरात के चालुक्य, चेदी के कलचुरी, बुन्देलखंड के चन्देल, और मान्यखेट के राष्ट्रकूट राजाओं की सदैव इस पर नीयत रही। परमारों के पश्चात् यहाँ तोमर राजपूतों का राज्य रहा, किन्तु इनके पश्चात् से उज्जैन का अधः पतन आरम्भ हुआ और यह देहली के मुसलमान बादशाहों के हाथ में चला गया।

इस प्रकार प्राचीन भारत में उज्जैन का उच्च स्थान रहा। ईसवी पूर्व छठी शताब्दी में प्रद्योत के समय के तोमर राजपूत राजाओं के समय तक यह उन्नति के शिखर पर रहा। कभी-कभी यह विप्लवों की ठोकरों को न सह सका जिससे यह पतन की ओर अग्रसर हुआ; किन्तु समस्त हिन्दू राजाओं ने इसे अपनाया। सम्राट् विक्रमादित्य की याद के लिए अब भी यही नगर बाकी है।

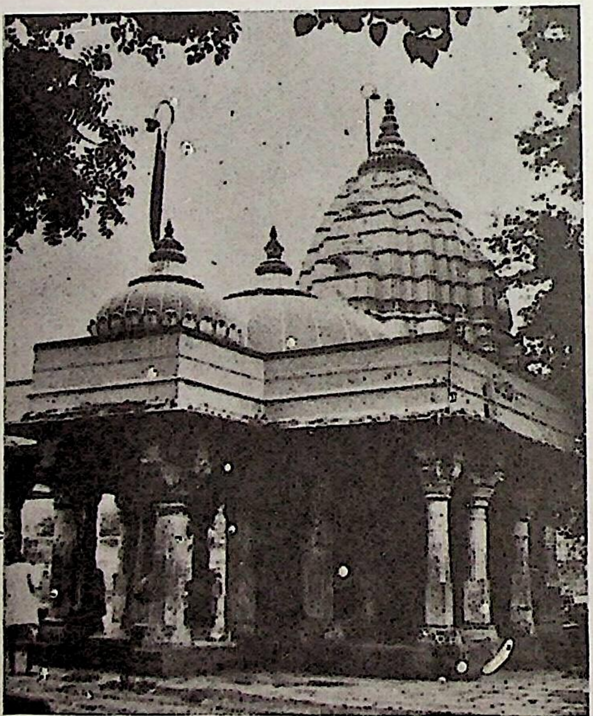

चिन्तामणि गणेश मंदिर



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

# संस्कृत साहित्य में उज्जयिनी

□ गोपीकृष्ण द्विवेदी

इस विशाल भारतवर्ष के इतिहास में अवन्तीदेश अथवा मालव देश का स्थान भी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। इस देश की प्रधानतम एवं प्राचीनतम नगरी उज्जयिनी को अतीतकाल में कई शताब्दियों तक राजधानी होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। इसका वर्णन ऋग्वेद तथा महाभारत एवं पुराण और कालिदास आदि महाकवियों की रचनाओं में उपलब्ध होता है। इसी पुनीत पुरी में भूतभावन भगवान् भवानीपति महाकालेश्वर विराजमान हैं।

गीता के उपदेश द्वारा संसारसागर में जन्म-मरण के आवर्तों में फँसकर नाना प्रकार के क्लेशों से पीड़ित होने वाले प्राणियों को चिरशान्ति प्रदान करने वाले भगवान् श्रीकृष्ण भी अपने ज्येष्ठ बन्धु बलराम के साथ विद्योपार्जन के लिए इसी उज्जयिनी में पूज्य गुरुवर सान्दीपनि महर्षि के पास उपस्थित हुए थे। यह वृत्तान्त श्रीमद्भागवत् के निम्नलिखित पद्य से सुस्पष्टतया प्रतीत होता है :

"अथो गुरुकुले वासमिच्छन्तावुपजग्मतुः।
काश्यं सान्दीपनिं नाम ह्यवन्तीपुरवासिनम्।।"

महाभारत के युद्ध में उज्जैन के राजा विन्द और अनुविन्द दुर्योधन की सहायता करने के लिए सम्पूर्ण सेना समेत उपस्थित हुए थे। इस विषय में महाभारतकार लिखते हैं :

"आवन्त्यौ च महीपालौ सर्वसैन्यसमन्वितौ। बिन्दानुबिन्दौ" इत्यादि।—महाभारत, उद्योगपर्व।

इसी प्रकार कविकुलगुरु कालिदास की अमृतमयी वाणी ने उज्जयिनी के गुणगान में अपना अपूर्व कौशल प्रदर्शित किया है। देखिये रघुवंश महाकाव्य के छठे सर्ग में स्वयंवर के अवसर पर इन्दुमती के सम्मुख आगन्तुक राजाओं का परिचय देती हुई सुचतुरा सुनन्दा उज्जयिनी-नाथ के साथ विवाह करने के लिये उससे आग्रह करती है—

"अवन्तिनाथोऽयमुदग्रबाहुर्विशालवक्षास्तनुवृत्तमध्यः।
आरोप्य चक्रभ्रममुष्णतेजास्त्वष्ट्रेव यत्नोल्लिखितो विभाति।।३२।।
अस्य प्रयाणेषु समग्रशक्तेरग्रेसरैर्वाजिभिरुत्थितानि।
कुर्वन्ति सामन्तशिखामणीनाम्प्रभाप्ररोहास्तमयं रजांसि।।३३।।

**प्राचीन मुद्राएं :**

विदिशा, उज्जयिनी एवं माहिष्मती—तीनों स्थलों का प्राचीनकाल से पारस्परिक राजनीतिक एवं सांस्कृतिक सम्बन्ध रहा है। ताम्राश्म युग में इस सभ्यता के दशार्ण अथवा बेतवा नदी घाटी, अवंति या मध्यमालवा अनूप या नर्मदा घाटी एवं दशोरण या दशपुर-आपरक—ये चार विभाजन किये जा सकते हैं। इन स्थलों के उत्खनन से ताम्राश्म युगीन चित्रित मृण्पात्र उपलब्ध हुए हैं, उन पर मिलने वाले चिह्नों व आहत ताम्र रजत-मुद्राओं के चिह्नों का तुलनात्मक अध्ययन कर इन मुद्राओं का स्रोत प्रागैतिहासिक काल माना जा सकता है ----------------- डॉ. वि. श्री. वाकणकर ने भी मालवा ताम्रांश्मीय पात्रों पर अंकित चिह्नों व आहत ताम्र रजत मुद्राओं का तुलनात्मक अध्ययन कर मुद्राओं के चिह्नों को प्रागैतिहासिक स्रोत बताया है।

संकलित



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

असौ महाकालनिकेतनस्य वसन्नदूरे किल चन्द्रमौलेः।
तमिस्रपक्षेऽपि सह प्रियाभिर्ज्योत्स्नावतो निर्विशति प्रदोषान्।।३४।।

अनेन यूना सह पार्थिवेन रम्भोरु! कच्चिन्मनसो रुचिस्ते।
शिप्रातरंगानिलकम्पितासु विहर्तुमुद्यानपरम्परासु।।३५।।
—(रघुवंश, षष्ठ सर्ग)

कालिदास के सुललित काव्य मेघदूत का नायक विरही यक्ष मेघ को उज्जयिनी मार्ग से जाने के लिये आग्रह करता है—

"वक्रः पन्था यदपि भवतः प्रस्थितस्योत्तराशां।
सौधोत्संग प्रणयविमुखो मास्म भूरुज्जयिन्याः।।
विद्युद्दामस्फुरितचकितैस्तत्र पौरांगनानां
लोलापांगैर्यदि न रमसे लोचनैर्वञ्चितोऽसि।।२७।।
(पूर्वमेघ)

आकर्षण उत्पन्न करने के लिये उर्ज्जयिनी के वैभव का सुविस्तृत रूप से वर्णन करता है—

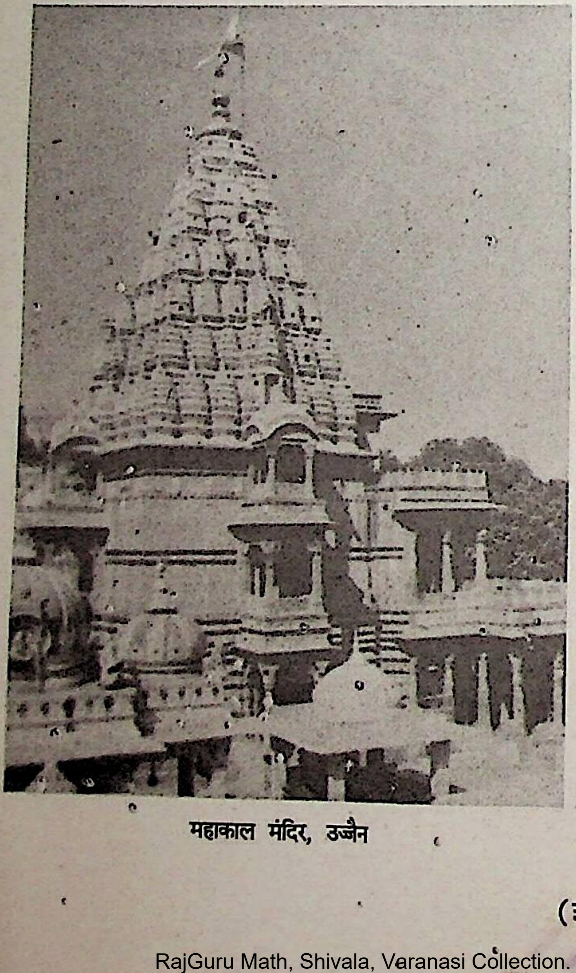

महाकाल मंदिर, उज्जैन

"प्राप्यावन्तीनुदयनकथाकोविदग्रामवृद्धान्।
पूर्वोद्दिष्टामनुसर पुरीं श्रीविशालां विशालाम्।।
स्वल्पीभूते सुचरितफले स्वर्गिणा गां गतानां।
शेषैः पुण्यैर्हृतमिव दिवः कान्तिमत् खण्डमेकम्।।३०।।

दीर्घीकुर्वन् पटु मदकलं कूजितं सारसानां।
प्रत्यूषेषु स्फुटितकमलामोदमैत्रीकषायः।।
यत्र स्त्रीणां हरति सुरतग्लानिमंगानुकूलः।
सिप्रावातः प्रियतम इव प्रार्थनाचाटुकारः।।३१।।
हाराँस्तरांस्तरलगुटिकान्कोटिशः शंखशुक्तीः।
शष्पश्यामान्मरकतमणीनुन्मयूखप्ररोहान्।।
दृष्ट्वा यस्यां विपणिरचितान्विद्रुमाणां च भंगान्।
संलक्ष्यन्ते सलिलनिधयस्तोयमात्रावशेषाः।।
प्रद्योतस्य प्रियदुहितरं वत्सराजोऽत्र जन्हे।
हैमं तालद्रमवनमभूदत्र तस्यैव राज्ञः।।
अत्रोद्भ्रान्तः किल नलगिरिः स्तम्भमुत्पाट्य दर्पा।
दित्यागन्तूनरमयति जनो यत्र बन्धूनभिज्ञः।।
पत्रपश्यामा दिनकरहयस्पर्धिनो यत्र वाहाः।
शैलोदग्रास्त्वमिव करिणो वृष्टिमन्तः प्रभेदात्।।
योधाग्रण्यः प्रतिदशमुखं संयुगे तस्थिवांसः।।
प्रत्यादिष्टाभरणरुचयश्चन्द्रहासव्रणांकैः।।

नागरिकों की विलासिता एवं ललनाओं की श्रृंगारप्रियता का सुन्दर चित्र अंकित करते हुए कविकुलगुरु ने कैसा उत्तम वर्णन किया है—

"जालोद्गीर्णैरुपचितवपुः केशसंस्कारधूपै।
बन्धुप्रीत्या भवनशिखिभिर्दत्तनृत्योपहारः।।
हर्म्येष्वस्याः कुसुमसुरभिष्वध्वखेदं नयेथाः।
लक्ष्मीं पश्यन् ललितवनितापादरागांकितेषु।। (पूर्वमेघ)

इसी प्रकार उज्जयिनी नगरी के अधिष्ठातृ देवता तथा 'आकाशे तारकं लिंगं पाताले हाटकेश्वरम्। मृत्युलोके महाकालं दृष्ट्वा मोक्षमवाप्नुयात्।।" इत्यादि धार्मिक वचनानुसार परमदर्शनीय भगवान् महाकालेश्वर के दर्शन के लिए मेघ से, अनुरोध करते हुए काव्यनायक यक्ष ने कहा है—

'भर्तुः कण्ठच्छविरिति गणैः सादरं वीक्ष्यमाणः।
पुण्यं यायास्त्रिभुवनगुरोर्धाम चण्डीश्वरस्य।।



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

धूतोद्यानं कुवलयरजोगन्धिभिर्गन्धवत्याः।
तोयक्रीडानिरतयुवतिस्नानतिक्तैर्मरुद्भिः।।
अप्यन्यस्मिञ्जलधर महाकालमासाद्य काले।
स्थातव्यं ते नयन विषयं यावदत्येदि भानुः।।
कुर्वन् सन्ध्याबलिपटहतां शूलिनः श्लाघनीया।
मामन्द्राणां फलमविकलं लप्स्यसे गर्जितानाम्।।
पादन्यासैः क्वणितरशनास्तत्र लीलावधूतैः।
रत्नच्छायाखचितवलिभिश्चामरैः क्लान्तहस्ताः।।
वेश्यास्त्वत्तो नखपदसुखान् प्राप्य वर्षाग्रबिन्दू।
नामोक्ष्यन्ते त्वयि मधुकरश्रेणिदीर्घान् कटाक्षान्।।

माधवकृत शंकरदिग्विजय के पन्द्रहवें सर्ग में श्रीशंकराचार्य के द्वारा शैव, वैष्णव, शाक्त, सौर आदि सम्प्रदायवादियों को अद्वैत-सिद्धान्त के अनुयायी बनाने के पश्चात् आचार्यप्रवर की उज्जयिनी-यात्रा का वर्णन किया गया है :

इति वैष्णवशैवशाक्तसौरप्रमुखानात्मवशंवदान् विधाय।
अतिवेलवचोझरीनिरुक्तप्रतिवाद्युज्जयिनीं पुरीमयासीत्।।
मकरध्वजविद्विडाप्तिविद्वान् श्रमहृत्पुष्पसुगन्धवन्मरुद्भिः।
अगरूद्भवधूपधूपिताशं स महाकालनिवेशनं विवेश।।
—शंकरदिग्विजय, १५ सर्ग।

कादम्बरी एवं हर्षचरित के रचयिता महाकवि बाण ने कादम्बरी के पूर्वार्ध में कथानायक चन्द्रापीड़ की जन्मभूमि उज्जयिनी का अत्यन्त रुचिर एवं विशद वर्णन किया है :

अस्ति सकलत्रिभुवनललामभूता प्रसवभूमिरिव कृतयुगस्यात्मनिवासोचिता भगवता महाकालाभिधानेन भुवनत्रयसर्गस्थितिसंहारकारिणा प्रमथनाथेन .................... अवन्तीषूज्जयिनी नाम नगरी।
—कादम्बरी पूर्वार्ध।

गणितज्योतिष के उद्भट विद्वान भास्कराचार्य ने भी निम्नलिखित पद्यों द्वारा उज्जयिनी का ज्योतिष सम्बन्धी महत्त्व प्रदर्शित किया है :

यथोज्जयिन्याः कुचतुर्थभागे, प्राच्यां दिशि स्याद्यमकोटिरेव।
ततश्च पश्चात्र भवेदवन्ती, लंकैव तस्याः ककुभि प्रतीच्याम्।।
यल्लंकोज्जयिनीपुरोपरि कुरुक्षेत्रादिदेशान् स्पृशत्।
सूत्रं मेरुगतं बुधैर्निगदिता सा मध्यरेखा भुवः।।
आदौ प्रगुदयोऽपरत्र विषये पश्चाद्धि रेखोदयात्।
स्यात्तस्मात् क्रियते तदन्तरभवं खेटेष्वृणं स्वं फलम्।।
—सिद्धान्तशिरोमणि, गोलाध्याय।

महाकवि राजशेखर ने स्वरचित काव्यमीमांसा में उज्जयिनी को कवियों की परीक्षाभूमि बतलाया है :

श्रूयते हि उज्जयिन्यां काव्यकारपरीक्षा।
तथाहि : इह कालिदासमेण्ठावत्रामररूपसूरभारवयः।
हरिचंद्रचन्द्रगुप्तौ परीक्षिताविह विशालायाम्।।

उन्हीं महाकवि ने उज्जयिनीनायक साहसांक (विक्रमादित्य) नरेश ने अपने अन्तःपुर में जो भाषानियमन किया था, उसके विषय में भी कहा है :

श्रूयते चोज्जयिन्यां साहसांको नाम राजा, तेन च संस्कृतभाषात्मकमन्तःपुर एवेति समानं पूर्वेण।
—काव्यमीमांसा।

ज्योतिर्विदाभरणकर्ता कालिदास (?) ने भी विक्रमादित्य की राजधानी उज्जयिनी का उल्लेख किया है :

"यद्राजधान्युज्जयिनी महापुरी सदा महाकालरमेशयोगिनी।।"

इसी प्रकार शिवमहापुराण में भी उज्जयिनी का कई स्थलों में उल्लेख किया गया है :

अवन्तीनगरे रम्ये दीक्षितो ऋषिसत्तमाः।
सत्कुलीनः सदाचारः शुभकर्मपरायणः।।
—शिवपुराण, ज्ञान सं. ७५ अ.।
अवन्त्यां तु महाकालं शवं मध्यमकेशवरे।—शिवपुराण, सनत्कुमार सं. ३१ अ.।
अवन्ती नगरी रम्या मुक्तिदा सर्वदेहिनाम्। शिप्रा चैव।।
महापुण्या वर्तते लोकपावनी।। शिवपुराण ज्ञान सं. ४६ अ.।
अवन्ती नगरी रम्या तत्रादृश्यत वै पुनः।
—शिवपुराण ज्ञान सं. ४६ अ.।

इसी प्रकार कई जगह उज्जयिनी का उल्लेख किया गया है स्कन्दपुराण में तो इस उज्जयिनी नगरी का अत्यन्त गौरवपूर्ण वर्णन किया है। इसका एक स्वतन्त्र 'अवन्तीखण्ड' ही है, जिसके 'लिंगमहात्म्य' एवं 'क्षेत्रमहात्म्य' नामक दो खण्ड हैं :



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अवन्तिकायां विहितावतारं एवं—
अवन्ती पुण्यनगरी प्रतिकल्पोद्भवा शुभा।।
अस्ति चोज्जयिनी नाम पुरी पुण्यफलप्रदा, यत्र देवो महाकालः सर्वदेवगणैस्तुतः।। इत्यादि।

इसी तरह काशीखण्ड के सातवें अध्याय में शिववर्मा के आख्यान में कहा गया है कि उज्जयिनी आज तक भी कलियुग के प्रभाव से रहित है।

'लिंगपुराण' में उज्जयिनी के प्रसिद्ध ज्योतिर्लिंग महाकालेश्वर की महिमा का सुविस्तृत वर्णन किया है। वामनपुराण के ८३वें अध्याय में परमभक्त प्रह्लाद का उज्जयिनी में आगमन तथा क्षिप्रा स्नान तथा महाकालेश्वर दर्शन उल्लिखित है।

विष्णुपुराण के इक्कीसवें अध्याय में भगवान् श्रीकृष्ण तथा उनके ज्येष्ठ बन्धु बलराम का महर्षि सान्दीपनी के पास विद्याध्ययन के लिए आगमन सुविस्तृत रूप से उल्लिखित है। गरुड़पुराण में भी :

"अयोध्या मथुरा माया काशी काञ्ची अवन्तिका।
पुरी द्वारावती चैव सप्तैता मोक्षदायिकाः।।"

उक्त कथन के द्वारा उज्जयिनी को मोक्षपुरी माना गया है।

भविष्यपुराण के १४१वें अध्याय में उज्जयिनी का वर्णन है। इस प्रकार प्रायः समस्त संस्कृत वाङ्मय में इस प्राचीन गौरवमयी मालवललामभूता उज्जयिनी का वर्णन उपलब्ध होता है। प्रायः सभी महाकवियों ने इस पुनीत नगरी का गुणगान कर अपनी लेखनी को कृतार्थ माना है।

**संगीत :**

उज्जैन में ध्रुपद शैली के प्रसिद्ध गायक तातुभैया थे। ये षट्रस के ध्रुपद गायक थे। दस हजार ध्रुपद इन्हें कण्ठस्थ थे। इनकी शैली भक्ति रस से ओतप्रोत रही क्योंकि पिता गोविंद बुआ हरदास थे। केशवराव आपटे इन्दौर, केशवराव आपटे उज्जैन व भैयाबुआ हरदास ने इनकी शैली तातुभैया का घराना नाम से प्रचलित की। बिहारीलाल तातुभैया घराने के अनन्य गायक थे।

**प्राचीन इतिहास :**

वैदिक ऋषियों की संज्ञाओं के गोत्र, आत्रेय, गौतम, वशिष्ठ आदि आज तक प्रचलित परम्परा युगव्यापी थी, विश्रृंखलित नहीं है। ऋग्वेद के पुरुष-सूक्त में उल्लिखित वर्णा नाम भारतीय समाज की यथार्थ संज्ञाऐं हैं। उपनिषदों के दर्शन से, भारतीय दर्शन धाराएँ अहर्निश अनुप्राणित हैं। अर्थात् वैदिक साहित्य, महाकाव्य तथा पौराणिक साहित्य आंशिक रूप से ही क्यों न हों इतिहास के अंग हैं।



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



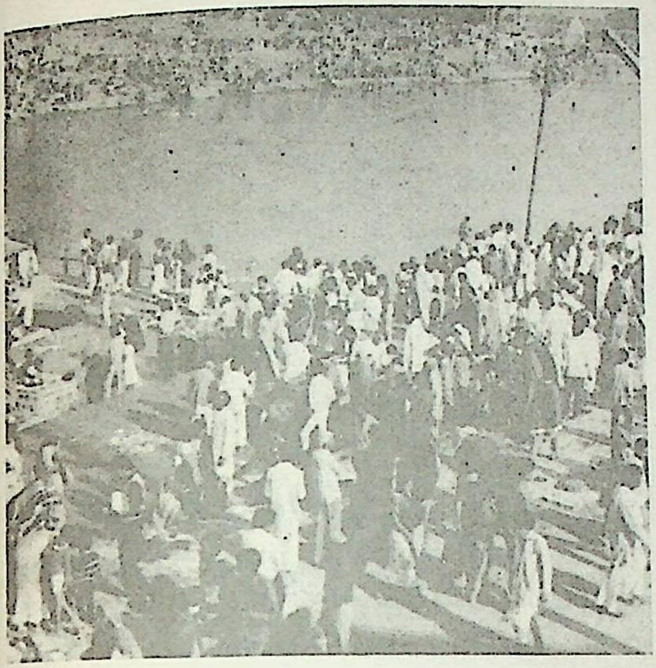

# क्षिप्रा की महिमा

☐ पंडित दया शंकर दुबे
☐ पंडित रामप्रताप त्रिपाठी

क्षिप्रा मालव देश की सुप्रसिद्ध और पवित्र नदी है। यह इन्दौर के पास विन्ध्याचल पर्वत से निकलकर चम्बल नदी में मिल जाती है। इसकी लम्बाई करीब १५० मील है और तेज बहने वाली नदी होने के कारण इसका नाम क्षिप्रा पड़ा है। भारत का प्राचीन उज्जैन नगर इसी नदी तट पर बसा हुआ है। दो हजार वर्ष पूर्व भारत सम्राट् महाराजा विक्रम की यह राजधानी थी। हिन्दुओं के सात पवित्र नगरों में इसकी गणना है। क्षिप्रा के अनेक सुन्दर और रमणीक पक्के घाट हैं, जिनमें से रामघाट मुख्य है। महाकालेश्वर ज्योतिर्लिंग का मन्दिर निकट ही है। इसके कारण इस नदी की पवित्रता और भी बढ़ गई है। उज्जैन से करीब तीन मील दूर सिद्धवट इसी नदी के किनारे पर है। प्राचीन कालियादह महल भी क्षिप्रा के तट पर ही है। इस महल में सूर्य भगवान् के प्राचीन मन्दिर होने का प्रमाण मिलता है। इस महल को मांडव के सुलतान नसीरुद्दीन खिल्जी ने बनवाया था। सम्राट् अकबर और जहाँगीर इस महल में आकर महीनों रहते थे। महाराजा माधवरावजी शिन्दे ने इस महल की मरम्मत कराके इसे स्वर्गतुल्य बना दिया। यहाँ का शीतल मन्दसमीर, यहाँ के विचित्रकला सम्पन्न बावन कुण्ड, यहाँ के रंग-बिरंगे सुन्दर वृक्ष और क्षिप्रा का पवित्र किनारा दर्शकगणों के मन को आकर्षित कर लेता है।

भगवान् कृष्ण ने अपने गुरु महर्षि सान्दीपन से इसी नदी के किनारे शिक्षा प्राप्त की थी। गुरु मत्स्येन्द्रनाथ अपने शिष्य भर्तृहरि के साथ इसी नदी के समीप निवास करते थे। भर्तृहरि के शतकत्रय की रचना भी यहीं पर हुई थी। भारत-सम्राट् विक्रम के समय में महाकवि कालिदास की अपूर्व प्रतिभा का विकास इसी नदी के तट पर हुआ और शकुन्तला, रघुवंश और मेघदूत की सुन्दर रचनाएँ यहीं पर हुईं। बाण की कादम्बरी, चारुदत्त का मृच्छकटिक, कल्हण की राजतरंगिणी इत्यादि ग्रंथरत्नों की सृष्टि इसी नदी के तट पर हुई। क्षिप्रा ने हिन्दुओं के प्राचीन वैभव को देखा है और उसके अधः पतन की भी वह साक्षी है।



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पुराणों में इस नदी के चार नाम पाये जाते हैं—क्षिप्रा, ज्वरघ्नी, पापघ्नी और अमृतसंभवा। इन चारों नामों के सम्बन्ध में स्कन्दपुराण के अवन्तीखण्ड के ६९वें अध्याय तथा अन्य तीन अध्यायों में जो कथा दी हुए है उसका वर्णन संक्षेप में नीचे किया जाता है।

व्यासजी सनत्कुमार से अवन्ती माहात्म्य को सुन लेने के बाद पूछते हैं—"वेदज्ञानियों में श्रेष्ठ! मैं परम पवित्र कल्मषनाशिनी क्षिप्रा का माहात्म्य तुमसे फिर सुनना चाहता हूँ।" सनत्कुमार ने कहा—"भाग्यशाली व्यासजी! जिस प्रकार परमपावन महाकालवन में क्षिप्रा की उत्पत्ति हुई उसे मैं तुमको बतला रहा हूँ। सुनो वत्स! इस समस्त पृथ्वीतल में क्षिप्रा के समान पुण्यदायिनी कोई अन्य नदी नहीं है, जिसके किनारे क्षणभर में मुक्ति प्राप्त होती है, अधिक दिनों तक के सेवन के लिए तो कहने की बात ही क्या है। यह पवित्र नदी वैकुण्ठ में क्षिप्रा, स्वर्ग में ज्वरघ्नी, यमद्वार में पापघ्नी तथा पाताल में अमृतसम्भवा नाम से विख्यात है।"

व्यास ने पूछा—"महाराज! आपने तो बड़ी विचित्र बातें क्षिप्रा के विषय में बतलाईं, कृपया संक्षेप में मुझे उसकी इस पापनाशिनी कथा को सुनाइये।"

सनत्कुमार ने कहा—"व्यासजी! जब शिवजी ब्रह्मा के कपाल[१] को लेकर भिक्षार्थ सभी लोकों और सारी दिशाओं का भ्रमण कर चुके और उन्हें कहीं भी भिक्षा नहीं मिली, तब अतिक्रुद्ध तथा क्षुधित होकर मन में लोकों की निन्दा करते हुए वे सायंकाल के समय वैकुण्ठ-लोक में पहुँचे और यहाँ जाकर आवाज दी कि "भगवन्! मैं सभी लोकों से चक्कर लगाता हुआ यहाँ आ रहा हूँ और अति क्षुधित हूँ, मुझे भिक्षा दीजिए"। क्रुद्ध होने के कारण हाथ में कपाल को दिखाते हुए शिवजी ने बारम्बार जब यही रट लगानी शुरू की तब भगवान् विष्णु ने अपने हाथ को ऊपर उठाकर तर्जनी अंगुली दिखलाते हुए कहा—'शिव! मैं भिक्षा तो तुम्हारी दे रहा हूँ, ग्रहण करो।' भगवन् की अंगुली दिखलाने को शिवजी सहन नहीं कर सके और तुरंत अपने त्रिशूल से उन्होंने उसमें आघात कर दिया, जिससे रक्त की धारा बह निकली और उनके हाथ में रखा सारा कपाल शीघ्र ही भर गया और उसके चारों ओर रक्त की धारा बह निकली। वही धारा क्षिप्रा नदी के रूप में परिणत हुई। इस प्रकार त्रिलोक को पवित्र करने वाली नदी शीघ्रता से वैकुण्ठ से प्रादुर्भूत हुई और तीनों लोकों में उसकी प्रसिद्धि हुई।"

सनत्कुमार ने कहा—"अब इसके ज्वरघ्नी नाम पड़ने का कारण मैं बतला रहा हूँ। सुनो यह कथा तब की है जब बाणासुर नामक दैत्य भगवान् कृष्ण के साथ युद्ध कर रहा था। अनिरुद्ध से अपमानित हो सहस्र हाथों में विविध प्रकार के शस्त्रास्त्रों को धारण कर भगवान् कृष्ण पर जब अति क्रुद्ध होकर वह प्रहार करने लगा तब भगवान ने सुदर्शन चक्र धारण कर अपने अति तीक्ष्ण शस्त्र-अस्त्र से उसकी सहस्र बाहुओं को काट डाला। तब अपमानित तथा घायल होकर बाणासुर युद्धभूमि छोड़ अपने इष्टदेव शंकरजी की शरण में गया। अपने भक्त की ऐसी दयनीय दशा देखकर भक्तवत्सल शंकरजी दयावश स्वयं युद्धभूमि में गये, जहाँ भगवान् कृष्ण अति क्रोध में अभी तक खड़े थे। जाते ही शंकरजी ने अपने तीक्ष्ण बाणों को उन पर छोड़ा। उन्होंने भी अपने विकराल बाणों को शिव पर छोड़कर वध की इच्छा से अपने वैष्णव अस्त्र को छोड़ा। तब शंकरजी ने भी उनके संहारार्थ अपने पाशुपतास्त्र का सन्धान किया। परिणामतः सभी लोकों में कोलाहल मच गया। उपरान्त कृष्णजी ने अपने सम्मोहनास्त्र का शिव पर प्रयोग किया, जिससे उन्हें रणभूमि में भी जम्हआई आने लगी, किन्तु थोड़ी ही देर में वे प्रकृतिस्थ हुए और अपने शरीर से माहेश्वर ज्वर को उत्पन्न किया और देखते ही देखते उनके मस्तक से वीरभद्र भी निकल पड़े। तीन नेत्र, मस्तक, अल्पकाय, तीन चरण आदि भयानक आकृति वाले उक्त ज्वर ने भगवान् कृष्ण की सारी सेना को व्याकुल कर विनष्ट कर दिया। बची हुई सेना कृष्ण के सामने ही भागने लगी। तब भगवान् ने वैष्णव ज्वर को उत्पन्न किया और तब उन दोनों ज्वरों में भयानक युद्ध छिड़ गया।



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

थोड़ी देर बाद वैष्णव ज्वर से व्याकुलित माहेश्वर ज्वर ने शरणार्थ तीनों लोकों में भागते हुए चक्कर लगाना शुरू किया, किन्तु कहीं भी उसे शान्ति नहीं मिली, तब महाकालवन में आया और क्षिप्रा की धारा में मग्न हो गया। इस प्रकार उस भीषण माहेश्वर ज्वर को क्षिप्रा में शान्त होते देख वैष्णव ज्वर ने भी उसमें प्रवेश कर अवगाहन किया। थोड़ी ही देर में क्षिप्रा के अद्भुत प्रभाव से दोनों ही शान्त होकर विनष्ट हो गये। यही कारण है कि क्षिप्रा को ज्वरघ्नी कहते हैं। जो प्राणी भीषण ज्वर से पीड़ित होकर सावधान चित्त से क्षिप्रा में स्नान करते हैं तथा उसके पवित्र तट पर निवास करते हैं, उन्हें कभी ज्वर की बाधा नहीं होती।''

सनत्कुमार ने कहा—''परम तपस्विन्! अब मैं क्षिप्रा के पापघ्नी (पापनाशिनी) नाम पड़ने का कारण संक्षेप में तुम्हें बतला रहा हूँ। प्राचीन काल में कीहट देश में एक दमनक नामक राजा था, जो घोर धर्मों का विनाशक, गौ तथा ब्राह्मणों की निन्दा एवं अपकार करने वाला, मद्यप, सुवर्ण की चोरी करने वाला, गुरु की शैय्या पर बैठने वाला, और दूसरे के मांगलिक कार्यों में बाधा उपस्थित करने वाला था। वह सर्वदा प्रजावर्ग का सर्वत्र अपहरण करने की ताक में लगा रहता था, दूसरे की बहू-बेटी पर उसकी बुरी दृष्टि थी, पक्का धूर्त कपटी, कुसंगी चुगुल व चोरों का समर्थक था। गौशाला और नगरों को तुड़वा देता था, किसी के घर को उजड़वा देना उसके बांएँ हाथ का खेल था। दूसरों की निन्दा करने वालों का सम्मान करता था, संक्षेप में यह कि उसके समान पापाचारी तथा नीच राजा न तो पृथ्वी पर कभी हुआ और न होगा। एक बार शिकारियों को साथ ले वह महाकालवन के समीप शिकार खेलने गया और संयोग से सभी लोगों का साथ छूट गया, रात में भूख प्यास से व्याकुल होकर उस भयानक वन में एक वृक्ष के नीचे घोड़े को बाँधकर, वह बैठ गया, इतने ही में वृक्ष पर से एक सर्प उसके सिर पर गिरा। जब तक उसने हाथ से उठा कर उसे फेंकना चाहा तब तक उस विकराल सर्प ने उसके अंगूठे में काट खाया। परिणामतः उस निर्जन वन में वह थोड़ी ही देर के बाद चल बसा। पश्चात् यमराज के दूतों ने उसे पूर्व जन्म के कुकर्मों के अनुरूप कठोर दण्ड देना शुरू किया। व्यासजी! इतने ही समय में वन के पशुओं ने राजा के शरीर से माँसपिण्डों को नोच-नोचकर समाप्त कर दिया, कुछ अवशेष अंश को एक कौवे ने देखा और उसे उठाकर वह आकाश से उड़ता हुआ क्षिप्रा के ऊपर पहुँचा तब तक अन्य कौवे भी वहाँ पहुँच गये, और आपस में छीना झपटी होने लगी। संयोग से वह माँस पिण्ड धारा में गिर पड़ा। भगवान् के अंगूठे से निकलने के कारण पापनाशिनी क्षिप्रा के अनुपम प्रभाव से राजा तुरंत ही शिवरूप में परिणत हो गया। त्रिलोचन, व्याघ्रचर्मधारी, चन्द्रभाल शिव रूप में राजा को देख और तुरंत ही शिवदूतों से ताड़ित हो यमदूतों ने वहाँ से भागकर यमराज की शरण ली, और निवेदन किया कि महाराज! परम पतित, गौ-ब्राह्मण की हत्या करने वाला, कपटी, परम नीच, उस राजा दमनक को शिवरूप की प्राप्ति क्योंकर हो गई? बहुत दिनों के बाद हम लोगों को वही एक अपराधी मनमानी दण्ड देने के लिए मिला था, सो उसकी यह गति हो गई अब हम लोग क्या करें? बेकार तो बैठे भी नहीं रह जाता। धर्मराज ने ध्यान लगाया तो उन्हें सारी बातें स्पष्ट हुईं, धीरज बँधाते हुए उन्होंने कहा—अनुचरगण! सावधान होकर सुन लो, महाकालवन में पतित पावनी क्षिप्रा नदी बहती है, जो प्राणी उसके जल का स्पर्श करता है उसे पाप का स्पर्श नहीं होता। क्षिप्रा के सेवन से मन, शरीर और वचन से किये गये पापपुञ्ज तत्क्षण नष्ट हो जाते हैं। यही नहीं जो प्राणी केवल 'क्षिप्रा, क्षिप्रा' नामोच्चारण

---

१. यह कथा पुराणों में कई स्थलों पर आ चुकी है कि शिवजी ने ब्रह्मा का सिर आवेश में आकर काट लिया था, जिससे उन्हें कपाल लेकर सारे भूमण्डल पर घूमना पड़ा था, प्रस्तुत कथा वहीं से प्रारम्भ होती है।

२. आयुर्वेद ज्वरोत्पत्ति के प्रकरण में यही कथा आती है।



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ही करता है, वह भी शिवत्व की प्राप्ति करता है। वैशाख के महीने में जो प्राणी इस क्षिप्रा में स्नान करते हैं वे शिव रूप धारण कर अनन्तकाल तक विहार करते हैं, उन्हें किसी नरक का दर्शन तक नहीं होता। बावली, कूप एवं सरोवर आदि के जल से नदी का जल दस गुणित पुण्यदायी होता है, सभी सामान्य नदियों से दस-गुणित अधिक तापी नदी का माहात्म्य है उससे दस गुनी अधिक गोदावरी तथा गोदावरी से दस गुनी अधिक पुण्यदायिनी नर्मदा है। उस नर्मदा से भी अधिक दस गुणी पुण्यदायिनी गंगा कही जाती है। किन्तु यह शिप्रा तो उससे भी दस गुनी अधिक पुण्यशालिनी है। यह परमपावनी नदी अवन्तिका पुरी में है। अधिक क्या वर्णन करें, देवता तक उस पुण्यसलिला के दर्शन की अभिलाषा में रहते हैं। धर्मराज की ऐसी बातें सुन उनके अनुचरगण परम विस्मित हुए।

सनत्कुमार ने कहा—"व्यांसजी! अब में क्षिप्रा के नागलोक में अमृतोद्भवा नाम पड़ने का कारण तथा उसका महात्म्य बतला रहा हूँ, सुनिये। उसी प्रसंग में एक बार अति क्षुधित शिवजी भिक्षार्थ नागलोक में घूमते-घूमते भोगवती पुरी में पहुँचे और घर-घर भिक्षा की रट लगाई; किन्तु किसी ने उन्हें भिक्षा नहीं दी, तब अति क्रुद्ध हो लाल नेत्र त्रिशूलधारी शिवजी भोगवती से बाहर निकले, जहाँ पर नागलोक की रक्षा के लिए अमृत के इक्कीस कुण्ड भरे हुए थे। वहाँ अमृत को रखा देख सर्वव्यांपी कल्याणकारक शिवजी ने अपने तीसरे नेत्र से उन अमृत के कुण्डों से अमृतरस का पान कर लिया, परिणामतः सभी कुण्ड रिक्त हो गये, और सारा नागलोक थर्राने लगा। सभी वासुकि आदि नागराज यह कहकर शोर मचाने लगे कि अरे किसने ऐसा दुष्कर कार्य किया, यह सारा का सारा अमृत कहाँ चला गया, किसने उसे पी लिया, अब हम लोग कैसे जीवित रह सकेंगे। थोड़ी देर पश्चाताप करने के बाद स्त्री-बालक वृद्ध सभी नागगण शंकित चित्त हो मन में भगवान् विष्णु का ध्यान करने लगे। भगवान के अनुग्रह से आकाशवाणी हुई कि नागो! 'तुम लोगों ने देवताओं का अपमान किया था, हाथ में कपाल लिए अति क्षुधित शिवजी भिक्षार्थ अतिथि बेला में तुम लोगों की नगरी में घूमते रहे किन्तु किसी ने उन्हें भिक्षा नहीं दी, और वे निराश होकर बाहर चले आये। उसी कारण से तुम लोगों के कुण्ड से सारा अमृत गायब हो गया, अब तुम लोग पाताल से मर्त्यलोक के महाकालवन को जाओ, वहाँ क्षिप्रानामक एक पुण्यप्रदा नदी है, जो तीनों लोकों को पवित्र करने वाली है, तथा सभी मनोरथों को पूर्ण करने वाली है, उसके दर्शनमात्र से सभी पापों का विनाश होता है, वहाँ जाकर तुम लोग विधिपूर्वक स्नान करो और देवाधिदेव शिवजो की आराधना करो, तब पवित्र होओगे और तब शिवजी की कृपा से और क्षिप्रा के महात्म्य से तुम लोगों के लोक में अमृत पुनः प्राप्त होगा।" इस प्रकार की आकाशवाणी सुनकर सब नागों ने वास्तविक स्थिति समझी और बाल-वृद्ध-स्त्री समेत महकालवन को प्रस्थित हुए। वहाँ पहुँचकर उन्होंने त्रैलोक्यवन्दिता क्षिप्रा का दर्शन किया। उस क्षिप्रा नदी का मनोहर तट कुश और घासों से सब कहीं आच्छादित था, वृक्षों की शीतल और सुखद छाया परिश्रम को नष्ट करने वाली थी, कारण्डव पक्षी हिलोरें ले रहे थे, मणिमुक्ता और मूँगों से जटित सीढ़ियाँ बनी हुई थीं, चारों ओर उसमें पद्मराग की चमक हो रही थी, सायंकाल और प्रातःकाल ब्राह्मणों के झुण्ड के झुण्ड उसमें सन्ध्या वन्दनादि करते रहते थे। परम ऐश्वर्यवान महर्षि भृगु और आंगिरस उसके तट पर समाधि में लीन थे, गन्धर्वों समेत नारदादि देवर्षि आनन्दविभोर हो रहे थे। वसुगण आदित्यगण, अश्विनीकुमार, पवन, रुद्र देवगण, निर्मल चित्त पितरगण सावधान चित्त हो सब समय क्षिप्रा के सेवनार्थ आते थे। ऋषियों की पत्नियाँ देव कन्याएँ, अप्सराओं के समूह, परम ऐश्वर्यशालिनी पतिव्रता ग्रहस्थों की स्त्रियाँ अपने पतियों समेत उपासना में तल्लीन थीं। बड़े-बड़े राजर्षिगण दान दे रहे थे। सिद्ध योगीश्वर गण शान्त चित्त हो ध्यान लगा रहे थे। सभी प्रकार के सौन्दर्य से युक्त क्षिप्रा को देखकर नागगण अति प्रसन्न हुए। और स्नानदानादि से निवृत्त हो महादेव की आराधना की, और वेदोक्त विधि से पूजा कर स्तुति की। नागों की स्तुति से आशु



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भगवान् अति सन्तुष्ट हुए और बोले कि 'नागगण! मैं एक बार भिक्षार्थ तुम लोगों के लोक में कपाल धारण किए घर-घर घूमता रहा किन्तु किसी ने मुझे भिक्षा नहीं दी। तुम लोगों के इसी पाप से सब अमृत नष्ट हो गया, किन्तु कुछ पुण्य शेष था, जिसके प्रभाव से ऐसे परम पुनीत स्थान में तुम लोग आ गये और सभी लोगों ने पतितपावनी क्षिप्रा का अमोघ दर्शन प्राप्त किया। नागगण! इस पुण्यसलिला के दर्शन करने वाले मेरे पद को प्राप्त करते हैं।' शिवजी की बातें सुन उन लोगों ने स्त्री बच्चों समेत क्षिप्रा में स्नान किया और उन्हीं के आदेश से उसके जल को ले जाकर अमृत के उन रिक्त कुण्डों में छिड़का जिससे वे पूर्ववत् पूर्ण हो गये। व्यासजी! तभी से इस क्षिप्रा का नाम अमृतोद्भवा कहा जाता है, और सभी लोकों में इसकी यह प्रसिद्धि है। पृथ्वी तल में जो लोग इसमे स्नान करते हैं, उनके सभी रोग दोषादि नष्ट हो जाते हैं, सारी विपत्तियाँ अपने आप दूर हट जाती हैं। पुत्र, स्त्री, मित्रादि से कभी वियोग अथवा कष्ट नहीं होता। यह क्षिप्रा यों तो सर्वत्र कल्मषनाशिनी है, किन्तु अवन्तिका में इसका विशेष महात्म्य है।

उपर्युक्त कथाओं में एक बात विशेष ध्यान देने योग्य है। क्षिप्रा के जल में अमृत के गुण बतलाए गए हैं और यह कहा गया है कि जो प्राणी भीषण ज्वर से पीड़ित होकर क्षिप्रा में स्नान करते हैं वे ज्वर से मुक्त हो जाते हैं और जो क्षिप्रा का सेवन करते हैं उनको ज्वर की बाधा नहीं होती। क्षिप्रा के जल की जाँच वैज्ञानिक ढंग से की जानी चाहिये और ज्वर के रोगियों में भी क्षिप्रा के जल के प्रयोग करने की आवश्यकता है। □

क्षिप्रा तट पर रामघाट



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

# शताब्दियों का उज्जैन

उज्जैन की प्रसिद्धि प्रागैतिहासिक काल से चली आई है। आदि कवि बाल्मीकि ने रामायण में अवन्तिका का नाम सीता की खोज के प्रसंग में इस प्रकार लिया है :

'आब्रवन्तीमवन्तीं च सर्वमेवानुपश्यत'

'अवन्तीमंगलेपाश्च तथा चालक्षितं वनम्'

जैन साहित्य और जैन धर्म में भी उज्जैन का अत्यधिक महत्व लक्षित होता है। उज्जैन अनेक जैन मुनियों की विश्रामस्थली रही है। मुनि अकम्पनाचार्य सदृश अनेक जैन मुनि उज्जैन में पदार्पण करते रहे हैं।

तीर्थंकर महावीर स्वामी उज्जैन के समीप अतिमुक्तक नाम की श्मशान भूमि में ध्यानस्थ हुए थे और यहीं से उनको आत्मबल की सिद्धि हुई। दिगम्बर और श्वेताम्बर शाखाओं की स्थापना उज्जैन में ही हुई समझी जाती है। विक्रम की सभा का नवरत्न क्षपणक जैन ही था जिसका वास्तविक नाम सिद्धसेन दिवाकर था।

उज्जैन बौद्ध धर्म का भी केन्द्र-स्थल रहा है। महात्मा बुद्ध के समकालीन चंडप्रद्योत अवन्ती देश के नरेश थे। उनके पुरोहित के पुत्र महाकात्यायन बौद्ध धर्म अंगीकार करके महात्मा बुद्ध के शिष्यों में अग्रगण्य हो गये थे। उन्होंने सूरसैन तथा अवन्ती प्रदेश में बौद्ध धर्म का प्रचार किया था। बौद्ध धर्मावलम्बी सम्राट् अशोक उज्जैन में लम्बे समय तक मगध सम्राट् के प्रतिनिधि रह चुके थे। उनके पुत्र महेन्द्र और पुत्री संघमित्रा ने भिक्षुव्रत धारण करके लंका में धर्म-प्रचार करते हुए वहीं अपना शरीर छोड़ा। जातक ग्रन्थों में उज्जैन का नाम बड़े सम्मान के साथ लिया गया है। उज्जैन के जिन दो प्रकाण्ड बौद्ध भिक्षुओं ने चीन में जाकर धर्म-प्रचार किया वे थे—उपशून्य और परमार्थ। उपशून्य उज्जैन के राजकुमार थे जो ईसवी सन् ५४६ में दक्षिण चीन गये और उन्होंने चीनी भाषा के अनेक ग्रन्थों का अनुवाद किया था। परमार्थ ४७ वर्ष की अवस्था में सन् ५४६ ईसवी में चीन गये और उन्होंने वहीं रहकर बौद्ध धर्म का प्रचार करते हुए वहीं अपना शरीर त्याग किया। इस अवधि में उन्होंने ५०५ संस्कृत ग्रन्थों का चीनी भाषा में अनुवाद करके उज्जैन के नाम को बौद्ध साहित्य में अमर बना दिया।

## चीनी यात्री हुएनसांग की उज्जैन यात्रा :

सम्राट् हर्ष के राज्य काल में चीनी यात्री हुएनसांग ने भारत-यात्रा के समय उज्जैन की यात्रा भी की थी। अपने यात्रा वर्णन में उसने लिखा है कि उज्जैन में ३०० बौद्ध पुरोहित थे जो हीनयान एवं महायान मतों के अनुयायी थे। वास्तव में उज्जैन हिन्दू, जैन एवं बौद्ध धर्म का केन्द्र कई सौ वर्षों तक रहा।

## ऐतिहासिक परम्परा में उज्जैन का उल्लेख

लिंग पुराण, मत्स्य पुराण एवं मार्कण्डेय पुराण के अनुसार हैहयवंश के विख्यात नरेश कार्त्तवीर्य अर्जुन के पुत्रों ने अवन्ती पर शासन किया था और उन्हीं से अवन्ती वंश का प्रारम्भ हुआ।

महाभारत में लिखा है कि अवन्ती के दो नरेश विन्द और अनुविन्द ने कौरवों की ओर से पांडवों के विरुद्ध दो अक्षोहिणी सेना के साथ युद्ध में भाग लिया था। ये दोनों ही महारथी युद्ध करते-करते पांडवों द्वारा मारे गये।

इसके पश्चात् बीच का युग ऐतिहासिक दृष्टि से अंधकारमय है। गौतम बुद्ध के समय अवन्ती के राजा चण्डप्रद्योत थे। उस समय उत्तरी भारत में अवन्ती



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मगध, कौशल तथा वत्स ये चार राज्य प्रसिद्ध थे। चण्डप्रद्योत की पुत्री वासवदत्ता एवं वत्स नरेश उदयन की प्रेमगाथा संस्कृत साहित्य में 'स्वप्न वासवदत्ता' के रूप में सदा अमर रहेगी। प्रद्योत वंश ने उज्जैन में १३८ वर्ष राज्य किया। इस वंश के अंत सम्बन्धी कारणों के विषय में इतिहास मौन है।

**मौर्यकालीन उज्जैन :**

मगध के मौर्य सम्राट् बिन्दुसार के राज्य में उज्जयिनी एक वैभवपूर्ण नगरी थी और अवन्ती प्रदेश का प्रतिनिधि शासक यहीं रहता था। अशोक अपने युवराज काल में बिन्दुसार के प्रतिनिधि के रूप में ११ वर्ष तक उज्जैन में रहा और यहीं उसके पुत्र महेन्द्र और पुत्री संघमित्रा का जन्म हुआ। अशोक के पुत्र कुणाल ने केवल ८ वर्ष राज्य किया तदुपरान्त उसके पुत्र सम्प्रति ने राज्य का विस्तार करके मध्यदेश, गुजरात और दक्षिण में अपनी शक्ति बढ़ाई तथा जैन साधुओं के लिये २५ राज्यों में अधिक सुविधाएँ प्रदान कराईं। मौर्य वंश के उपरान्त शुंग और कण्व वंशों ने मगध और विदिशा पर राज्य किया, किन्तु अवन्ती पर उनके आधिपत्य का प्रमाण नहीं मिलता। कण्व वंश का अंत ईसा के २७ वर्ष पूर्व हो गया था।

इसके पश्चात् विक्रमादित्य ने अवन्ती पर राज्य किया और ईसा पूर्व ५७ में शकों को परास्त करके शकारि की पदवी धारण की। विक्रमादित्य के काल में उज्जयिनी का ऐतिहासिक, साहित्य तथा कला का वैभव पराकाष्ठा को पहुंच चुका था। विक्रम के नाम के साथ उज्जयिनी का नाम अखण्ड रूप से जुड़ा हुआ है।

उत्तर में कुशन वंश का प्रादुर्भाव ईसा की प्रथम शताब्दी के अन्त में हुआ। कनिष्क इस वंश का सबसे प्रतापी राजा था। कोई-कोई इतिहास लेखक इस बात को मानते हैं कि कनिष्क का अधिकार उज्जैन पर भी था। उज्जैन के शासकों में शिथिलता आते ही गुजरात के शकों ने फिर अपना प्रभुत्व बढ़ाया और उज्जैन को अपने अधिकार में कर लिया। शक क्षत्रपों का प्रथम उत्तराधिकारी चष्टन था। उज्जैन को राजधानी बनाकर अपने शकों का शासन दृढ़ करने में अपनी शक्ति लगाई। इस वंश के ९ राजा हुए जिनमें रुद्रदामाँ सबसे अधिक प्रतापी निकला। उसका प्रभुत्व गुजरात, सौराष्ट्र, कच्छ, आकर, अवन्ती तथा राजस्थान के दक्षिणी भाग पर था। तीसरी शताब्दी के अन्तिम भाग में इन क्षत्रपों का पतन प्रारम्भ हुआ।

क्षत्रपों के काल में दक्षिण में सातवाहन वंश की स्थापना हुई। पुराणों में इन्हें आंध्र के नाम से सम्बोधित किया गया है। गौतमीपुत्र शातकर्णी ने अवन्ती पर अपना अधिकार क्षत्रपों के समय में ही जमा लिया था किन्तु रुद्रदामन ने पुनः आंध्रों से अवन्ती को छीन लिया। यह संघर्ष चलता ही रहा और यज्ञश्री शातकर्णी ने अवन्ती को पुनः क्षत्रपों से छीन लिया।

**गुप्तकालीन उज्जैन :**

क्षत्रपों और सातवाहनों के पश्चात् गुप्त वंश का अधिकार उज्जैन पर हुआ। चन्द्रगुप्त द्वितीय ने शकों को फिर अवन्ती क्षेत्र से मार भगाया और विक्रमादित्य की उपाधि ग्रहण की। चन्द्रगुप्त ने ३७५ ई. में अयोध्या में राज्यारोहण किया; किन्तु उसने ३९५ ईसवी में उज्जैन

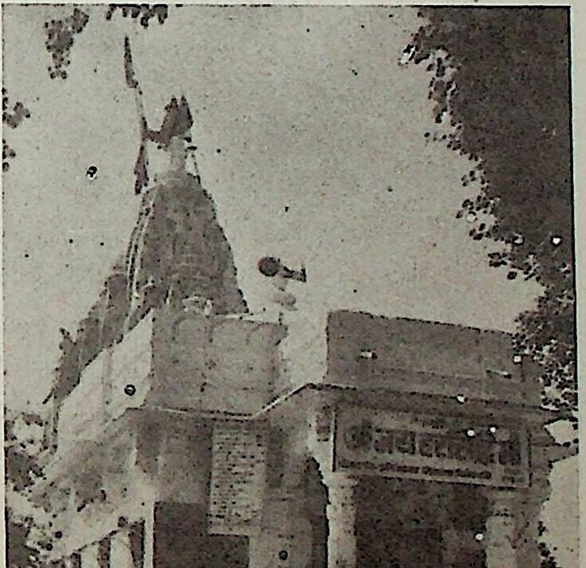

विक्रम की आरध्या देवी हरसिद्धि मंदिर



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

को अपनी राजधानी बनाया। इन विक्रमादित्य की यशोगाथा अनेक शिलालेखों पर अंकित है। चीनी यात्री फाह्यान इनके राज्यकाल में भारत में आया था। उसने विक्रमादित्य की कीर्ति और वैभव का वर्णन किया है। इस समय साहित्य संस्कृति एवं कला अपनी चरम सीमा पर पहुंच गई थी। विक्रमादित्य के पश्चात् कई पीढ़ियों तक गुप्त वंश का आधिपत्य उज्जैन पर रहा; किन्तु छठी शताब्दी के प्रारम्भ में गुप्त साम्राज्य निर्बल हो गया और हूणों ने उज्जैन पर अपना अधिकार कर लिया। प्रथम हूण शासक तोरमाण हुआ। उसके पुत्र मिहिरगुल को मन्दसौर के शासक यशोधर्मन ने सन् ५३३ ईसवी में परास्त करके उज्जैन को अपने राज्य में मिला लिया; किन्तु उसके वंशजों का आधिपत्य अधिक समय तक न रह सका और थानेश्वर के प्रभाकरवर्द्धन ने छठी शताब्दी के अन्त में हूणों को हराकर मालवा, गुजरात तथा सिन्ध पर अधिकार कर लिया। प्रभाकरवर्द्धन के छोटे पुत्र हर्षवर्धन ने ६०६ से ६४७ ईसवी तक राज्य किया। बाणभट्ट ने कादम्बरी में उज्जयिनी की प्रशंसा हर्ष के समय में ही लिखी थी। इसी समय दूसरा चीनी यात्री हुएनसांग भारत में आया। उसने लिखा है कि अवन्ती देश का क्षेत्रफल १,२०० वर्गमील था। उज्जैन नगरी उस समय ६ वर्गमील में बसी हुई थी। नगरवासी व्यापार में बड़े कुशल थे। नगर में उस समय १० बौद्ध विहार थे, जिनमें से कुछ जीर्ण हो चुके थे। बौद्ध भिक्षुओं की संख्या नगर में ३०० थी। नगर में १० मठ अन्य सम्प्रदायों के भी थे, जिनमें साधु लोग अधिक रहते थे। हुएनसागं लिखता है कि उज्जैन के लोग कोमल स्वभाव के एवं मृदुभाषी थे। विद्या और बुद्धि में वे बढ़े-चढ़े थे। नगर धन-धान्य से पूर्ण था और व्यापार का केन्द्र माना जाता था। यहाँ बौद्ध भिक्षुओं की सभा प्रतिवर्ष की जाती थी।

**परमार कालीन उज्जैन :**

हर्ष की मृत्यु के पश्चात् सारे भारत में अराजकता फैल गई। राष्ट्रकूट तथा गुर्जर प्रतिहार मालवा के लिए झगड़ते रहे। नवीं शताब्दी में परमारों ने मालवा पर अपना अधिकार कर लिया। इस वंश के प्रसिद्ध राजा वाक्पति मुंज और भोजदेव हुए। भोजदेव बड़े साहित्य-प्रेमी और कीर्तिवान हुए। कला और साहित्य की उन्नति इनके समय में अत्यधिक हुई। मुंज स्वयं वीर और विद्वान् था। उसने कई बार चालुक्य राजा तैलप को परास्त किया; किन्तु एक बार वह स्वयं परास्त हो गया। तैलप ने अपनी राजधानी में ले जाकर मुंज को बन्दीगृह में डाल दिया और उसे अपनी बहिन का शिक्षक बनाया; किन्तु उसके भाग जाने का सन्देह होने पर उसका सिर काट लिया। मुंज के समय में उज्जैन के साथ-साथ धार की प्रतिष्ठा भी बढ़ने लगी थी। प्राकृतिक सौन्दर्य के कारण मुंज ने धार में भी महल और घाट बनवाए थे। मुंज के पश्चात् उनके भतीजे भोजदेव ने विक्रमादित्य के समान ही कीर्ति अर्जित की; किन्तु राजधानी सदैव के लिए धार नगरी ही बना ली। भोजदेव के समय में साहित्य की श्रीवृद्धि के साथ-साथ चालुक्यों से युद्ध भी होते रहे।

भोज की मृत्यु (१०५८ ईसवी) के उपरान्त जयसिंह और उदयादित्य शासक हुए, जिन्होंने अनेक मन्दिर और तालाब बनवाए। उदयादित्य की वंश-परंपरा में लक्ष्मणदेव, नरवर्मदेव, यशोवर्मनदेव ने शासन किया। अर्जुनदेव के समय सन् १२३५ ई. में दिल्ली के गुलामवंशीय सुलतान अलमतश ने मालवा पर आक्रमण किया और उज्जैन तथा धार के वैभव को विनष्ट कर दिया। सन् १२९१ से १२९३ तक खिलजीवंश के प्रसिद्ध सुलतान अलाउद्दीन ने दुबारा उज्जैन पर आक्रमण किया और उसे अपने राज्य में मिला लिया।

**सल्तनत काल और उज्जैन :**

सन् १३२२ में दिल्ली के तुगलक वंश ने मालवे को अपने राज्य का एक सूबा बना लिया और मालवे में अपना एक शासक नियुक्त कर दिया जिस समय दिल्ली पर तैमूरलंग ने आक्रमण किया उस समय मालवा के तत्कालीन सूबा दिलावरखां ने मांडू को राजधानी बनाकर अपनी स्वतंत्र सत्ता घोषित कर दी। दिलावरखां के पश्चात् उसके पुत्र होशंगशाह ने मांडू में अनेक इमारतें बनवाईं। उसका मकबरा मांडू की प्रसिद्ध ऐतिहासिक इमारतों में गिना जाता है। इसके पश्चात्



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

खिलजी सुलतानों का आधिपत्य हुआ। नासिरुद्दीन खिलजी ने उज्जैन में कालियादह महल बनवाया। उसी के एक हौज में डूबने से उसकी मृत्यु हुई। सन् १५३१ में गुजरात के सुलतान बहादुरशाह ने मालवा को जीत लिया। सन् १५३४ में मुगल सम्राट् हुमायूं ने बहादुरशाह को मंदसौर के निकट हराया। शेरशाह सूर ने जब हुमायूँ को हरा दिया, तो उज्जैन पर सूर वंश का अधिकार हो गया। शेरशाह ने १५४२ ईसवी में शुजाअतखां को मालवे का सूबेदार नियुक्त किया। वह भी मांडू में ही रहता था। उसका पुत्र बाजबहादुर मांडू का अन्तिम सुलतान था। रूपमती और बाजबहादुर की प्रेमगाथा भारत के जनश्रुति-साहित्य में बहुत प्रसिद्ध है। हुमायूँ के पुत्र सम्राट् अकबर ने अपने सेनापति आदमखां को मांडू विजय के लिए भेजा था। सारंगपुर में बाजबहादुर आदमखां से हार गया और इस प्रकार सन् १५६२ में मालवा मुगल राज्य का एक सूबा बना दिया गया।

**आधुनिक कालीन उज्जैन :**

अकबर के पश्चात् जहाँगीर ने मालवे में उज्जैन और मांडू की कई बार यात्रा की और उज्जैन के जदरूप नामक संत के दर्शन किए। अपनी दैनिकी में जहांगीर ने उज्जैन के इस संत के विषय में विस्तार से लिखा है।

मुगल राज्य के पतनकाल में मुहम्मदशाह ने सन् १७२० में जयपुर नरेश जयसिंह को उज्जैन का सूबेदार बनाया था। उन्होंने जयपुर, दिल्ली, मथुरा, काशी और उज्जैन में वेधशालाएँ बनवाईं। उज्जैन की यह वेधशाला आज भी विद्यमान है। इसी समय मराठों के आक्रमण होने लगे थे। कालान्तर में पेशवाओं ने मालवा के कुछ भाग सरदार राणोजी सिंधिया को जागीर में दे दिया। तब से उज्जैन ग्वालियर के प्रसिद्ध सिंधिया वंश के अधिकार में रहा। उज्जैन के मन्दिरों का जीर्णोद्धार इसी काल में कराया गया। सन् १८१० में दौलतराव सिंधिया ने अपनी राजधानी उज्जैन से हटाकर लश्कर (ग्वालियर) में स्थापित की।

सिंधिया वंश के शासन में उज्जैन की उन्नति फिर होने लगी। अन्त में जून सन् १९४८ में मध्यभारत राज्य निर्माण के समय सिंधिया-राज्य, ग्वालियर का विलीनीकरण मध्यभारत में हो गया। नवम्बर सन् १९५६ में मध्यभारत राज्य भी समाप्त हो गया और नवीन मध्यप्रदेश का निर्माण हुआ। — संकलित ☐

गोपाल मंदिर



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

# उज्जयिनी : युगे-युगे

□ डॉ . सुधाकर अमृतफले

**भा**रत वर्ष के अत्यन्त पुरातन स्थानों में उज्जैन (अवन्तिका) प्रमुख महत्त्व की नगरी है। वैदिक साहित्य से लेकर पौराणिक साहित्य, कथा साहित्य, तत्त्वज्ञान, योग एवं ललित साहित्य में भी इस नगरी का व्यापक वर्णन हुआ है। साहित्य का ऐसा कोई अंग नहीं है, जिसमें अवन्तिका की चर्चा न की गई हो। धार्मिक और आध्यात्मिक दृष्टि से उज्जैन की पवित्रता और प्रमुखता सर्वत्र स्वीकार की गई है। भारत की प्रमुख सप्त धार्मिक पुरियों में उज्जैन का अधिक महत्त्व माना गया है। ऐतिहासिक दृष्टि से भी अंवन्ती का स्थान अधिक व्यापक और विशाल है कि किसी भी काल में उसकी उपेक्षा करके इस देश के इतिहास की पूर्णता नहीं की जा सकती।

### उज्जैन नाभिस्थल :

उज्जैन भारत के मध्य भाग में है, अतएव वह इस विशाल राष्ट्र के हृदय-स्थान पर है। जिस प्रकार भौगोलिक दृष्टि से अवन्ती भारत देश के मध्य में है, उसी प्रकार मानव-शरीर में आध्यात्मिक देश-प्रतिष्ठा की योजना के अनुसार वह नाभिस्थान (शरीर-मध्य) में प्रतिष्ठित मानी गई है।

पौराणिक महत्त्व के अतिरिक्त उज्जैन का वैज्ञानिक जगत् में भी स्वतंत्र महत्त्व है। खगोल एवं भौगोलिक गणना के अनुसार लंका से सुमेरू पर्यन्त जो मध्य देशान्तर रेखा गई, वह उज्जैन के ऊपर ही होकर गई है। भारत की काल-गणना का माध्यम उज्जैन ही रहा है। पुरातनकाल की यह "ग्रीन्विच" मानी गई है।

### अति पुरातन अवन्तिका :

अवन्तिका नगरी की कब स्थापना हुई और किसने की इसका ठीक पता नहीं चलता। ब्राह्मण, आरण्यक, उपनिषद् और पौराणिक काल में इसका वर्णन मिलता है, इससे अवन्ती की अति पुरातनता ज्ञात होती है। अनेक युगों में इस नगरी को अनेक नामों से ज्ञापित किया गया है। महर्षि वाल्मीकि ने भी इसका वर्णन किया है और महाभारत काल में तो यह बहुत उन्नत अवस्था में थी। यहाँ के अनेक शासकों और वीरगणों का उल्लेख मिलता है। अवन्ती के निकट माहिष्मती के हैहयों का वर्णन तो अथर्ववेद में भी मिलता है। उज्जैन उस पुरातन काल में भारत का प्रमुख ज्ञान-केन्द्र था। यहाँ उत्तम विद्यापीठ विद्यमान था। यही कारण है कि आज से पाँच हजार वर्ष पूर्व महर्षि सन्दीपनि के चरणों में बैठकर गीताधर्म के प्रतिपादक भगवान् श्रीकृष्ण ने यहाँ शिक्षा प्राप्त की थी—१४ विद्याएँ और ६४ कलाएँ सीखी थीं। राजशेखर (११वीं शती) ने कहा कि यहाँ पुरातन विद्यापीठ था और काव्यकारों की परीक्षा

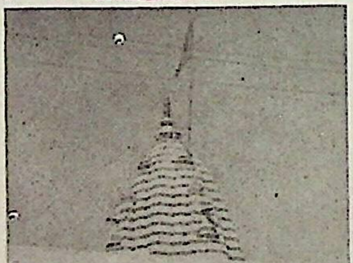

माँ गढ़कालिका मन्दिर



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

होती थी, जिसमें अशोक, चन्द्रगुप्त, शूद्रक और कालिदास आदि ने परीक्षाएँ दी थीं। ज्योतिष के अनेक महत्त्वपूर्ण ग्रंथों का यहाँ प्रणयन हुआ है। राजतरंगिणी एवं कथासरित्सागर के अनेक पृष्ठ उज्जैन की गौरव-गाथा से अंकित हैं। महाकवि बाण की अमर कथाकृति 'कादंबरी' तो अवन्ती की अमर कीर्ति है।

विदेश से आने वाले यात्री अलबेरूनी, हुएनत्सांग, सुएन च्यांग, सुंगमुन, टॉल्मी, बर्नियर, पेरिप्लस, टिमेथलर, मेलेट और एशियाटिक मैन्युअल रजिस्टर के रिपोटर आदि ने उज्जैन का आँखों-देखा मनमोहक वर्णन अपनी पुस्तकों में किया है। इसी प्रकार अरब के प्रसिद्ध कवियों ने भी पुरातन काल में अवन्ती एवं उसके प्रिय शासक विक्रम की यशोगाथा में अंजलियाँ अर्पित की हैं।

### अवन्तिका राजा चण्ड प्रद्योत :

अवन्तिका का प्राचीन क्रमबद्ध इतिहास उपलब्ध नहीं। ईसा पूर्व छठी शती से उज्जैन के इतिहास की सामग्री उपलब्ध होती है। महात्मा बुद्ध का समकालीन राजा प्रद्योत उस समय अवन्तिका का शासक था। प्रद्योत के पश्चात् के कुछ काल का इतिहास विश्रृंखलित रूप में मिलता है। ईसवी सन् २८ के लगभग आंध्र राजवंश ने कण्वों का अन्त किया और मगध साम्राज्य नष्ट हो गया।

अशोक के समय आन्ध्रों ने उसका मांडलिक होना स्वीकार कर लिया था; परन्तु अशोक के बाद आन्ध्रों की सत्ता का विस्तार हो गया। किन्तु उत्तर भारत पर उनका इतना प्रभाव न हो सका। वायव्य से शको ने चढ़ाई करके मालव पर अधिकार कर लिया था। उज्जैन उन्होंने राजधानी बना ली थी। उनकी सत्ता ईसा की चौथी शती तक बार-बार बनती-बिगड़ती रही।

### अशोक उज्जैन का राज्यपाल :

उज्जैन के मौर्य साम्राज्य में रहने का भी पता चलता है। अशोक उज्जैन का राज्यपाल बनकर वर्षों उज्जैन में रहा। यहाँ उसने (राजशेखर के अनुसार) परीक्षा दी, अध्ययन किया। विदिशा (भेलसा) की श्रेष्ठिकन्या से विवाह किया और महेन्द्र तथा संघमित्रा नामक दो सन्तानों का यहीं जन्म हुआ। ये दोनों भाई-बहन उज्जैन से ही बौद्ध धर्म के प्रचार के लिए लंका गये थे, यह प्रसिद्ध है। साँची का स्तूप बौद्ध धर्म का कलापूर्ण शिल्प-श्रृंगार है, जो अशोक की ही देन है। उसके बाद ही मगध के शुंग (ब्राह्मण) की सत्ता का विदिशा में आरम्भ होता है। मालविकाग्निमित्र नाटक की रचना का नायक अग्निमित्र इसी शुंग-सत्ता का अधिकारी था। शुंगों की सत्ता समाप्त होने पर कण्वों का (ईसा पूर्व ६३-२७) यहाँ आधिपत्य रहा। आन्ध्रभृत्य सातवाहनों (ईसा पूर्व २७ से १९), क्षत्रप राजवंशों (११९ ईसवी) की सत्ता रही। पुनः ऐतिहासिक श्रृंखला यहाँ टूट जाती है। अवश्य ही भविष्यपुराण ने कुछ राजवंशों की सत्ता सूचित की है—यशोधर्मन्, शीलादित्य, प्रमद, महामद, देवापि, देवदूत, गंधर्वसेन, शंख, भर्तृहरि आदि। इसके बाद विक्रमादित्य का शासन सूचित किया है।

विक्रमादित्य इतिहास प्रसिद्ध वीर, महातेजस्वी और

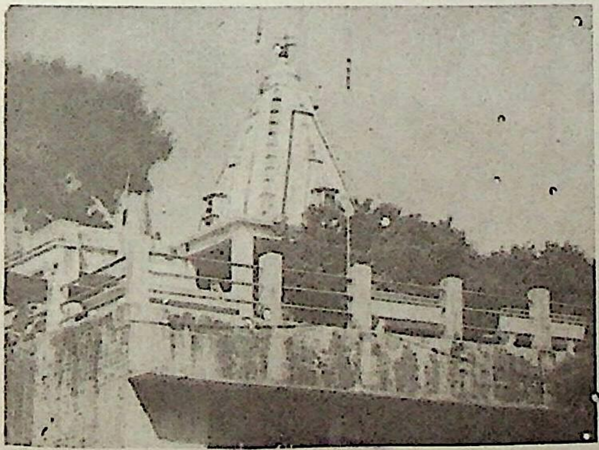

मंगलनाथ



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

शकविजयी तथा संवत्-प्रवर्त्तक रहा, जिसने सारे भारत का चक्रवर्ती राजा बनकर विदेशों पर भी विजय प्राप्त की है। इतिहास, पुराण, काव्य और लोक-कथाओं में इसी की गुणगाथा भरी हुई है। ईसा के ५७ वर्ष पूर्व इसी महान् विक्रमादित्य ने अवन्ती को केन्द्र बनाकर भारत पर अपना विशाल वर्चस्व स्थापित किया और महान् मालवगणों की परम्परा को प्रतिष्ठित किया।

विक्रमादित्य के पूर्व और पश्चात् काल का इतिवृत्त थोड़ा अंधकार के आवरण में पड़ा हुआ है। संभव है, अवन्ती के भूगर्भ में रजोराशि का आवरण लपेटे वह कहीं प्रच्छन्न पड़ा हो।

**समुद्रगुप्त का वर्चस्व :**

विक्रम के पश्चात् १०० ईसवी के लगभग शकवंशीय चष्टन का शासन यहीं रहा है। अवन्ती का यह समय भी रत्नपरिपूर्ण तथा व्यापार-वैभव से सम्पन्न था। शक-काल का अन्त होने पर ४०० ईसवी के आसपास मगध के गुप्तवंशीय नरेशों के अधिकार में उज्जैन को रहना पड़ा। सम्राट् समुद्रगुप्त के पुत्र चंद्रगुप्त द्वितीय ने ४१२ ईसवी पर्यन्त शासन किया। समुद्रगुप्त का भी यहाँ वर्चस्व रहा, उसकी २१ स्वर्णमुद्राएँ मालवे में प्राप्त हुई हैं। चन्द्रगुप्त द्वितीय ने भी विक्रम की उपाधि धारण की थी। इस कारण कुछ लोगों ने इसे ही विक्रमादित्य मान लिया; परन्तु यह चन्द्रगुप्त अवन्ती में नहीं रहा, और न यहाँ इसका कोई चिह्न ही है। अवश्य ही इसके वर्चस्व-काल में भी अवन्ती अत्यन्त उन्नत अवस्था में रही, ज्ञान-विज्ञान का महत्त्वपूर्ण केन्द्र बनी रही। श्री और सरस्वती की वरद छाया इस नगरी पर बनी रही है। उज्जैन गुप्तों की सूबांत रही है। विक्रम उपाधि धारण करने की जो परम्परा समुद्रगुप्त ने डाली थी वह चन्द्रगुप्त की ही तरह स्कन्दगुप्त (४५५-४६७ ईसवी) तथा द्वितीय कुमारगुप्त विक्रम ने भी जारी रखी और अवन्ती का शासन किया।

**मालवा पर हूणों का आक्रमण :**

इस समय मालवा पर हूण लोगों का आक्रमण हुआ। उसके नेता तोरमान ने यहाँ अधिकार कर लिया था; परन्तु हूणराज मिहिरकुल को मन्दसौर के जननायक महावीर यशोधर्मन ने परास्त कर (५२८ ईसवी) मालव मही को पुनः मुक्त बना लिया। सारे भारत से हूणों को हराकर दिग्विजय करके यशोधर्मनदेव ५८३ ई. में स्वर्गवासी हो गया। ६०६ ईसवी तक यहाँ मालवों का ही शासन चलता रहा। महासेन गुप्तों का एक प्रान्तपति यहाँ रहता था। अवसर पाकर उसने उज्जैन में अपनी स्वाधीन सत्ता स्थापित कर ली। मन्दसौर के शिलालेख में जिस कुमारगुप्त का उल्लेख है, उसके समय में बन्धुवर्मा मालवेश बना हुआ था। वि.सं. ५२९ में महासेन के अनन्तर उसका पुत्र देवगुप्त यहाँ का राजा बना। देवगुप्त ने शक्ति संचय कर कन्नौज पर चढ़ाई कर दी थी। वह वहाँ के मौखरी-वंशीय गृहवर्मा को मारकर उसकी स्त्री राज्यश्री को यहाँ कैद करके ले आया था। राज्यश्री थानेश्वर नरेश की बहन थी। उसने देवगुप्त पर चढ़ाई करके उसे परास्त कर दिया और उज्जैन के विशाल वैभव को छीन लिया तथा पुनः राज्यश्री कन्नौज की राजगद्दी पर आसीन हो गई और उज्जैन को अपना प्रान्त बना लिया। कन्नौज के राज्य के अन्त तक उज्जैन उसी के अधिकार में रहा। उसके बाद सिंहवर्मा, नरवर्मा, विश्ववर्मा और बन्धुवर्मा ने क्रमशः यहाँ का शासन संचालित किया। इस समय यहाँ पाशुपताचार्य (लकुलिश पाशुपति) ने बड़े जोरों के साथ अपने पाशुपत मत का कार्य चलाया। उसका स्वतंत्र दर्शन (पाशुपत दर्शन) भी निर्मित है। थोड़े ही समय के बाद शंकराचार्य ने इस मत का खण्डन कर पुनः शैव मत की प्रतिष्ठा की।

उधर कन्नौज का शासन भी कमजोर पड़ चुका था। परिवर्तन क्रम के अनुसार आबू के परमारों ने आक्रमण कर शासन को हस्तगत कर लिया। क्रमशः कृष्णराज, वैरिसिंह सीयकदेव (८७५ ईसवी) आदि यहाँ के शासक हो गये। सिन्धुराज एवं मुंज तक भी अवन्ती को महान् राजनगरी होने का गौरव मिलता रहा। परमार वंश के विश्वविदित कीर्ति विद्वान् नरेश महाराज भोजदेव (१०१० ईसवी) ने राज्यारोहण के पश्चात् शीघ्र ही



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उज्जैन से हटाकर धारा नगरी (वर्तमान धार) में अपनी राजधानी स्थापित की। धार के वैभव-विकास के साथ ही अवन्ती क्षीण होती गई। उज्जैन के बाद सरस्वती और श्री का निकेतन धार ही बन गई थी। भोज के दिवंगत होने के बाद जयसिंह और उदयादित्य (१०५९ ईसवी) शासक हुए। उन्होंने अवन्ती के महाकालेश्वर के उध्वस्त मन्दिर का जीर्णोद्धार करवाया और मालवा के अनेक मन्दिरों और सरों का कलापूर्ण निर्माण करवाया। उदयादित्य का पुत्र लक्ष्मणदेव (१०८६ ई.), उसके बाद नरवर्मदेव (११०४ ई.), यशोवर्मदेव (११३३ ई.), अर्जुनवर्मदेव देवपाल (१२१६ ई.) ने क्रमशः शासन किया। देवपाल के शासनकाल (१२३५ ई.) में मुसलमान आक्रमण होने लगे।

**अल्तमश उज्जैन में :**

दिल्ली के गुलामवंशीय अल्तमश ने मालवा पर हमला किया। उसने मालवा के अनेक मन्दिरों, मठों और मूर्तियों को ध्वस्त कर डाला। कहा जाता है कि उसने महाकाल के मंदिर को भी तहस-नहस किया। इसके बाद लगातार कुछ काल पर्यन्त हमलों का क्रम जारी रहा। १२९० ईसवी तक कोई भी शासन यहाँ जम न सका। १२९१—९३ ई. में अलाउद्दीन खिलजी ने दुबारा अवन्ती पर आक्रमण कर अपना अधिकार जमा लिया।

सन् १३२२ ईसवी में तुगलकों ने यहाँ अपना सूबा कायम किया। १३९० ई. में जब दिल्ली पर तैमूर ने चढ़ाई की, तब अवसर पाकर तुगलकों के सूबा दिलावरखाँ ने यहाँ अपनी सल्तनत स्थापित कर ली और स्वयं को सुलतान घोषित कर दिया। दिलावरखाँ की मृत्यु के बाद उसके लड़के होशंगशाह ने गद्दी पर अधिकार जमाया। १५०१ ईसवी में नासिरुद्दीन खिलजी के आने पर मुहम्मदशाह और बहादुरशाह का मांडव में संघर्ष हुआ और उज्जैन की इस सत्ता की समाप्ति हो गई अभी अकबर का आना शेष ही था। १५६२ ईसवी में उसने आक्रमण कर मालवा पर अधिकार कर लिया। उज्जैन आकर यहाँ के प्राकृतिक सुंदर स्थल कालियादह महल में, जहाँ पुरातन सूर्य मन्दिर को तोड़कर नासिरुद्दीन खिलजी ने यह महल बनवाया था, अपना विश्रान्तिकाल बिताया। जहाँगीर भी महीनों इस महल में आकर रहा था। गुजरात के आक्रमण से लौटकर तथा मथुरा, आगरा से वह उज्जैन में आकर ठहरा। नगर में हाथी पर बैठकर सवारी निकाली तथा अशर्फियाँ लुटवाईं। महल से कुछ दूरी पर ही एकान्त जंगल में उस समय गोस्वामी जदरूप नामक एक सिद्ध सन्त रहते थे। उसने उनके निकट जाकर सत्संग किया और शान्ति प्राप्ति की। इस योगी से जहाँगीर बहुत प्रभावित हुआ था और उसकी प्रसन्नता के लिये अपने शासन को तौल (नाप) भी पलट दी थी। जहाँगीर ने अपनी डायरी (तुजुक जहाँगीरी) में कई पृष्ठों में इसका वर्णन किया।

**राजा ज़यसिंह उज्जैन में :**

सन् १७२० ई. में मुहम्मदशाह ने उज्जैन को अपना सूबा बनाकर जयपुर नरेश जयसिंह को यहाँ रखा था। महाराज जयसिंह शासक के अतिरिक्त बड़े विद्वान् और ज्योतिषशास्त्र के पंडित थे। उन्होंने जयपुर, दिल्ली,

**शाश्वतवाणी :**

किसी एक संकीर्ण स्थान पर जब हम अपने अहंकार और वासना को केंद्रित करते हैं, तब हम समग्र को क्षति पहुँचाते हैं और अंश को बढ़ा-चढ़ा कर देखने का प्रयत्न करते हैं। यही अमंगल की जड़ है। अंश के प्रति आसक्ति हमें समग्र के विरुद्ध विद्रोह करने के लिये प्रेरित करती है और यही पाप है।—इसीलिये त्याग आवश्यक है। यह त्याग अपने को रिक्त करने के लिये नहीं, अपने को पूर्ण करने के लिये होता है। हमें समग्र के लिये अंश का त्याग करना है, नित्य के लिये क्षणिक का, प्रेम के लिये अहंकार का, आनंद के लिये सुख का त्याग करना है। इसीलिये उपनिषद में कहा गया है—तेन त्यक्तेन भुंजीथाः —त्याग द्वारा भोग करो, आसक्ति के द्वारा नहीं।



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

शकविजयी तथा संवत्-प्रवर्त्तक रहा, जिसने सारे भारत का चक्रवर्ती राजा बनकर विदेशों पर भी विजय प्राप्त की है। इतिहास, पुराण, काव्य और लोक-कथाओं में इसी की गुणगाथा भरी हुई है। ईसा के ५७ वर्ष पूर्व इसी महान् विक्रमादित्य ने अवन्ती को केन्द्र बनाकर भारत पर अपना विशाल वर्चस्व स्थापित किया और महान् मालवगणों की परम्परा को प्रतिष्ठित किया।

विक्रमादित्य के पूर्व और पश्चात् काल का इतिवृत्त थोड़ा अंधकार के आवरण में पड़ा हुआ है। संभव है, अवन्ती के भूगर्भ में रजोराशि का आवरण लपेटे वह कहीं प्रच्छन्न पड़ा हो।

**समुद्रगुप्त का वर्चस्व :**

विक्रम के पश्चात् १०० ईसवी के लगभग शकवंशीय चष्टन का शासन यहीं रहा है। अवन्ती का यह समय भी रत्नपरिपूर्ण तथा व्यापार-वैभव से सम्पन्न था। शक-काल का अन्त होने पर ४०० ईसवी के आसपास मगध के गुप्तवंशीय नरेशों के अधिकार में उज्जैन को रहना पड़ा। सम्राट् समुद्रगुप्त के पुत्र चंद्रगुप्त द्वितीय ने ४१२ ईसवी पर्यन्त शासन किया। समुद्रगुप्त का भी यहाँ वर्चस्व रहा, उसकी २१ स्वर्णमुद्राएँ मालवे में प्राप्त हुई हैं। चन्द्रगुप्त द्वितीय ने भी विक्रम की उपाधि धारण की थी। इस कारण कुछ लोगों ने इसे ही विक्रमादित्य मान लिया; परन्तु यह चन्द्रगुप्त अवन्ती में नहीं रहा, और न यहाँ इसका कोई चिह्न ही है। अवश्य ही इसके वर्चस्व-काल में भी अवन्ती अत्यन्त ऊर्जित अवस्था में रही, ज्ञान-विज्ञान का महत्त्वपूर्ण केन्द्र बनी रही। श्री और सरस्वती की वरद छाया इस नगरी पर बनी रही है। उज्जैन गुप्तों की सूबात रही है। विक्रम उपाधि धारण करने की जो परम्परा समुद्रगुप्त ने डाली थी, वह चन्द्रगुप्त की ही तरह स्कन्दगुप्त (४५५-४६७ ईसवी) तथा द्वितीय कुमारगुप्त विक्रम ने भी जारी रखी और अवन्ती का शासन किया।

**मालवा पर हूणों का आक्रमण :**

इस समय मालवा पर हूण लोगों का आक्रमण हुआ। उसके नेता तोरमान ने यहाँ अधिकार कर लिया था; परन्तु हूणराज मिहिरकुल को मन्दसौर के जननायक महावीर यशोधर्मन ने परास्त कर (५२८ ईसवी) मालव मही को पुनः मुक्त बना लिया। सारे भारत से हूणों को हराकर दिग्विजय करके यशोधर्मनदेव ५८३ ई. में स्वर्गवासी हो गया। ६०६ ईसवी तक यहाँ मालवों का ही शासन चलता रहा। महासेन गुप्तों का एक प्रान्तपति यहाँ रहता था। अवसर पाकर उसने उज्जैन में अपनी स्वाधीन सत्ता स्थापित कर ली। मन्दसौर के शिलालेख में जिस कुमारगुप्त का उल्लेख है, उसके समय में बन्धुवर्मा मालवेश बना हुआ था। वि.सं. ५२९ में महासेन के अनन्तर उसका पुत्र देवगुप्त यहाँ का राजा बना। देवगुप्त ने शक्ति संचय कर कन्नौज पर चढ़ाई कर दी थी। वह वहाँ के मौखरी-वंशीय गृहवर्मा को मारकर उसकी स्त्री राज्यश्री को यहाँ कैद करके ले आया था। राज्यश्री थानेश्वर नरेश की बहन थी। उसने देवगुप्त पर चढ़ाई करके उसे परास्त कर दिया और उज्जैन के विशाल वैभव को छीन लिया तथा पुनः राज्यश्री कन्नौज की राजगद्दी पर आसीन हो गई और उज्जैन को अपना प्रान्त बना लिया। कन्नौज के राज्य के अन्त तक उज्जैन उसी के अधिकार में रहा। उसके बाद सिंहवर्मा, नरवर्मा, विश्ववर्मा और बन्धुवर्मा ने क्रमशः यहाँ का शासन संचालित किया। इस समय यहाँ पाशुपताचार्य (लकुलिश पाशुपति) ने बड़े जोरों के साथ अपने पाशुपत मत का कार्य चलाया। उसका स्वतंत्र दर्शन (पाशुपत दर्शन) भी निर्मित है। थोड़े ही समय के बाद शंकराचार्य ने इस मत का खण्डन कर पुनः शैव मत की प्रतिष्ठा की।

उधर कन्नौज का शासन भी कमजोर पड़ चुका था। परिवर्तन क्रम के अनुसार आबू के परमारों ने आक्रमण कर शासन को हस्तगत कर लिया। क्रमशः कृष्णराज, वैरिसिंह सीयकदेव (८७५ ईसवी) आदि यहाँ के शासक हो गये। सिन्धुराज एवं मुंज तक भी अवन्ती को महान् राजनगरी होने का गौरव मिलता रहा। परमार वंश के विश्वविदित कीर्ति विद्वान् नरेश महाराज भोजदेव (१०१० ईसवी) ने राज्यारोहण के पश्चात् शीघ्र ही



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उज्जैन से हटाकर धारा नगरी (वर्तमान धार) में अपनी राजधानी स्थापित की। धार के वैभव-विकास के साथ ही अवन्ती क्षीण होती गई। उज्जैन के बाद सरस्वती और श्री का निकेतन धार ही बन गई थी। भोज के दिवंगत होने के बाद जयसिंह और उदयादित्य (१०५९ ईसवी) शासक हुए। उन्होंने अवन्ती के महाकालेश्वर के उध्वस्त मन्दिर का जीर्णोद्धार करवाया और मालवा के अनेक मन्दिरों और सरों का कलापूर्ण निर्माण करवाया। उदयादित्य का पुत्र लक्ष्मणदेव (१०८६ ई.), उसके बाद नरवर्मदेव (११०४ ई.), यशोवर्मदेव (११३३ ई.), अर्जुनवर्मदेव देवपाल (१२१६ ई.) ने क्रमशः शासन किया। देवपाल के शासनकाल (१२३५ ई.) में मुसलमान आक्रमण होने लगे।

**अल्तमश उज्जैन में :**

दिल्ली के गुलामवंशीय अल्तमश ने मालवा पर हमला किया। उसने मालवा के अनेक मन्दिरों, मठों और मूर्तियों को ध्वस्त कर डाला। कहा जाता है कि उसने महाकाल के मंदिर को भी तहस-नहस किया। इसके बाद लगातार कुछ काल पर्यन्त हमलों का क्रम जारी रहा। १२९० ईसवी तक कोई भी शासन यहाँ जम न सका। १२९१—९३ ई. में अलाउद्दीन खिलजी ने दुबारा अवन्ती पर आक्रमण कर अपना अधिकार जमा लिया।

सन् १३२२ ईसवी में तुगलकों ने यहाँ अपना सूबा कायम किया। १३९० ई. में जब दिल्ली पर तैमूर ने चढ़ाई की, तब अवसर पाकर तुगलकों के सूबा दिलावरखाँ ने यहाँ अपनी सल्तनत स्थापित कर ली और स्वयं को सुलतान घोषित कर दिया। दिलावरखाँ की मृत्यु के बाद उसके लड़के होशंगशाह ने गद्दी पर अधिकार जमाया। १५०१ ईसवी में नासिरुद्दीन खिलजी के आने पर मुहम्मदशाह और बहादुरशाह का मांडव में संघर्ष हुआ और उज्जैन की इस सत्ता की समाप्ति हो गई अभी अकबर का आना शेष ही था। १५६२ ईसवी में उसने आक्रमण कर मालवा पर अधिकार कर लिया। उज्जैन आकर यहाँ के प्राकृतिक सुंदर स्थल कालियादह महल में, जहाँ पुरातन सूर्य मन्दिर को तोड़कर नासिरुद्दीन खिलजी ने यह महल बनवाया था, अपना विश्रान्तिकाल बिताया। जहाँगीर भी महीनों इस महल में आकर रहा था। गुजरात के आक्रमण से लौटकर तथा मथुरा, आगरा से वह उज्जैन में आकर ठहरा। नगर में हाथी पर बैठकर सवारी निकाली तथा अशर्फियाँ लुटवाईं। महल से कुछ दूरी पर ही एकान्त जंगल में उस समय गोस्वामी जदरूप नामक एक सिद्ध सन्त रहते थे। उसने उनके निकट जाकर सत्संग किया और शान्ति प्राप्ति की। इस योगी से जहाँगीर बहुत प्रभावित हुआ था और उसकी प्रसन्नता के लिये अपने शासन को तौल (नाप) भी पलट दी थी। जहाँगीर ने अपनी डायरी (तुजुक जहाँगीरी) में कई पृष्ठों में इसका वर्णन किया।

**राजा जयसिंह उज्जैन में :**

सन् १७२० ई. में मुहम्मदशाह ने उज्जैन को अपना सूबा बनाकर जयपुर नरेश जयसिंह को यहाँ रखा था। महाराज जयसिंह शासक के अतिरिक्त बड़े विद्वान् और ज्योतिषशास्त्र के पंडित थे। उन्होंने जयपुर, दिल्ली,

**शाश्वतवाणी :**

किसी एक संकीर्ण स्थान पर जब हम अपने अहंकार और वासना को केंद्रित करते हैं, तब हम समग्र को क्षति पहुँचाते हैं और अंश को बढ़ा-चढ़ा कर देखने का प्रयत्न करते हैं। यही अमंगल की जड़ है। अंश के प्रति आसक्ति हमें समग्र के विरुद्ध विद्रोह करने के लिये प्रेरित करती है और यही पाप है।—इसीलिये त्याग आवश्यक है। यह त्याग अपने को रिक्त करने के लिये नहीं, अपने को पूर्ण करने के लिये होता है। हमें समग्र के लिये अंश का त्याग करना है, नित्य के लिये क्षणिक का, प्रेम के लिये अहंकार का, आनंद के लिये सुख का त्याग करना है। इसीलिये उपनिषद में कहा गया है—तेन त्यक्तेन भुंजीथाः —त्याग द्वारा भोग करो, आसक्ति के द्वारा नहीं।



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मथुरा, काशी की तरह उज्जैन में भी एक वेधशाला (ऑब्जरवेटरी) का निर्माण करवाया था और अपने नाम पर ही उज्जैन में जयसिंहपुरा नामक एक मोहल्ला बसाया, जो अब भी उनकी स्मृति में प्रसिद्ध है तथा वेधशाला भी बनी हुई है।

जयसिंह की सूबात के समय ही मालवा पर मराठों के आक्रमण आरम्भ हो गये थे। जयसिंह इन आक्रमणों से घबरा गया। आक्रमणों की भीषणता देख जयसिंह के परामर्श से मालवा पेशवों के सुपुर्द कर दिया गया।

**पेशवा का उपहार उज्जैन :**

(१७४३ ई.)। पेशवों ने अपने सरदार सिन्धिया को १७५० ई. में उज्जैन उपहार स्वरूप प्रदान कर दिया। राणोजी सिन्धिया ने अपने इस इलाके की व्यवस्था का भार रामचन्द्रराव शेणबाई को दीवान बनाकर दे दिया। अब अवन्ती में पुनः स्थिरता और शान्ति आ गई। निरन्तर आक्रमणों के कारण उज्जैन के जो स्थान नष्ट-भ्रष्ट हो गये थे, उनका पुनरुद्धार सिन्धिया ने रामचन्द्रराव के तत्त्वावधान में करवाया। महाकालेश्वर मन्दिर तथा अन्य प्रमुख धर्म-स्थानों का निर्माण इसी समय हुआ। तब से यह नगरी सिन्धिया वंश के शासन में रही है। राणोजी ने अपनी राजधानी के लिये उज्जैन को पसन्द किया। आगे चलकर १८१० ई. में महाराजा दौलतराव सिन्धिया ने अपनी राजधानी के लिये (ग्वालियर) को पसन्द किया।

**उज्जैन मध्य भारत में :**

सन् १९४८ में उज्जैन मध्यभारत राज्य का एक अंग बना। सन् १९५६ से राज्य पुनर्गठन के परिणाम-स्वरूप निर्मित मध्यप्रदेश राज्य के उज्जैन ने अपना गौरवशाली स्थान ग्रहण कर लिया है। अवन्तिका के इतिहास-प्रसिद्ध शासक विक्रमादित्य के नाम पर यहाँ एक विश्वविद्यालय की भी स्थापना सन् १९५७ में हो गयी है। इस पवित्र नगरी में महाकवि कालिदास समारोह सन् १९५८ से मनाया जाता है, जिसमें देश-विदेश के विद्वान् सम्मिलित होते हैं।

वर्तमान उज्जैन नगरी नगाधिराज विन्ध्य के मनोरम अंचल में सागर की सतह से १,६७८ फुट की उन्नत भूमि पर उत्तरी अक्षांश २३।५० तथा पूर्वी देशांतर ७५।५० पर पावन सलिला ऐतिहासिक एवं धार्मिक क्षिप्रा नदी के पूर्व तट पर अवस्थित है। यहाँ का जल-वायु अत्यन्त मधुर, समशीतोष्ण है।

उज्जैन की प्रधान बोली मालवी है, जो अवन्ती से उत्पन्न है। हिन्दी और मराठी का यहाँ पर्याप्त प्रचार है। व्यापार-उद्योग इस नगर में विविध है। रुई-कपास का यह केन्द्र है। कपड़ा मिलें, जिनिंग-प्रेस, फैक्टरी, तेल, आटा, कपड़ा, होजियरी आदि बड़े-बड़े कारखाने हैं। अनेक शाला-संस्थाएँ, स्कूल, कॉलेज, वेद, संस्कृत, ज्योतिष, व्याकरण की, सरकारी और स्वतंत्र अध्यापन-संस्थाएँ हैं। साहित्यिक, सार्वजनिक सांस्कृतिक प्रवृत्तियाँ यहाँ जागृत रहती हैं। निरन्तर पर्व-यात्रा के प्रसंगों पर हजारों दर्शनार्थी यात्रियों का देश-विदेश से आवागमन बना रहता है। □

कालियादह महल के सामने ब्रह्म कुंड का दृश्य



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

# प्राचीन उज्जयिनी के कुछ महान् व्यक्ति

□ वृजकिशोर चतुर्वेदी

उज्जयिनी विद्या के केन्द्र के साथ ही साथ धर्म का केन्द्र भी रही है। प्रतिभाशाली कवि, सुलेखकों, तांत्रिक, कापालिक, शान्तिप्रिय तत्व ज्ञानी, चिकित्सक तथा योगियों ने इस भूमि को पावन किया है। कुछ विभूतियों ने तो चुपचाप साधना की है, और कुछ ने अपना जन्म स्थान प्रकट ही नहीं किया। शायद उस समय की यह परम्परा रही हो। ऐसे ज्ञात-अज्ञात प्राचीन उज्जयिनी के कुछ महान् व्यक्तियों का यहाँ जीवन-वृत्त उल्लेख किया जा रहा है।

—सम्पादक

## श्री सान्दीपन मुनि

सान्दीपन मुनि भगवान् कृष्ण और बलराम के गुरु माने जाते हैं। 'सन्दीपन' के पुत्र सान्दीपन थे। जो उज्ज्वल करता है वह 'सन्दीपन' कहाता है (संदीपयति सः सन्दीपनः)। पुराणों में श्रीकृष्ण भगवान् की शिक्षा अवन्तीपुर (उज्जैन) में सान्दीपन मुनि के द्वारा बताई गई है। परन्तु शिक्षा के विषय और वर्णन में कहीं-कहीं भेद है।

श्रीमद्भागवत् में लिखा है कि वसुदेवजी ने अपने पुरोहित गर्गाचार्य तथा अन्य ब्राह्मणों से दोनों पुत्रों का विधिपूर्वक द्विजाति-समुचित यज्ञोपवीत संस्कार करवाया। इसके बाद गुरुकुल में निवास करने की इच्छा से दोनों भाई अवन्ती (उज्जैन) में रहने वाले कंश्यपगोत्री या काशी से आए हुए (काश्य) सान्दीपन नामक आचार्य के पास गए। वे विधिपूर्वक गुरुजी के पास रहने लगे। उस समय वे बड़े ही सुसंयत और अपनी चेष्टाओं को सर्वथा नियमित रखे हुए थे गुरु सेवा का उच्च आदर्श लोगों के सामने रखते हुए बड़ी भक्ति से उन्होंने इष्टदेव के समान गुरुजी की सेवा की। गुरुवर सान्दीपनजी उनकी शुद्ध भावयुक्त सेवा से बहुत प्रसन्न हुए। उन्होंने दोनों भाइयों को छहों अंग और उपनिषदों के सहित सम्पूर्ण वेदों की शिक्षा दी। इसके सिवा मंत्र और देवताओं के ज्ञान के साथ धनुर्वेद, धर्मशास्त्र, मीमांसा और न्याय-शास्त्र की भी शिक्षा दी। साथ ही सन्धि, विग्रह, यान, आसन, द्वैध और आश्रय इन छह भेदों से युक्त राजनीति का भी अध्ययन कराया। भगवान श्रीकृष्ण और बलराम सारी विद्याओं के प्रवर्तक हैं। परन्तु मनुष्य का व्यवहार करते हुए वे अध्ययन कर रहे थे। केवल चौंसठ दिन रात में ही संयमी-शिरोमणि दोनों भाइयों ने चौंसठों कलाओं का ज्ञान प्राप्त कर लिया। इस प्रकार अध्ययन समाप्त होने पर उन्होंने सान्दीपन मुनि से प्रार्थना की कि "आपकी जो इच्छा हो, गुरुदक्षिणा माँग लें।"

सान्दीपन मुनि ने उनकी अद्भुत महिमा और अलौकिक बुद्धि का अनुभव कर लिया था। इसलिए उन्होंने अपनी पत्नी से सलाह करके यह गुरु-दक्षिणा माँगी कि 'प्रभास क्षेत्र में हमारा बालक समुद्र में डूबकर



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मर गया था, उसे तुम लोग ला दो।' बलरामजी और श्रीकृष्ण का पराक्रम अनन्त था। दोनों ही महारथी थे। उन्होंने "बहुत अच्छा" कहकर गुरुजी की आज्ञा स्वीकार की और रथ पर सवार होकर प्रभासक्षेत्र में गए। समुद्र के अन्दर जाकर शंखासुर (पाञ्चजन्य) नामी असुर को मारा और पाञ्चजन्य शंख को लेकर यमराज के यहाँ जाकर गुरुपुत्र लाकर सान्दीपनजी को गुरु-दक्षिणा में दिया। तदनन्तर गुरुजी से आज्ञा और आशीर्वाद लेकर वायु के समान वेग और मेघ के समान रथ पर सवार होकर दोनों भाई मथुरा लौट आए।

उज्जैन में इस शिक्षा का स्मारक सान्दीपन-आश्रम किसी न किसी रूप मे अभी तक मौजूद है; और भगवान् कृष्ण की यह शिक्षास्थली क्षिप्रा नदी के किनारे "अंकपात" के नाम से प्रसिद्ध है।

ब्रह्मपुराण के १९४वें अध्याय में श्रीभागवत् का ही अनुकरण करके कथा में लिखा गया है कि—

विदिताखिलविज्ञानौ सर्वज्ञानमयावपि।
शिष्याचार्यक्रमं वीरौ ख्यापयन्तौ यदूत्तमौ।।१८।।
ततः सान्दीपनिं काश्यमवन्तिपुरवासिनम्।
अस्त्रार्थं जग्मतुर्वीरौ बलदेवजर्नादनौ।।१९।।
तस्य शिष्यत्वमभ्येत्य गुरुवृत्तिपरौ हितौ।
दर्शयाञ्चक्रतुर्वीरावाचारमखिले जने।।२०।।
सरहस्यं धनुर्वेदं ससंग्रहमधीयताम्।
अहोरात्रैश्चतुःषष्ट्या तदद्भुतमभूद् द्विजाः।।२१।।

यहाँ 'काश्यप' न लिखा जाकर 'काश्यं' लिखा गया है। सम्भव है सान्दीपनजी 'काशी' से उठकर अवन्ती में बस गए हों। किसी-किसी प्रति में 'शिक्षार्थं', किसी-किसी में "शस्त्रार्थं" भी मिलता है परन्तु अधिकतर प्रतियों में "अस्त्रार्थं" बताया जाता है। इसीलिए 'आनन्दाश्रम एडीशन' १८९५ में 'अस्त्रार्थं' ही लिखा है।

अग्निपुराण में एक सूक्ष्म संकेत मिलता है और वहाँ उज्जयिनी में शिक्षा ग्रहण करने का उल्लेख नहीं है। बस, इतना ही लिखा है कि :

सान्दीपनेश्च शस्त्रास्त्रं ज्ञात्वा तद्बालकं ददौ।। (अध्याय १३)

ब्रह्मवैवर्तपुराण में सान्दीपनजी को "ब्राह्मांशो योगिनां ज्ञानिनां गुरुः" लिखा है। यज्ञोपवीत कुलपुरोहित गर्गजी ने कराया था परन्तु इस पुराण में लिखा है कि बहुत से देवता और ब्राह्मण उपस्थित थे और सान्दीपनजी भी वहीं थे। बाद मे कृष्ण भगवान् उज्जैन गए और चारों वेदों को एक मास में ही पढ़ लिया। गुरु-दक्षिणा में गुरुपुत्र को देने के अनन्तर भगवान् कृष्ण ने अपने गुरु और गुरुपत्नी को कई लाख रत्न, मणि, हीरा, मुक्ता माणिक्य दिए और वस्त्र, हार, अँगूठी और सुवर्ण से उनका घर भर दिया। थोड़े काल के अनन्तर, सारी सम्पत्ति अपने पुत्र को देकर सान्दीपनजी और उनकी पत्नी ने गोलोक को प्रयाण किया।

अवन्ती को 'सान्दीपन के आश्रम' ने एक ऐसा ऊँचा स्थान प्रदान किया है कि जो शिक्षा और साहित्य के इतिहास में चिरस्मरणीय रहेगा।

## महारासायनिक व्याडि

'कथासरित्सागर' के अनुसार महाराज विक्रमादित्य के समय में एक बड़ा रसायनशास्त्रज्ञ व्याडि, उज्जैन नगर में रहता था। अलबेरूनी ने अपनी प्रसिद्ध यात्रा में इस व्याडि रासायनज्ञ की जीवनी की चर्चा की है। व्याडि ने 'भेषज-संस्कार' ग्रंथ लिखा था परन्तु आर्थिक अवस्था के कारण उसे निराशा हुई और नदी में फेंक दिया। वहाँ से एक वैश्या ने उठा लिया और व्याडि की कल्पनासिद्धि के लिए उसे बहुत सा रुपया दिया जिसके द्वारा बुहत सी औषधियाँ तैयार हो पाईं। अलबेरूनी ने लिखा है कि एक क्वाथ ऐसा तैयार किया गया था कि शरीर पर मल लेने पर व्याडि और उसकी स्त्री दोनों वायु में उड़ने लगते थे। यह हाल विक्रमादित्य ने स्वयं अपनी आँखों से देखा था। अलबेरूनी के समय यह विश्वास किया जाता था कि व्याडि और उसकी स्त्री दोनों जीवित हैं।

राजशेखर ने 'काव्यमीमांसा' में लिखा है कि शास्त्रकारों की परीक्षा पाटलिपुत्र में होती थी और पाणिनी, पिंगल, व्याडि, वररुचि और पतञ्जलि ने पाटलिपुत्र में ही परीक्षा दी थी। व्याडि का 'संग्रह' प्रसिद्ध है और



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

महर्षि पतञ्जलि और भर्तृहरि ने इस संग्रह से कई उद्धरण दिए हैं। नागेश ने 'उद्योत' में ('महाभाष्य' पर 'कैयट' की समालोचना पर अपनी आलोचना में) व्याडि के विषय में लिखा है कि व्याडि के 'संग्रह' के एक लाख श्लोक प्रसिद्ध हैं। सम्भव है कि साहित्यिक व्याडि और वैज्ञानिक व्याडि एक ही हों। व्याडि के 'उत्पलिनी' नामक कोषग्रंथ से भी उद्धरण कहीं-कहीं मिलते हैं।

'शब्दकल्पद्रुम' में व्याडि को कोषकार बताया गया है। 'रसरत्नसमुच्चय' में व्याडि को रसविद्या का आचार्य बताया गया है। हेमचन्द्र ने व्याडि को विन्ध्यवासी और नन्दिनीतनय बताया है। दक्ष की सबसे बड़ी कन्या दाक्षी के पुत्र पाणिनि बताए जाते हैं और दक्ष के सबसे छोटे पुत्र के प्रपौत्र व्याडि बताए जाते हैं। पतञ्जलि ने लिखा है—

अपिशल-पाणिनीय-व्याड़ीय-गोतमीयाः।

डॉक्टर गिरीन्द्रनाथ मुकर्जी भिषगाचार्य ने 'भारतीय औषधि के इतिहास' में 'व्याडि' को (chemistry of gems) रत्नों के रसायनशास्त्र पर प्रामाणिक माना है, और लिखा है कि रामराजा के 'रसरत्नप्रदीप' में व्याडि के कई उद्धरण मिलते हैं। आचार्य सर प्रफुल्लचन्द्र राय ने अपने 'हिन्दू कैमिस्ट्री के इतिहास' में 'रसराजलक्ष्मी' में व्याडि की प्रशंसा बताई है और 'व्याडि' के विषय में गरुड़पुराण का यह श्लोक प्रसिद्ध बतलाया है :

व्याडिर्जगाद जगतां हि महाप्रभावः सिद्धो विदग्धहिततत्परया दयालुः।।

## भर्तृमेण्ठ

राजशेखर ने 'काव्यमीमांसा' में लिखा है कि मेण्ठ ने काव्यकार की परीक्षा उज्जयिनी में उत्तीर्ण की थी। राजशेखर ने अपने आपको भर्तृमेण्ठ का ही अवतार माना है। अपने 'बालरामायण' में लिखा है :

बभूव वल्मीकभवः पुरा कविस्ततः प्रपेदे भुवि भर्तृमेण्ठताम्।
स्थितः पुनर्यो भवभूतिरेखया स वर्त्तते सम्प्रति राजशेखरः।।

'सूक्तिमुक्तावली' में लिखा है :

वक्रोक्त्या मेण्ठराजस्य वहन्त्या सृणिरूपताम्। आविद्धा इव धुन्वन्ति मूर्धानं कविकुञ्जराः।।

'उदयसुन्दरीकथा' में बताया है—

स कश्चिदालेख्यकरः कवित्वे प्रसिद्धनामा भुवि भर्तृमेण्ठः।
रसप्लवेऽपि स्फुरति प्रकामं वर्णेषु यस्योज्ज्वलता तथैव।।

मेण्ठ को हस्तिपक भी कहते हैं। कल्हण ने 'राजतरंगिणी' में लिखा है कि राजा मातृगुप्त ने मेण्ठ के 'हयग्रीववध' को बहुत ही सुन्दर काव्य बतलाया और जब पुस्तक की जिल्द बँध रही थी तब यह विचार कर कि कहीं इसका "रस" चला न जाए, पुस्तक के नीचे रखने को एक सुवर्ण की थाली दी थी।

राजशेखर के अनुसार बाल्मीकि ही ने मेण्ठ होकर जन्म लिया था। फिर मेण्ठ भवभूति हुए और भवभूति ही राजशेखर हुए।

मंख कवि ने मेण्ठ को सुबन्धु, बाण और भारवि की श्रेणी में रखा है।

डॉक्टर ए. बैरीडेल कीथ की राय में ईसा की छठी शताब्दी के उत्तरार्ध में मेण्ठ का होना सही प्रतीत होता है।

'शारंगधरपद्धति' में विक्रम और भर्तृमेण्ठ की सम्मिलित सूक्तियाँ उद्धृत की हुई मिलती हैं। 'राजतरंगिणी' में विक्रम, भर्तृमेण्ठ और मातृगुप्त (कालिदास) को मित्र बताया है।

## मत्स्येन्द्रनाथ

उज्जैन में क्षिप्रा के किनारे भर्तृहरि गुफा के पास और महाकाली (गढ़ कालिका) के मन्दिर से थोड़ी दूर पीर मछन्दरनाथ का बड़ा रमणीय स्थान है।

यह 'नाथ' सम्प्रदाय के प्रवर्तक हैं। 'स्कन्दपुराण' नागरखण्ड, 'नारदपुराण' उत्तरभाग, 'शंकरदिग्विजय', 'ज्ञानेश्वर चरित्र', 'नाथलीलामृत', 'भक्तिविजय' और कल्याण के 'संत-अंक' में मत्स्येन्द्रनाथ की कथाएँ दी गई हैं।

कहा जाता है कि एक मछली के पेट से इनका जन्म हुआ था। पूर्व-पुण्य के कारण इन्हें शीघ्र की सिद्धि प्राप्त हो गई थी। इनको मत्स्यनाथ, मीननाथ, सिद्धिनाथ आदि भी कहते हैं। आपकी उत्कृष्ट योग रचना 'मत्स्येन्द्रसंहिता' के नाम से प्रसिद्ध है।



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वे आदिनाथ शंकर के शिष्य तथा गोरखनाथ के गुरु थे। प्रसिद्ध है कि—

आदिनाथो गुरुर्यस्य गोरक्षस्य च यो गुरुः।
मत्स्येन्द्रं तमहं वन्दे महासिद्धं जगद्गुरुम्।।

कहा जाता है कि एक बार अपना शरीर छोड़ सिंहल द्वीप के राजा के शरीर में प्रवेश किया। शरीर की रक्षा का भार गोरखनाथ के ऊपर था। खोज करते-करते गोरखनाथ सिंहल द्वीप में गए और गुरु के हृदय में स्मृति जगाने के निमित्त तबला बजाते थे जिसमें से "जाग मछन्दर गोरख आया" की स्पष्ट ध्वनि निकलती थी। होश आने पर वे पूर्व शरीर में लौट आए।

ये 'काव्य-व्यूह' की रचना करते हुए एक काया से लीला दिखाते थे और दूसरे में 'भँवरगुफा' में बैठकर निर्विकल्प समाधि में लीन होते थे। समस्त उत्तर-भारत में और महाराष्ट्र में इनके नाम से सम्बद्ध स्थान पाए जाते हैं।

## राजा साहसांक

राजशेखर ने अपनी 'काव्य-मीमांसा' में साहसांक नाम के आदर्श साहित्य प्रेमी उज्जैन के राजा का उल्लेख किया है। राजा साहसांक ने अपने अन्तःपुर और राज-प्रासाद में संस्कृत भाषा के सिवाय दूसरी भाषा बोलने का निषेध कर दिया था और 'ट, ठ, ड, ढ, और 'ष' का प्रयोग भी रोक दिया था। उनके राज्यकाल में उज्जयिनी में कोमलकान्त पदावली और संस्कृत भाषा कितनी फली-फूली होगी, इसकी कल्पना नहीं की जा सकती। जहाँ राजा के चोबदार और द्वारपाल भी संस्कृत के प्रकाण्ड पंडित थें वहाँ अवश्य ही साहित्य भी बहुत ही ऊँची श्रेणी का रहा होगा।

वासुदेव, शूद्रक, सातवाहन और साहसांक इन चार राजाओं के राज्यपाल में कवियों का बड़ा सम्मान रहा था।

राजशेखर के अनुसार यह राजा लोग ब्रह्मसभा (रुचि दरबार) में सभापति रहते थे और कवियों को दान देकर मान बढ़ाते थे। राजशेखर ने लिखा है कि ब्रह्म सभाओं में काव्य परीक्षा होनी चाहिए और परीक्षोत्तीर्ण का रथ में बैठाकर जलूस निकाला जाए और पट्टबन्ध होना चाहिए। साहसांक के काल में, एवं उज्जयिनी में प्राचीन काल में सदा ऐसी ही काव्यकार की परीक्षा होती आई है यह 'काव्य मीमांसा' से विदित होता है।

सूक्तिमुक्तावली में राजा साहसांक के विषय में लिखा है :

शूरः शास्त्रविधेर्ज्ञाता साहसांकः स भूपतिः।
सेव्यं सकललोकस्य विदधे गन्धमादनः।।

'सरस्वतीकंठाभरण' में लिखा है—

केऽभूवन्नाढ्यराजस्य राज्ये प्राकृतभाषिणः।
काले श्रीसाहसांकस्य के न संस्कृतवादिनः।।

'इण्डियन कल्चर' के आक्टोबर १९३९ में श्री एस.के. दीक्षित महोदय ने साहसांक सम्बन्धी लेख में दो शिलालेखों का पता दिया है—

(१) महोबादुर्ग का शिलालेख जिसमें लिखा है—
व्योमार्कार्णवसङ्ख्याते साहसांकस्य वत्सरे।

(२) रोहतासगढ़-शैल का लेख जिसमें लिखा है—
नवभिरथ मुनीन्द्रैर्वासराणामधीशैः परिकलयति सङ्ख्यां वत्सरे साहसांके।।

'प्रबन्धचिन्तामणि' के प्रथम प्रबन्ध के प्रारम्भ में "विक्रमार्कः" की प्रशंसा है। अन्त में 'साहसांक' की प्रशंसा इन शब्दों में है :

वन्यो हस्ती स्फटिकघटिते भित्तिभागे स्वबिम्बं दृष्ट्वा
दूरात्प्रगतिगज इति त्वद्द्विषां मन्दिरेषु।
हत्वा कोपाद् गलितरदनस्तं पुनर्वीक्ष्यमाणो मन्दं मन्दं स्पृशति
करिणीशंकया साहसांकः।।

जैन ग्रंथों में विक्रमार्क और साहसांक इस प्रकार एक ही माने गए हैं।

'अमरकोष' की टीका में क्षीरस्वामी ने साहसांक को विक्रमादित्य चन्द्रगुप्त का पर्यायवाची शब्द बतलाया है यथा—

विक्रमादित्यः साहसांकः शकान्तकः।
शूद्रकस्त्वग्निमित्रो वा हालः स्यात्सातवाहनः।

चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य ही 'साहसांक' थे, ऐसा म



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विद्वानों का है। प्रमाण में वे 'देवीचन्द्रगुप्त नाटक', अबुल हसनअली का 'मजमल-उल-तवारीख (१०२६ ईसवी); सज्जन ताम्रपत्र; और गोविंद चतुर्थ राष्ट्रकूट की प्रशंसा में सांगली और कैम्बे में निकले कुछ शिलालेख बतलाते हैं।

ये प्रमाण बहुत अंशों में कल्पना को सही बतलाते हैं परन्तु यह नहीं है कि ये प्रमाण निर्विवाद ही हों। सम्भव है कि साहसांक कोई दूसरे विक्रमादित्य हो।

## मयूरकवि

मयूर का अवन्ती में शंकर से शास्त्रार्थ में परास्त होना 'शंकरदिग्विजय' में लिखा हुआ है। यह बाणभट्ट के श्वशुर व उनके व मातंग दिवाकर के समकालीन बताए जाते हैं। इन्होंने अपनी लड़की या बहिन के ऊपर कुछ कविता बनाई थी जिससे क्रुद्ध होकर उसने इनको शाप दिया कि तुम कोढ़ी हो जाओ। कुष्ठ होने पर इन्होंने सूर्याष्टक बनाकर सूर्य की प्रार्थना करके शाप से मुक्ति पाई। पद्मगुप्त के 'नवसाहसांकचरित' में बाण और मयूर की प्रतिद्वन्द्विता का वर्णन किया है।

'प्रबन्धचिन्तामणि' व अन्य ग्रंथों में लिखा है कि मयूर की बहिन बाणभट्ट को ब्याही थी जिसने मयूर को शाप दिया था। मेरुतुंगाचार्य के कथनानुसार राजा भोज की राजसभा में बाण और मयूर रहे थे। दूसरे ग्रंथ इनको राजा हर्षवर्धन की राजसभा में होना मानते हैं।

इनका 'मयूराष्टक' प्रसिद्ध है। इनके काव्य की भाषा दुरूह व जटिल है, परन्तु इनमें प्रतिभा पर्याप्त मात्रा में पाई जाती है।

## बाणभट्ट

श्री माधवाचार्य के 'शंकरदिग्विजय' में लिखा है कि अवन्ति-देश के प्रसिद्ध विद्वान् बाण, मयूर और दण्डी को भी शंकराचार्य ने, भट्ट भास्कर के अनन्तर, शास्त्रार्थ में परास्त किया और अपने भाष्य के सुनने के लिए उत्सुक बना दिया।

दाक्षिणात्य विद्वानों में शंकराचार्य के अनन्तर तत्सदृश माधवाचार्य ही माने जाते हैं। यह सायण के भाई थे। दोनों भाई विजयनगर के वुक्क और हरिहरराय के सभा पण्डित और मंत्री थे। विजयनगर की पुस्तकालय उन दिनों बहुत प्रसिद्ध था। 'शंकरदिग्विजय' प्राचीन पुस्तकों के आधार पर ही लिखी गई होगी और बिना प्रमाण के बाण, मयूर, दण्डी का अवन्ती में होना नहीं लिखा गया होगा ऐसा हमारा विचार है।

स कथाभिरवन्तिषुप्रसिद्धान् विबुधान् बाण-मयूर-दण्डिमुख्यान्
शिथिलीकृतदुर्मताभिमानान्निजभाष्यश्रवणोत्सुकांश्चकार।।

शिथिलीकृतदुर्मताभिमानान्निजभाष्यश्रवणोत्सुकांश्चकार।।

'हर्षचरित' के अनुसार बाणभट्ट वात्सायन वंश में जन्मे थे। उनके पूर्वज सोन नदी के किनारे प्रीतिकूट ग्राम में रहते थे। उनके पिता चित्रभानु थे, माता का नाम राज्यदेवी था। माता का बचपन में ही देहान्त हो गया था। पिता भी १४ वर्ष की अवस्था में चल बसे थे। इसलिए लालन पालन भली प्रकार नहीं हुआ था। बचपन में ही देशाटन को चल पड़े और नाना प्रकार के अनुभव प्राप्त किए थे जिससे बुद्धिविकास और सांसारिक अनुभव हुआ। इसके अनन्तर महाराज हर्षवर्धन ने उनको बुलाया। पहले तो उनका विशेष सत्कार नहीं हुआ पर बाद में उनको अपने आश्रय में रख लिया।

'हर्षचरित', 'कादम्बरी', 'चंडिकाशतक', 'पार्वतीपरिणय', 'मुकुटताडित नाटक' ये ग्रंथ बाण के बताए जाते हैं। 'हर्षचरित' और 'कादम्बरी' दोनों अपूर्ण हैं। 'कादम्बरी' को बाणभट्ट के पुत्र भूषणभट्ट या पुलिनभट्ट ने पूर्ण किया था। ऐसा प्रतीत होता है कि साहित्य को त्यागकर, वृद्धावस्था में, बाण की रुचि योग या वैराग्य की तरफ हुई होगी और वे अवन्ती में चले आए होंगे।

'कादम्बरी' गद्यकाव्य का उत्कृष्ट उदाहरण है। लम्बे-लम्बे समास, कठिन-कठिन वाक्य, विशेषणों और अलंकारों की भरमार से कहीं-कहीं जटिलता बढ़ गई है। लालित्य और सरसता होते हुए भी, कथानक बड़ा जटिल है। वैबर ने लिखा है कि पृष्ठ-पर-पृष्ठ पढ़ने पर भी एक ही क्रिया मिलती है परन्तु हर पृष्ठ पर अलंकारिक भाषा, दुरूह समास और विशेषणों की इतनी



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भरमार है कि यह प्रतीत होता है कि एक ऐसे घने जंगल में चल रहे हैं जहाँ बिना अपने हाथ से जंगल काटे आगे बढ़ना असंभव है और फिर भी इस बात का भय बना रहता है कि आगे कोई अज्ञात भयानक शब्द सहसा न आ जाय।

डॉक्टर कीथ और काले ने इस आलोचना को सही बतलाया है।

बाणभट्ट को उज्जयिनी से बड़ा प्रेम प्रतीत होता है। कादम्बरी में पृष्ठ-के-पृष्ठ उज्जयिनी की प्रशंसा में लिखे गए हैं जिससे ज्ञात होता है कि इस नगरी में उनका निवास बहुत वर्षों तक रहा था।

'कादम्बरी' में आया उज्जयिनी नगरी का वर्णन बाण के उज्जयिनी-प्रेम के अतिरिक्त उस समय में उज्जयिनी नगरी की वास्तविक अवस्था का भी परिचायक है।

## भट्ट भास्कर

आदि गुरु शंकराचार्य के समकालीन उज्जयिनी में भट्ट भास्कर थे जिनके लिए 'शंकरदिग्विजय' में लिखा है कि वे ब्राह्मणवंश के अवतंश थे और उन्होंने सब वेद-मंत्रों की व्याख्या लिखी है। माधवाचार्य ने लिखा है कि—

अभिरूपकुलावतंसभूतं बहुधा व्याकृतसर्ववेदराशिम्।।

भट्ट भास्कर को भी अपनी विद्या पर अभिमान था और शास्त्रार्थ के पूर्व, 'शंकरदिग्विजय' में लिखा है कि उन्होंने स्वयं अपने लिए यह कहा कि "सूक्तियाँ जब मेरे मुँह से निकलती हैं तब कणाद की कल्पना क्षुद्र मालूम होती है और कपिल का प्रलाप भाग खड़ा होता है। जब प्राचीन आचार्यों की यह दशा है तब आजकल के विद्वानों की गणना ही क्या है?"

इस कथन में सत्य का बहुत अंश था, इसका पता शंकर और भट्ट भास्कर के उज्जयिनी में किए हुए शास्त्रार्थ और युक्तियों का पठन करने से भलीभाँति चलता है।

अन्त में शंकराचार्य की विजय हुई परन्तु इस विजय के समय भी, 'शंकरदिग्विजय' में, भट्ट भास्कर की विद्वत्ता को स्वीकृत किया गया। अन्तिम श्लोक है—

इति युक्तिशतैरमर्त्यकीर्त्तिः सुमतीन्द्रं तमतन्द्रितं स जित्वा।
श्रुतिभावविरोधिभावभाजं विमतग्रंथममन्थरं ममन्थ।।

(इस प्रकार अनेक सूक्तियों से अमरकीर्ति शंकर ने उस उद्योगशील पंडित श्रेष्ठ भट्ट भास्कर को जीतकर श्रुतिभाव के विरुद्ध अभिप्राय को प्रकट करने वाले उनके ग्रंथ का शीघ्र खण्डन किया।)

यह ग्रंथ भेदाभेद मत का प्रतिपादक था।

## हरिचन्द्र भट्टारक

राजशेखर ने लिखा है कि उज्जयिनी में काव्यकार-परीक्षा में हरिश्चन्द्र और चन्द्रगुप्त भी परीक्षित हुए थे। विद्वानों की कल्पना है कि हरिचन्द्र तो भट्टारक हरिचन्द्र हैं और चन्द्रगुप्त साहसांक विक्रमादित्य हैं। गुप्त शिलालेखों में भट्टारक पद का बहुत प्रयोग हुआ है, और 'विश्वप्रकाशकोश' में लिखा है कि भट्टारक पद राजा के लिए भी प्रयुक्त होता है। इसलिए श्रीयुत भगवद्दत्तजी अपने 'भारतवर्ष के इतिहास' में लिखा है कि भट्टारक हरिश्चनन्द्र, चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य का भाई या निकटतम सम्बन्धी रहा होगा।

बाणभट्ट ने इन्हीं हरिचन्द्र भट्टारक के एक गद्य-ग्रंथ का स्मरण करते हुए लिखा है—

भट्टारहरिचन्द्रस्य गद्यबन्धो नृपायते।

भट्टारक हरिचन्द्र की 'चरकटीका' का कुछ भाग अब भी प्राप्त है और आयुर्वेद ग्रंथों में हरिचन्द्र की 'चरकव्याख्या' के उद्धरण बहुत मिलते हैं। 'अष्टांगसंग्रह' की व्याख्या में इन्दु ने भट्टारक हरिचन्द्र को एक 'खरणाद संहिता' का कर्त्ता भी बतलाया है।

महेश्वर ने शक १०३३ में अपने 'विश्वप्रकाशकोश' की भूमिका में कन्नौज के राजा के वैद्य श्रीकृष्ण को हरिचन्द्र के कुल में पैदा हुआ बतलाया है। और इस कुल को अनेक राजाओं से वन्दनीय कुल ("आसीदसीम-वसुधाधिप-वन्दनीये") बतलाया है यह भी लिखा है कि चरक व्याख्याकार हरिचन्द्र श्रीसाहसांक राजा का ही वैद्य था।



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

श्रीसाहसांकनृपतेरनवद्यवैद्य विद्यातरंगपदद्वयमेव बिभ्रत्।
यश्चन्द्रचारुचरितो हरिचन्द्रनामा स्वव्याख्याय चरकतन्त्रमलञ्चकार।।

इस प्रकार वैद्यवर हरिचन्द्र भट्टारक का परीक्षा स्थान ही नहीं, बहुत काल तक निवास स्थान भी राजा साहसांक की उज्जयिनी रहा है। विल्सन का यह लिखना सही नहीं है कि साहसांक १११९ ई. में गाजीपुर में राजा था जिसके यहाँ महेश्वर वैद्य था। वास्तव में उपर्युक्त श्लोक में हरिचन्द्र भट्टारक की ही प्रशंसा है कि वह सम्राट् साहसांक के यहाँ वैद्य था और श्रीकृष्ण और महेश्वर उसी के बड़े कुल में जन्मे थे।

कहा जाता है कि बिना हरिचन्द्र की व्याख्या के चरकसंहिता का समझना अत्यन्त कठिन है। श्लोक प्रसिद्ध है—

हरिश्चन्द्रकृतां व्याख्यां बिना चरकसंमतम्।
यस्तृणोत्यकृतप्रज्ञः पातुमीहति सोऽम्बुधिम्।।

## आर्यसूर

राजशेखर ने सूर का नाम उन आठ महाव्यक्तियों में लिखा है कि जिन्होंने उज्जयिनी में शिक्षा प्राप्त करके काव्यकार की परीक्षा उत्तीर्ण की थी। विद्वानों का मत है कि यह सूर बौद्ध कवि आर्यसूर हैं। आर्यसूर की 'जातकमाला' प्रसिद्ध है और चीनी यात्री ईत्सिंग ने लिखा है कि मठों में और चैत्यों में विद्यार्थीगण और भिक्षु लोग 'जातकमाला' का बड़ी श्रद्धा के साथ अध्ययन करते थे।

ईत्सिंग के अनुसार 'जातक' का अर्थ है 'पूर्व जन्म' और 'माला' हार को कहते हैं। जातकमाला में बोधिसत्वों के पूर्वजन्मों में किए कठिन कार्यों की कथाएँ एक सूत्र में पिरोई गई हैं। 'जातकमाला' बड़े मधुर संस्कृत काव्य में है जिससे पता चलता है कि अश्वघोष की तरह आर्यसूर भी पाली छोड़कर संस्कृत काव्यधारा के प्रेमी थे। इससे यह भी पता चलता है कि प्रसिद्ध विद्वान् लोग उस समय पाली का सहारा छोड़कर राज्यदरबार व साहित्यिकों की रुचि देखकर संस्कृत को ही अपना रहे थे। 'जातकमाला' के कई श्लोकों को लेकर अजन्ता की गुफा में कई चित्र भी बनाए गए हैं जिससे ज्ञात होता है कि 'अजन्ता' गुफा की चित्रकला के पूर्व आर्यसूर की 'जातकमाला' अत्यन्त प्रसिद्धि पा चुकी थी। आर्यसूर का एक अन्य ग्रंथ ईसवी सन् ४३४ में चीनी भाषा में अनुवादित हुआ था। इसलिए इस समय से बहुत पहिले आर्यसूर का प्रादुर्भाव हुआ होगा।

आर्यसूर के गद्य और पद्य दोनों प्राञ्जल और मधुर हैं। उनका काव्य सुन्दर कला का एक उत्कृष्ट उदाहरण है। उनका छन्द ज्ञान बहुत ऊँचा और भाषा दूषण रहित है। बड़े-बड़े समास, विशेष करके गद्य में, जातकमाला में अवश्य आते हैं परन्तु वे कृत्रिम न होकर स्वतः आते चले जाते हैं और उनसे भाषा की सरसता और सुन्दर प्रवाह में बाधा नहीं पड़ती। संस्कृत साहित्य के इतिहास में 'जातकमाला' का एक अद्वितीय स्थान है।

## महाकवि धनपाल

श्री मेरुतुंगाचार्य के 'प्रबन्धचिन्तामणि' में महाकवि धनपाल का जीवन-चरित दिया हुआ है। लिखा है कि संकाश्य गोत्रीय सर्वदेव नामक ब्राह्मण उज्जयिनी में रहा करता था। उसके दो पुत्र थे, धनपाल और शोभन। सर्वदेव की आस्था जैनधर्म पर थी और श्रीवर्धमान सूरि के कहने के अनुसार शोभन ने जैनधर्म में दीक्षा ले ली। धनपाल जैनियों का विरोधी रहा। उज्जयिनी में समस्त विद्याध्ययन करने के अनन्तर वह भोज की पंडित मंडली में सुप्रतिष्ठित हुआ और उसने बारह वर्ष उस देश में जैन दार्शनिकों के आगमन को निषिद्ध कराया। बाद में शोभन के संसर्ग से धनपाल भी जैनधर्म में सत्य देखने लगा। बुद्धिमान तो था ही, अतएव कर्मप्रकृति प्रभृति जैन विचार-ग्रंथों में भी वह बड़ा प्रवीण हुआ।

धनपाल के कई वाक्य-चातुरी और काव्य-चातुरी के उदाहरण 'प्रबन्ध चिन्तामणि' में मिलते हैं। धनपाल की प्रेरणा से राजा ने मृगया (शिकार) और जीवों की हत्या का त्याग किया। एक दिन, यज्ञ-मण्डप में यज्ञ-स्तंभ से बँधे हुए बकरे की मुक्ति कराई।



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

## आचार्य दण्डी

जिस प्रकार कालिदास की 'उपमा' प्रसिद्ध है उसी प्रकार दण्डी का 'पद-लालित्य' भी प्रसिद्ध है। श्री माधवाचार्य के 'शंकरदिग्विजय' में लिखा है कि शंकर ने अवन्तिका में दण्डी को भी शास्त्रार्थ में परास्त किया था। दण्डी के समय का पता नहीं चलता परन्तु इनको भामह (७०० ई.) का पूर्ववर्ती सिद्ध किया जाता है। दण्डी ने अपने तीन ग्रंथ बताए हैं, जिनमें से दो ही प्रसिद्ध हैं। प्रथम 'दशकुमारचरित' और द्वितीय है 'काव्यादर्श'। तीसरे ग्रंथ का पूर्ण पता नहीं चलता।

'दशकुमारचरित' में दश राजकुमारों के प्रेम-परिणय का वर्णन है। गुणाढ्य की 'बृहत्कथा' की तरह ही एक कथा में दूसरी कथा की गुत्थी उलझी हुई प्रतीत होती है। 'दशकुमारचरित' में वर्णित देशों के नाम व भूगोल से यह पता चलता है कि वे नाम हर्षवर्धन के साम्राज्य के पहिले के हैं। भाषा की सादगी के कारण 'दशकुमारचरित' बाणभट्ट और सुबन्धु के पूर्व लिखित बताया जाता है।

'दशकुमारचरित' में किसी शैली की व्यवस्था नहीं है परन्तु जहाँ कहीं किसी का वर्णन किया गया है वह अद्वितीय है। साहसी कार्य और निम्नकोटि के जीवन का दिग्दर्शन उत्तम रीति से कराया गया है। जादूगर और पाखंडी, चोरशास्त्र के विशेषज्ञ, प्रेमी और प्रेमिकाओं का वर्णन यत्र-तत्र किया गया है। अपहारवर्मन चोरों का राजा है। कर्णीसुत चोरशास्त्र का आचार्य और ग्रंथकार है। कर्णीसुत के शास्त्र के अनुसार एक नगर को लूटने के लिए अपहारवर्मन प्रबन्ध करता है। कारण केवल मात्र यह है कि एक वैश्या से एक अभागा पुरुष लूट लिया गया था और नगर में बहुत से कंजूस बसते थे। धर्म के सिद्धान्त जो कुछ बताए गए हैं वे निम्न प्रकार के हैं। धार्मिक ब्राह्मणों पर व्यंग्य की बौछारें हैं, एक दिगम्बर जैन साधु का उपहास किया गया है और एक बौद्ध भिक्षुणी कुट्टिनी के कार्य में दक्ष बताई गई है।

ऐसा प्रतीत होता है कि धार्मिक संघों में दण्डी के समय में अधर्म बढ़ चुका था और ग्रंथकार ने जो कुछ देखा उसको किसी न किसी बहाने इस ग्रंथ में वर्णन कर दिया। यह नीतिसार का ग्रंथ बताया जाता है परन्तु कथा ऊँची नहीं है और न उनसे किसी ऊँचे सिद्धान्तों का प्रतिपादन होता है।

'काव्यादर्श' एक बहुत ऊँचा ग्रंथ है और इसीलिए समालोचकों ने यह शंका प्रकट की है कि 'काव्यादर्श' के ऊँचे ग्रंथ का रचयिता 'दशकुमारचरित' सरीखा साधारण ग्रंथ शायद न लिखेगा। शंका का समाधान यह बताया जाता है कि 'दशकुमारचरित' अल्प अवस्था में लिखा गया और काव्यादर्श शायद परिपक्वावस्था में रचा गया था। वास्तव में 'काव्यादर्श' से ही दण्डी को साहित्य में बहुत ऊँचा स्थान मिला है।

श्री कन्हैयालालजी पोद्दार ने लिखा है कि दण्डी का समय सम्भवतः ईसा की सप्तम शताब्दी का अन्तिमचरण है। 'अवन्तिसुन्दरीकथा' अभी मद्रास से मुद्रित हुई है जिसके आधार पर लिखा है कि आचार्य दण्डी सुप्रसिद्ध 'किरातार्जुनीय' महाकाव्य के प्रणेता कवि भारवि के प्रपौत्र थे। 'इण्डियन हिस्टॉरिकल क्वार्टर्ली' की तीसरी जिल्द में श्रीयुत् हरिहर शास्त्री ने इस मुद्रित पुस्तिका को अशुद्ध बतलाया है और इसलिए इसके आधार पर कोई निश्चित बात नहीं कही जा सकती। एक प्राचीनश्लोक में लिखा है—

जाते जगति वाल्मीकौ कविरित्यभिधाऽभवत्।
कवि इति ततो व्यासे कवयस्त्वयि दण्डिनि।।

जगत में पहिला कवि वाल्मीकि हुआ, दूसरा व्यास और तीसरा दण्डी।

## सुबन्धु

सुबन्धु महाराजा विक्रमादित्य के समकालीन और वररुचि के भानजे (भागिनेय) थे। सुबन्धु ने 'वासवदत्ता' नाम की कथा गद्यकाव्य में लिखी है। बाणभट्ट ने इस 'वासवदत्ता' की 'हर्षचरित' में प्रशंसा की है। यह 'वासवदत्ता' चण्डप्रद्येत की कन्या नहीं है; परन्तु एक दूसरे राजा श्रृंगारशेखर की कन्या है। राजा चिन्तामणि के पुत्र कन्दर्पकेतु उसके सौन्दर्य की प्रशंसा सुनकर प्रेम में पड़ जाते हैं और घूमते-घूमते वासवदत्ता को खोज



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

लेते हैं और तदनतर ब्याह हो जाता है। कथा कोई बड़ी नहीं है; कथानक भी साधारण है। परन्तु काव्य में प्रतिभा अवश्य है। वाक्पति राज के 'गौडावह' में सुबन्धु को भास, कालिदास और हरिचन्द्र की श्रेणी में बताया है। मंख के 'श्रीक्णठचरित' में सुबन्धु को भर्तृमेण्ठ, भारवि और बाणभट्ट की श्रेणी में बताया है। 'राघवपांडवीय' में कविराज, बाणभट्ट और सुबन्धु को श्लेष कविता का आचार्य बताया है। बाणभट्ट ने यहाँ तक लिखा है कि 'वासवदत्ता' से कवियों का दर्प जाता रहा—

कवीनामगलद्दर्पो नूनं वासवदत्तया।

'वासवदत्ता' से ज्ञात होता है कि उस समय बौद्ध और ब्राह्मण विद्वानों के परस्पर दार्शनिक वादविवाद होते थे। सुबन्धु ने लिखा है कि—

केचिज्जैमिनिमतानुसारिणि इव तथागत-मत-ध्वंसिनः।

(तथागत वा बुद्ध के सिद्धान्त का विध्वंस जैमिनि के मतानुयायी करते हैं।)

सुबन्धु ने एक स्त्री की प्रशंसा में लिखा है—

न्यायस्थितिम् इव उद्योतकरस्वरूपाम्, बौद्धसंगतिम् इव अलंकारभूषिताम्।।

यहाँ पर न्यायवार्तिक के ग्रंथकार उद्योतकर का नाम स्पष्टतः लिया गया है। इससे पता चलता है कि सुबन्धु उद्योतकर के पश्चात् हुए हैं। श्रीयुत् गंगाप्रसादजी मेहता ने सुबन्धु का काल छठवीं शती माना है। डॉक्टर कीथ के अनुसार वह बाणभट्ट के समकालीन थे।

महाराज विक्रमादित्य के अनन्तर साहित्य की अवनति को लक्ष्य करते हुए सुबन्धु ने 'वासवदत्ता' में लिखा है कि—

सा रसवत्ता विहता नवका विलसन्ति चरति नो कंकः।
सरसीव कीर्तिशेषं गतवति भुवि विक्रमादित्ये।

(रसवत्ता नष्ट हो चुकी है। नए लोग विलासी हैं। सरोवर की भाँति पृथ्वी पर विक्रमादित्य की कीर्ति शेष रह गई है।)

## क्षिप्रा और उज्जयिनी

पुराणों के अनुसार क्षिप्रा के चार नाम हैं—क्षिप्रा, ज्वरघ्नी, पापघ्नी, तथा अमृतसंभवा।

क्षिप्रा के चार रूप हैं—बैकुंठ में क्षिप्रा, स्वर्ग में ज्वरघ्नी, यमद्वार में पापघ्नी, तथा पाताल में अमृतसंभवा।

उज्जैन का पौराणिक, धार्मिक, शैक्षणिक, साँस्कृतिक, ऐतिहासिक एवं ज्योतिषिक महत्व अत्यधिक रहा है। उज्जैन का उल्लेख वेदों तथा पुराणों में भिन्न-भिन्न नामों से मिलता है। उज्जयिनी अथवा अवन्तिका मुख्य नाम हैं। अन्य नाम—अवन्ति, पद्मावती, कुमुद्वती, अमरावती, कुशस्थली, कनकश्रृंगा, भौमवती एवं विशाला आदि हैं।

उज्जैन, भारत के बीचों-बीच स्थित है। वराहपुराण में भी इसे आर्यावर्त्त का नाभि (बीच) कहा गया है। भू-मध्य रेखा भी यहीं से होकर निकली है। भारत की मोक्ष देने वाली सप्तपुरियों में भी उज्जैन की गणना है। यहाँ पर इन पाँच तत्वों—१. श्मशान (भूत निवास), २. ओखर (मोक्षभूमि), ३. क्षेत्र (सिद्ध भूमि), ४. वन (महाकाल वन) और ५. पीठ (शक्ति पीठ) का एक ही स्थान पर योग हुआ है। इस योग के कारण सभी तीर्थों से उज्जैन का महत्व तिल भर अधिक माना गया है। स्कंद पुराण के अनुसार—"यहीं पर काल चक्र के प्रवर्तक भगवान महाकाल हैं, कपिल मुनि ने सिद्धि प्राप्त की, चाण्डाल से राजा हरिश्चन्द्र की मुक्ति हुई, सप्तऋषिगण निर्वाणपद को प्राप्त हुए।"



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

# उज्जैन का प्राचीन वैभव

□ डॉ. सुलोचना जोशी

महाकालेश्वर एवं वीर विक्रमादित्य की प्रसिद्ध नगरी उज्जैन भारत की प्रसिद्ध प्राचीन नगरी है। भारतीय पुरातन साहित्य में अनेक स्थानों पर इसकी महिमा और वैभव के वर्णन भरे पड़े हैं। धार्मिक और ऐतिहासिक दोनों ही दृष्टि से उज्जैन का महत्व उल्लेखनीय है। यह भारत की नाभि-स्थली मानी जाती है। उज्जैन के अनेक नाम हैं यथा—उज्जयिनी, अवन्तिका, आकरावती, पद्मावती, कुशस्थली, भोगवती, हिरण्यवती, कनकश्रृंगा, कुमुदवती, प्रतिकल्पा, विशाला, और अवन्ती आदि।

इनमें प्रमुख दो नाम हैं—उज्जयिनी और अवन्तिका। उज्जयिनी नाम पौराणिक मतानुसार इसलिए पड़ा कि त्रिपुरासुर को मारने के लिये देवताओं के साथ शिवजी ने महकाल वन में रक्त दंतिका चंडिका की आराधना करके महापाशुपत अस्त्र प्राप्त किया और उससे त्रिपुरासुर का वध किया। प्रबल शत्रु को "उज्जित" करने के कारण ही उसका नाम उज्जयिनी पड़ा और कालान्तर में उज्जैन हो गया। अवन्तिका या अवन्ती नाम का कारण यह है कि यह पवित्र नगरी देवता, तीर्थ, औषधि, बीज एवं प्राणियों का अवन अर्थात् रक्षण करती है।

उज्जैन की गणना भारत के सात पवित्र तीर्थों में की जाती है वे तीर्थ ये हैं—

अयोध्या, मथुरा, माया, काशी, कांची, अवन्तिका।
पुरी द्वारवती चैव सप्तैता मोक्षदायिकाः।।

इन सब में काशी सबसे पवित्र मानी गई है, उससे भी दस गुनी पुण्यदा अवनतिका है। ऐसा उल्लेख स्कंद पुराण में है।

लिंग पुराण में उज्जैन के प्रसिद्ध महाकालेश्वर की महिमा का विस्तार से वर्णन किया गया है। वामन पुराण में वर्णन है कि प्रहलाद ने उज्जैन में क्षिप्रा स्नान करके महाकालेश्वर के दर्शन किये थे। महाकालेश्वर भारत के द्वादश ज्योतिर्लिंगों में से एक है। इसकी महिमा महाभारत में इस प्रकार वर्णित है—

महाकालं ततो गच्छन्नियतो नियताशनः।
कोटि तीर्थमुपस्पृश्य हयमेघफलं लभेत्।।

अर्थात् महाकाल के निकटस्थ कोटि तीर्थ का स्पर्श होने से अश्वमेघ यज्ञ का फल होता है।

भगवान् श्रीकृष्ण उनके भ्राता बलराम एवं विप्र सुदामा ने उज्जैन में ही गुरु सांदीपनि से विद्या प्राप्त की थी।

बारह वर्ष बाद जिस समय 'गुरु' का आगमन सिंह राशि में होता है, उस समय उज्जैन का कुम्भ अर्थात सिंहस्थ पर्व होता हैं। जिसमें क्षिप्रा स्नान का फल मोक्षदायक होता है।

उज्जैन की प्रसिद्ध ज्योति संसार में भी अत्यधिक रही है। क्योंकि कालगणना के लिये देशान्तर की शून्य रेखा उज्जैन में होकर गई है, उसका उल्लेख भास्कराचार्य कृत सिद्धान्त शिरोमणि के गोलाध्याय में इस प्रकार से है—

यल्लंकोज्जयिनीपुरोपरि कुरुक्षेत्रादिदेशानस्पृशत्।
सूत्रं मेरुगतं बुधैर्निगदिता सा मध्यरेखाभुवः।।

अर्थात् लंका से उज्जैन एवं कुरुक्षेत्र होते हुए जो रेखा मेरु पर्वत तक पहुँचती है वह मध्य रेखा मानी गई है। इसी के संकेत स्वरूप उज्जैन की वेदशाला आज भी वेधकार्य कर रही है।



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

blic Domain. Digitization by

महाकालेश्वर मन्दिर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ऐतिहासिक दृष्टि से उज्जैन भारत के इतिहास की एक महत्त्वपूर्ण कड़ी है। यह प्रथम कब बसी, इसका कोई प्रमाण नहीं मिलता। त्रिपुरासुर वध और महाकालेश्वर की स्थापना ही इसके प्राचीनता के प्रमाण माने जा सकते हैं। भारतीय प्राचीन साम्राज्यों, सभी धर्मों और संस्कृतियों से इसका सम्बन्ध रहा है। शताब्दियों तक उज्जयिनी हिन्दू, जैन एवं बौद्ध धर्म की केन्द्रस्थली रही है। अनेक विदेशी पर्यटकों ने उज्जैन की यात्रा का वर्णन अपनी पुस्तकों में किया है और उज्जैन के वैभव की भूरि-भूरि प्रशंसा की है।

# क्षिप्रा का माहात्म्य

प्रयाग और काशी में जिस प्रकार भागीरथी गंगा के स्नान का माहात्म्य है, उसी प्रकार उज्जयिनी में क्षिप्रा-स्नान का माहात्म्य बतलाया गया है। मालव निवासी इसे गंगा के समान ही पूज्य मानते हैं। प्राचीन भारतीय साहित्य में क्षिप्रा का उल्लेख अनेक ग्रन्थों में मिलता है। उज्जैन और महाकालेश्वर के साहचर्य से इसकी महिमा कई गुनी हो गई है। महाकवि कालिदास ने क्षिप्रा के शीतल-मंद-सुगंध वायु की विशेषता का वर्णन करते हुए मेघदूत में लिखा है—

दीर्घी कुर्वन् पटु मदकलं कूजितं सारसानां।
प्रत्यूषेषु स्फुटितकमलामोदमैत्रीकषाय।
यत्र स्त्रीणां हरति सुरतग्लानिमंगानुकूलः
सिप्रावातः प्रियतम इव प्रार्थनाचाटुकारः।

इसका पद्यानुवाद इस परकार है—

प्रातकाल फूले नित कंजन तें भेंटि-भेंटि
रंजन हिये को होत गंध सरसानो है।
दीरघ करत मदमाते बोल सारस के
सुरन रसीले सुने कान सुख मानो है।
एते गुन साथ तात सिपरा नदी कौ बात
पीतम समान वीनती में अति सयानो है।
सुरत गलानि हरे सोई तहां नारिन को
गात हितकरी जात याही ते बखानो है।

स्कन्दपुराण के अवन्ती खंड में क्षिप्रा की महिमा इस प्रकार लिखी गई है—

नास्ति वत्स महीपृष्ठे सिप्रायाः सदृशी नदी।
यस्यास्तीरे क्षणान्मुक्तिः किं चिरात्सेवनेनवै।।

अर्थात् पृथ्वी पर क्षिप्रा के समान और कोई नदी नहीं है, जिसके समीप जाने से क्षण भर में ही मुक्ति प्राप्त हो जाती है ....।

यह भी कहते सुना गया है—

सिप्रा सिप्रेति यो ब्रूयात योजनानां शतैरपि।
मुच्यते सर्व पापेभ्यः शिवलोकं सगच्छति।।

अर्थात् जो कोई सौ योजन दूर से भी 'क्षिप्रा, क्षिप्रा' इस प्रकार नामोच्चारण करता है, वह समस्त पापों से मुक्त हो जाता है।



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2



# महातीर्थ के दर्शनीय स्थान

□ ठाकुर उत्तमसिंह

अवन्तिका नगरी किसने व किस समय बसाई इसका कोई निश्चित प्रमाण नहीं मिलता। स्कन्दपुराण में उसको "प्रतिकल्पा" के नाम से भी सम्बोधित किया है, जो सृष्टि के आरम्भ में उसकी उत्पत्ति का सूचक है। वेदों से लेकर ब्राह्मण ग्रंथों व उपनिषदों में भी उज्जयिनी का महत्व प्रतिपादित है। अठारह पुराणों में भी उज्जयिनी का धार्मिक दृष्टि से सब जगह वर्णन किया गया है। महाभारतकाल में भारतवर्ष जब सौख्य व उत्कर्ष के शिखर पर पहुँच चुका था, उस समय भी उज्जैन का महत्व बहुत बढ़ा हुआ था, और उज्जैन में एक प्रसिद्ध विद्यापीठ भी विद्यमान था। हिन्दूधर्म में तीर्थयात्रा के लिए चार प्रमुख धाम चार दिशाओं में स्थित होना वर्णित है। उत्तर में बद्रीनाथ, पूर्व में जगन्नाथपुरी, दक्षिण में रामेश्वर व पश्चिम में द्वारकापुरी है, किन्तु इन सब तीर्थों में उज्जैन प्रमुख माना गया है, और इसी कारण यह महातीर्थ कहलाता है। कारण यह भारतवर्ष के मध्य में अर्थात् नाभिस्थान पर स्थित है। भारतवर्ष में तीर्थयात्रा का प्रारम्भ तथा समाप्ति उज्जैन के महातीर्थ से ही होती है।

एक कल्प में ४ अरब ३० करोड़ २० लाख वर्ष होते हैं और प्रत्येक कल्प के अन्त में प्रलय होता है, ऐसा कहा जाता है। ऐसे प्रत्येक कल्प में उज्जयिनी के नाम बदलकर रखे गये थे जो नीचे लिखे हैं—१ कनकश्रृंगा, २ कुशस्थली, ३ अवन्तिका, ४ चूड़ामणि, ५ अमरावती, ६ पद्मावती, ७ कुमुद्वती तथा ८ विशाला और श्री श्वेतवाराह कल्प जो चल रहा है इसमें इसका नाम "उज्जयिनी" है, इससे इसके प्राचीनता का अनुमान लग सकता है, सूत्र ग्रंथों में और पुराणों में उज्जैन के जो वर्णन हैं उससे ज्ञात होता है कि यह नगर पाँच हजार वर्ष से पूर्व से विद्यमान है। भागवत् (स्कन्द १० पूर्वार्ध, अध्याय ४५) में श्रीकृष्ण और बलदेव दोनों भ्राताओं का विद्यार्जन के हेतु अवन्तिका में गुरुदेव सांदीपन ऋषि के आश्रम में आने की कथा की गई है। महाभारत के सभापर्व (अध्याय ३१) में राजसूय यज्ञ के प्रसंग पर करभार प्राप्त करने के लिए सहदेव के अवन्तिका देश में आने का उल्लेख है, तथा उद्योगपर्व अध्याय १८ में अवन्ती देश के राजा विन्द एवं अनुविन्द दोनों भ्राताओं का कौरवों की तरफ से युद्ध में भाग लेने के लिये उपस्थित होने का वृतान्त है। अर्थात यह तीनों वृतान्त भारतीय महायुद्ध के पूर्व के है। भारतीय युद्ध "कलिकाल" के प्रारम्भ में हुआ है यह कई प्रमाणों से सिद्ध हो चुका है। कलिकाल का प्रारम्भ खिस्ताब्द के ३१०१ वर्ष पूर्व होना भी प्रायः समस्त आर्य जेतिर्विदों को स्वीकृत है, उसमें खिस्ताब्द पश्चात् के १९४३ वर्ष मिलाने पर संख्या ५०४४ आती है। इस पर से अवन्ति नगर का अस्तित्व ५००० वर्ष पूर्व होना तो सिद्ध होता ही है और उस समय भी यह नगर भारतीय नरेन्द्रों की वैभवशाली राजधानी तथा सुप्रसिद्ध विद्यापीठ था यह भी प्रमाणित होता है। रामचरित सर्वत्र श्रीकृष्ण चरित्र से पूर्व का माना जाता



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

है और श्री रामायण के किष्किन्धाकाण्ड (स. ४१, ४२) में भी श्री सीतादेवी के अन्वेषणार्थ वानर-दल को रवाना करते समय सुग्रीव ने अवन्ति देश का उल्लेख किया है। इस पर से भी यही सिद्धान्त निकलता है कि अवन्ति देश भारत-काल से पूर्व रामायणकाल में भी प्रसिद्ध था। अतः इसका अस्तित्व ५००० वर्ष पूर्व तो अवश्य ही होना स्वीकृत किया जा सकता है। उज्जयिनी का वर्णन प्राचीन वाङ्मय के कवि और लेखकों की रचनाओं में भी पाया जाता है जैसे कालिदास, बाण, व्यास, शूद्रक, भवभूति, विल्हण, अमरसिंह, पद्मगुप्त आदि। इन वर्णनों से पाया जाता है कि प्राचीन उज्जयिनी क्षिप्रा नदी के दोनों तट पर बसी थी। वह भूमि अब वर्तमान उज्जयिनी के उत्तर में 'गढ़' के नाम से प्रसिद्ध है। इस स्थान पर खोदने से प्राचीन सिक्के, धातुओं के पात्र आदि पुरातन बस्ती के कुछ चिह्न अब भी मिलते हैं। इन चिह्नों से प्रतीत होता है कि पूर्वकाल में किसी समय प्राचीन अवन्तिका या तो क्षिप्रा नदी के बाढ़ में डूब जाने से नष्ट हो गई होगी, अथवा धरणीकम्प से विचलित होकर भूगर्भ में समाई होगी और इसके पश्चात् उसके दक्षिण में वर्तमान अवन्तिका की बस्ती बसी। यदि ऐसा न होता तो कोई कारण नहीं कि इस स्थान को गहरे खोदने पर ही प्रासादों के अवशेष व अन्य संसारोपयोगी वस्तु भूगर्भ में से हस्तगत न होते। पुरातत्त्व-विभाग की ओर से इस दिशा में खोज एवं उत्खनन अब भी चालू है।

उज्जैन को धार्मिक पावित्र्य व महत्त्व प्राप्त होने के विशेषकारण निम्नलिखित हैं—

आकाशे ताडकं लिंगं पाताले हाटकेश्वरम्।
मृत्युलोके महाकालं लिंगत्रयं नमाम्यहम्।।

अर्थात् आकाश में ताड़केश्वर, पाताल में हाटकेश्वर और मृत्युलोक के ज्योतिर्लिंग श्रीमहाकालेश्वर हैं, जो उज्जैन में विराजमान हैं। महाकालेश्वर प्रसिद्ध द्वादश ज्योतिर्लिंगों में एक हैं। इसी तरह मोक्ष देने वाली सप्तपुरियों में से उज्जैन प्रमुख है। इसके बारे में लिखा है—

अयोध्या मथुरा माया काशी कांची अवंतिका।
पुरीद्वारावती चैव सप्तैता मोक्षदायिकाः।।

अन्य तीर्थों की अपेक्षा उज्जैन में विशेषता यह है कि निम्नलिखित श्लोक में वर्णित पाँच बातों का यहाँ योग है—

स्मशानमुर्वरं क्षेत्रं पीठं तु वनमेव च। पंचैकत्र न लभ्यंते महाकालवनादृते।।

अर्थात् उज्जैन में (१) स्मशानं, यानी भगवान् के रमण करने की जगह (२) उरवरं, यानी जहाँ मृत्यु होने पर मोक्ष मिलता है (३) क्षेत्रं, अर्थात् जहाँ सब पापों का विनाश होता है (४) जहाँ 'पीठ' है मतलब हरसिद्धि जी व अन्य मातृकाओं का स्थान है और (५) जहाँ महाकाल का निवास स्थान है; ऐसी पाँच महान् बातों का योग पृथ्वी के पृष्ठ पर सिवाय उज्जैन के और कहीं नहीं है। अतएव पुष्करराज आदि जितने तीर्थ इस पृथ्वी पर हैं वे सब तीर्थ महाकालवन अर्थात् अवन्तिकापुरी में विद्यमान हैं। इसी तरह कई लाख वर्ष काशीवास करने से जो फल मिलता है वह फल वैशाख मास में केवल पाँच दिन अवन्तिका में वास करने से मिलता है। विशेषतः पुणयतोया क्षिप्रा नदी के तट पर यह नगर बसा होने से विशेष पवित्र माना जाता है। क्षिप्रा का ऐसा महात्म्य है कि इसके समान पावन करने वाली कोई नदी नहीं और प्रेतों का उद्धारण करने वाला दूसरा स्थान नहीं। सिंह के गुरु और मेष के सूर्य होने पर बड़ा पर्वकाल होता है और उस समय उज्जैन में १२ वर्ष में एक बार सिंहस्थ का बड़ा मेला क्षिप्रा के तट पर लगता है, उस समय क्षिप्रा स्नान का विशेष महात्म्य वर्णित है। इसके बारे में एक ऐसी कथा है कि ब्रह्माजी के पुत्र सनत्कुमार व्यासजी से कहते हैं कि हे परंतप! सत्ययुग में विहार देश में दमन नाम का एक बड़ा पापी राजा था। एक दिन शिकार खेलते में थक गया, और रात्रि का समय होने से वह घोड़ा बाँधकर एक वृक्ष के नीचे विश्राम करने लगा। उस समय सर्पदंश से वह मर गया तब यमराज के दूत उस पापी को फाँसे से बाँधकर यमराज के पास ले गये और उसके प्रेत को रातभर जंगली जानवरों ने



Rajguru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

खाया। प्रातःकाल में यह घटना हुई कि एक कौए की चोंच से उसके माँस का टुकड़ा क्षिप्रा नदी में गिर पड़ा। उस पवित्र जल का स्पर्श होने मात्र से उस पापी राजा की मुक्ति हो गयी और वह साक्षात् शंकर रूप हो गया। किन्तु यहाँ तक इसका महात्म्य है कि 'क्षिप्रा' यह केवल नाम उच्चारने से मुक्ति प्राप्त होती है, तो न जाने क्षिप्रा में स्नान करने का कैसा भारी फल होगा। इसी पवित्र क्षिप्रा नदी के तट पर उज्जैन बसा होने से उसे विशेष महात्म्य प्राप्त हुआ है। आगे इस नगर में जो अन्य दर्शनीय स्थान हैं उनका वर्णन किया गया है।

**महाकालेश्वर—**

उज्जैनी के दर्शनीय स्थानों में महाकालेश्वर का स्थान सर्व प्रमुख है। भारतवर्ष में शिवजी के बारह लिंग हैं जो जेतिर्लिंग के नाम से प्रसिद्ध हैं। उन सबमें प्रधान स्थान महाकालेश्वर का है, क्योंकि ऊपर लिखे अनुसार आकाश पाताल वं मृत्यु लोक में जो तीन मुख्य लिंग (अर्थात् तारकम्, हाटकेश्वरम् व महाकाल) हैं उनमें सर्वप्रमुख है। इस मन्दिर का वर्णन महाभारत, स्कन्दपुराण, वराहपुराण, नृसिंहपुराण, शिवपुराण, भागवत्, शिवलीलामृत आदि ग्रंथों में तथा कथासरित्सागर, राजतरंगिणी, कादंबरी, मेघदूत, रघुवंश आदि काव्यों में अत्यन्त सुन्दर दिया हुआ है। अलबेरूनी व फरिशता नाम के इतिहासकारों ने भी इस देवालय का वर्णन किया है।

पुराणकारों के कथानानुसार प्राचीनकाल में महाकालवन में जब देव तथा ऋषि-मुनियों ने तपस्या के लिए आकर यहाँ वास किया, तब से इस महाकाल वन को विशाल नगरी का रूप प्राप्त हुआ। उसी समय विश्वकर्मा ने श्रीमहाकालेश्वर के निवासार्थ एक भव्य मन्दिर निर्माण किया, चारों ओर एक परकोटा खिंचवाया। उस मन्दिर के महाद्वार पर एक बड़ा भारी घंटा स्वर्णश्रृंखला से लटकता था, और मन्दिर में सर्वत्र रत्नखचित दीपस्तंभ थे जिन पर रत्नजड़ित दीप प्रकाशित होते थे। मालववंशीय विक्रमादित्य के विषय में जो आख्यायिका है उससे प्रतीत होता है कि इस राजा ने महाकालेश्वर का स्वर्णशिखर-सुशोभित बड़ा मन्दिर बनवाया और उसके लिए अनेक अलंकार तथा चामर, वितानादि कितने ही राजचिह्न समर्पित किए। इस भक्ति व सेवा के गौरवार्थ विक्रमादित्य की एक स्वर्ण-प्रतिमा इस मन्दिर के सभा मण्डप में रखी गई थी। इसके बाद ई.सं. की ग्यारहवीं शताब्दी में इस मन्दिर का जीर्णोद्धार परमारवंश के भोजराजा ने करवाया था। ई.स. १२६५ में दिल्ली के सुलतान शमसुद्दीन अल्तमश ने इस मन्दिर को तुड़वा डाला। महाकाल का लिंग कोटितीर्थ में फिकवा दिया और इसकी जगह मसजिद बनवा दी, किन्तु वह थोड़े समय बाद ही नष्ट हो गई। अल्तमश विक्रमादित्य की स्वर्णमूर्ति और मन्दिर की सब सम्पत्ति लूटकर ले गया।

इस घटना के पाँच सौ वर्ष पश्चात् जब उज्जैन पर कै. राणोजीराव शिन्दे का अधिकार हुआ उस समय उनके दीवान रामचन्द्रबाबा ने उसी स्थान पर महाकालेश्वर का मन्दिर फिर बनवाया जो आज भी स्थित है। मन्दिर के अन्दर श्री महाकालेश्वर के पश्चिम उत्तर और पूर्व की ओर क्रमशः गणेश, गिरिजा और षडानन की मूर्तियाँ स्थापित हैं। दक्षिण की ओर गर्भगृह के बाहर नन्दिकेश्वर विराजमान हैं। लिंग विशाल है और सुन्दर नागवेष्टित जलाधारी में विराजमान है। महाकाल के सम्मुख एक घृत का और दूसरा तेल का अखण्ड नन्दादीप जलता रहता है, और दिन में तीन बार पूजन होता है। प्रातःकाल में भस्मपूजा, मध्याह्न में महापूजा और प्रदोषकाल की प्रदोष पूजा कहते हैं। महाकालेश्वर के लिंग के ऊपर के मंजिल पर ओंकारेश्वर विराजमान हैं। उनके प्रवेश द्वार के नीचे एक छोटा झरोखा है, जहाँ से ऊपर से ही यात्रियों को श्रीमहाकालेश्वर के दर्शन हो जाते हैं। महाकालेश्वर के मन्दिर के दक्षिण दिशा में वृद्धकालेश्वर और सप्तऋषि के मन्दिर हैं। महाकालेश्वर के ऊपर जो ओंकारेश्वरजी का मन्दिर है उसके पटांगण में स्वप्नेश्वर, बद्रीनारायणजी, नृसिंहजी, साक्षी गोपाल तथा अनादिकालेश्वर आदि के भी मन्दिर हैं।

मन्दिर के नीचे सभामण्डप से लगा हुआ एक कुण्ड है जो "कोटितीर्थ" के नाम से प्रसिद्ध है, और यह पक्का बँधा हुआ है। इससे इस रम्य स्थल की



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

शोभा और बढ़ गई है। महाकालेश्वर के सभामण्डप में ही एक राम मन्दिर है। इन रामजी के पीछे अवन्तिकादेवी की प्रतिमा है जो इस अवन्तिका की अधिष्ठात्री देवी है।

**श्री चौबीसखंबी देवी—**

महकालेश्वर से उज्जैन की ओर जाने के रास्ते पर एक विशाल द्वार का अवशेष दृष्टि गोचर होता है इसे चौबीसखंबी दरवाजा कहते हैं। इसे विक्रमादित्य के प्रासाद का द्वार भी कहते हैं, किन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि यह महाकालवन में प्रवेश करने का द्वार होगा। इसे भोज के प्रासाद का अवशेष होना भी मानते हैं। प्राचीनकाल में महाकालवन एक बड़े कोट से घिरा हुआ था। इस कोट के भग्नावशेष अभी भी कहीं-कहीं कायम हैं। इस द्वार से लगा हुआ कोट का हिस्सा अब गिर चुका है, और अब केवल यह द्वार का अवशेष बाकी रह गया है। ऐसा अनुमान होता है कि इस द्वार के दोनों पार्श्वभागों में चौबीस खंबे लगे हैं और इसीलिए इसे चौबीस खंबी दरवाजा कहते हैं। भावुकजन इस दरवाजे को महामाया देवी मानते हैं, और नवरात्रि के अष्टमी को पूर्व परम्परानुसार प्राचीन जागीरदार, इस्तमुरारदार व उज्जैन के जमींदार होने के नाते, लेखक की ओर से पूजन आदि का प्रबन्ध किया जाता है। वर्तमान समय भी अष्टमी के पूजन के अवसर पर नाथसम्प्रदाय की कुमारी कन्या की करांगुली में सुई से किंचित् छिद्र करके, रक्त के बिन्दु का देवी पर सिंचन किया जाता है, जो एक प्राचीनकाल में होने वाले मनुष्य बलिदान का प्रतीक है। अष्टमी के नगर पूजन का प्रारंभ इसी चौबीसखंबा देवी के स्थान से होकर, क्रमशः कालियादेह दरवाजा, चौंसठयोगिनी, फूलबाई, अंकपांत, नगरकोट की रानी, ताजपूर दरवाजा, निजातपुरा, छत्रीपुरा दरवाजा, अहीरपुरा लालबाई दरवाजा, भूखीमाता, गनगौर दरवाजा, अगियाबेताल से गढ़ की कालिका पर जाकर समाप्त होता है। इस प्रसंग पर विशेष बात यह होती है कि इस पूरी नगर पूजा के परिक्रमण में चौबीसखंबे से लगाकर, गढ़ की कालिका तक एक घट में छिद्र करके, उस घट में मदिरा भरकर मदिरा की अखण्ड धारा बहाई जाती है।

**हरसिद्धि देवी—**

ऐसी आख्यायिका है कि इस उज्जयिनी नगर के संरक्षण के लिए चौंसठ देवियों का अखण्ड पहरा रहता है, जिनको चौंसठ योगिनी कहते हैं। उनमें एक हरसिद्धि देवी है। यहाँ के अति प्राचीन स्थान में श्रीहरसिद्धि देवी का स्थान विशेषतापूर्ण है। अवन्तिका के प्रसिद्ध सप्तसागर रुद्रसागर के पश्चिम तट पर रेलवे स्टेशन से लगभग एक मील के अन्तर पर महाकालवन में स्थित यह मन्दिर है। यह मन्दिर चारों ओर से ऊँची व मजबूत दीवारों से घिरा हुआ है, और चारों दिशाओं में अन्दर आने को चार दरवाजे हैं। शिवपुराण के अनुसार इस मन्दिर में हरसिद्धि देवी प्रतिमा नहीं है। मन्दिर के गर्भ-गृह में सिंहासन पर एक शिलोत्कीर्ण श्रीयंत्र प्रस्थापित है। वही हरसिद्धि देवी कहलाती है। यहाँ पर जो मुखवटा बना है वह बाद में बनाया गया है, ऐसा कहते हैं। उसके पीछे जो मूर्ति खड़ी है वह अन्नपूर्णा की है। अन्नपूर्णा के आसन के नीचे सात मूर्तियाँ दिखाई देती हैं, इसमें मध्य में स्थित मूर्ति कालिका की, और दोनों ओर की दो मूर्तियाँ महालक्ष्मी और महासरस्वती की व अखीर में दोनों तरफ की एक मूर्ति गणपति की होना कहा जाता है। यस्मात् स्थान् हि मातृणां पीठं, तेनैव कथ्यते। अब भी संकल्प में, "महाकाल वने हरसिद्धि पीठे" ऐसा उच्चारण करते हैं।

इसका महात्म्य-वर्णन निम्नलिखित प्रकार से किया जाता है—

हरसिद्धि महादेवीं नित्यं व्योमस्वरूपिणीम्।
हरसिद्धिं प्रपश्येद्यः सोऽभीष्टं लभते फलम्।।

अर्थात् जगन्माता ब्रह्मांडरूपिणी श्रीहरसिद्धिजी के दर्शन करता है, उसकी मनोकामना पूरी होती है।

मन्दिर के पूर्व की ओर के दरवाजे पर एक सुन्दर काँच का बंगला है व उसके निकट एक बड़ा वट वृक्ष व एक गुफा है। दक्षिण की तरफ महाकालेश्वर की तरफ जाने का रास्ता है। पश्चिम की तरफ अगस्तेश्वर व क्षिप्रा की ओर जाने का मार्ग है। उत्तर की ओर का द्वार इसका मुख्य द्वार है। मन्दिर के आधार में



Raj Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

एक हनुमानजी का और एक तरफ करकटेश्वर का भी मन्दिर है।

कहा जाता है कि देवीजी सम्राट् विक्रमादित्य की आराध्य रही हैं। और इस स्थान पर विक्रमादित्य ने अनेक वर्ष पर्यन्त तप किया है। मन्दिर के पीछे एक कोने में कुछ सिर सिन्दूर चढ़े हुए रखे हैं। ये विक्रमादित्य के सिर हैं, ऐसी दन्तकथा प्रचलित है। कहा जाता है कि देवी को प्रसन्न करने के हेतु विक्रमादित्य ने अनेक वर्षों तक घोर तपश्चर्या की और ग्यारह बार अपने हाथों से काटकर अपने मस्तक को देवी के चरणों में अर्पण करके आत्म बलिदान किया था। किन्तु बार-बार फिर देवी नया मस्तक निर्माण कर देती थी। किन्तु बारहवीं बार जब मस्तक अर्पण किया इसके पश्चात् फिर मस्तक निर्माण नहीं हुआ, और यहीं विक्रमादित्य का शासन काल सम्पूर्ण हुआ।

मन्दिर के सामने खड़े हुए दो भव्य दीपस्तमभ हैं। प्रतिवर्ष नवरात्रि के दिनों में उन पर पाँच दिन तक दीपमालिकाएँ लगाई जाती हैं। इन स्तंभों पर लगभग ७२६ दीप लगते हैं। उस समय यहाँ सरकारी बैण्ड व नक्कारखाने का प्रबन्ध रहता है। सहस्त्रावधि यात्रियों का समुदाय एकत्रित होता है। जब निकटवर्ती रुद्रसागर के विस्तीर्ण जलपृष्ठ पर कमल-पुष्प खिले होते हैं उस समय का दृष्य बड़ा ही मनोहारी होता है। इसी तरह रात्रि के समय जब दीपस्तम्भ जगमगाने लगते हैं और उनका प्रतिबिम्ब दूर-दूर तक प्रशान्त जलपृष्ठ पर अंकित होता है, उस समय की इस पवित्र स्थल की शोभा अवर्णनीय होती है। वर्तमान समय में इस रुद्रसागर का जल निकाल देने के कारण यह नैसर्गिक शोभा नष्ट हो गई है।

**रुद्रसागर का मध्यवर्ती टापू**—हरसिद्धि देवी के व महाकालेश्वर के मन्दिर के बीच में, रुद्रसागर के मध्य में एक टापू के स्वरूप में एक छोटा टीला है। इस पर विक्रमादित्य का सिंहासन था, ऐसी दन्तकथा है। इसका उत्खनन किये जाने पर इस टीले के शिखर पर एक मुगल पद्धति का बना हुआ फ़ारंजा (पानी का फव्वारा) निकला है। इसके तले में पानी आने का जो छिद्र है, उसकी ऊँचाई रुद्रसागर के जलपृष्ठ के सतह से ज्यादा होने से यह अनुमान होता है कि इसके फव्वारे के लिए जल रुद्रसागर के बाहर किसी उच्चव स्थान से लाने का प्रबन्ध होगा। पानी निकालने के हेतु मृत्तिका के बने हुए नलों के अवशेष कहीं-कहीं आज भी दृष्टिगोचर होते हैं। पुरातत्त्व-विभाग के दृष्टिकोण से स्थान का विशेष महत्त्व है।

**गोपाल-मन्दिर**—यह मन्दिर उज्जयिनी नगर के बीच बाजार के बड़े चौक के सामने है और इसको महाराजा दौलतराव शिन्दे की महारानी बायजाबाई शिन्दे ने बनवाकर उसमें श्रीगोपालकृष्ण की मूर्ति स्थापित की थी। मन्दिर का गर्भगृह और उस पर का शिखर संगमरमर का है। उसका द्वार तथा उसके अन्दर के द्वार चाँदी के पत्रों से मढ़े हुए हैं। बाहर के किवाड़ चाँदी के चौखट में जड़े हुए हैं। मन्दिर में रत्नजड़ित एक द्वार है। इसके सम्बन्ध में यह कहा जाता है कि ये किवाड़ गजनी की लूट में शिन्दे सरकार लाए थे।

सिंहासन पर श्रीगोपालकृष्ण की श्यामवर्ण मूर्ति और उनके दाहिनी तथा बांईं ओर क्रमशः शंकर और राधिकाजी की गौरवर्ण मूर्तियाँ हैं। राधिकाजी के पास गरुड़जी की मूर्ति और शिवजी के पास बायजाबाई साहिबा की प्रतिमा स्थित है। यहाँ की व्यवस्था के लिए ग्वालियर राज्य की ओर से ४,०००) रु. की वार्षिक नेमणूक मिलती है। श्रीगोपालकृष्ण की चिबुक में हीरा जमाने की जगह रखी है। यहाँ पर्व उत्सवादि प्रसंग पर एक दैदीप्यमान हीरा जमा दिया जाता है। मूर्ति यहाँ की ऐसी ऊँचाई पर विराजमान है कि चौक से आने वाले पथिकों को श्रीगोपालकृष्ण के दर्शन सड़क पर से ही हो जाते हैं।

**अंकपात**—यह वह पुण्य स्थान है जहाँ सांदीपनी ऋषी का आश्रम था, जिसमें श्रीकृष्ण भगवान उनके बन्धु बलराम और सुदामा ने विद्योपार्जन कर चौदह विद्याओं, तथा चौंसठ कलाओं का ज्ञान सम्पादन किया था। यहीं भगवान श्रीकृष्ण छात्रावस्था में गुरुगृह की पाकशाला



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

के लिए लकड़ी सिर पर रखकर लाते थे, और इस तरह गुरुभक्ति व सेवा का अत्यन्त उच्च आदर्श संसार के सन्मुख उपस्थि किया था। भागवत् में इसके सम्बन्ध में लिखा है—

काश्यं सांदीपनिं नामाध्यवंतीपुरवासिनम्

यहाँ एक पत्थर पर १०० तक अंक खुदे हुए हैं जो साँदीपनी ऋषी ने अपने हाथ से लिखे थे ऐसा कहा जाता है। इसी कारण इस स्थान का नाम अंकपात रखा होगा ऐसा प्रतीत होता है। अर्थात् जहाँ अंकपात यानी अंक का प्रारम्भ हुआ था। यह भी कहा जाता है कि जहाँ अभ्यास करने के पश्चात् पट्टियाँ धोई जाती थीं उस स्थान को भी अंकपात (यानी अंकों का पतन) नाम से सम्बोधन किया जाने लगा, किन्तु इन कारणों में से विशिष्ट किस कारणवश इस स्थान का नाम अंकपात पड़ा यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता है।

**कालियादेह महल**—यह महल उज्जैन के रेलवे स्टेशन से लगभग छह मील के अन्तर पर उत्तर दिशा में स्थित है। क्षिप्रा नदी व उसकी एक शाखा (जो आगे थोड़े अन्तर पर फिर क्षिप्रा नदी में मिल गई है) के बीच में एक द्वीप जैसी जगह पर यह महल बना हुआ है। अवन्ती-महात्म्य के अनुसार यहाँ ब्रह्मकुण्ड, सूर्यकुण्ड और सूर्यनारायण का मन्दिर था। पूर्व में यहाँ जो सूर्यनारायण का मन्दिर था उसको तुड़वाकर ई.स. की सोलहवीं शताब्दी में मालवे के सुलतान नासिरुद्दीन खिलजी ने उसके स्थान पर पठानी ढंग का यह विलास-मन्दिर बनवाया था। इसी को आज 'कालियादेह' नाम से सब जानते हैं। इस महल के दक्षिण दिशा में क्षिप्रा नदी की गहराई अथाह होने से इस स्थान को कालियाडोह (जिसका अपभ्रंश कालियादेह) नाम पड़ना जान पड़ता है। 'कालियादेह' नाम का एक ग्राम भी निकटवर्ती क्षिप्रा तट पर बसा हुआ है।

एक ऐसी भी दन्तकथा है कि नासिरुद्दीन ने पीरे का भक्षण किया था और अधिक शारीरिक ऊष्णता के कारण वह जलविहार करना पसन्द करता था और इसी उद्देश्य से उसने यहाँ कई कुण्ड और जलक्रीड़ा के स्थान निर्माण किये। नदी का पानी इस महल के सामने से अनेक सुन्दर व चमत्कृतिपूर्ण आकृतियों में कुण्डों में से घुमाकर फिर क्षिप्रा की धार में मिला दिया है, जिससे इस स्थान की शोभा अवर्णनीय हो गई है। कहा जाता है कि नासिरुद्दीन का देहावसान भी इन्हीं कुण्डों में बेहोश पड़े रहने की अवस्था में डूबकर हो गया था। हिजरी सन् १००८ व १००९ में अकबर बादशाह यहाँ आया था व उसकी आज्ञा से यह दालान बनवाया गया था। इसी तरह के दूसरे फारसी भाषा के लेख में लिखा है कि "ये दो विलास-मन्दिर बादशाह जहाँगीर की आज्ञा से तैयार हुए हैं" जहाँगीर बादशाह के स्वलिखित "तुजुक जहाँगीरी" नामक ग्रंथ में लिखा है कि वह (माघ सुदी १५,१२७३) को नाव में बैठकर कालियादेह से जदरूप नामक विद्वान तपस्वी सन्यासी से मिलने उज्जैन की ओर गया था। इसके पश्चात् दो-ढाई सौ वर्ष तक यह महल बे संभाल के पड़ा रहने से इसके अवस्था छिन्न-विछिन्न व जीर्ण हो गई। यहाँ तक कि पिण्डारों के जोरशोर के काल में यहाँ पिण्डारों का अड्डा कायम हो गया था, व मध्यवर्ती सभागृह पाकशाला के उपयोग में लाया जाता था।

**भर्तृहरि की गुफा**—यह गुफा उज्जैन के उत्तर में क्षिप्रा के किनारे पर लगभग एक मील पर है। यह स्थान बड़ा शान्त और रम्य है। भतृहरि सम्राट् विक्रम के ज्येष्ठ भ्राता थे। इनके नामाभिधान के सम्बन्ध में कहा है कि एक मुनि गंधर्व कन्या पर आसक्त हुए और एक मटके में (भर्तरा में) रेतस्खलन के कारण इनका जन्म हुआ। राजा को यह बालक मिलने पर उन्होंने इनका लालन-पालन किया। सारांश एक 'भर्तरा' में इनका जन्म होने से इनका नाम भर्तृहरि रखा गया। यह संस्कृत साहित्य के महान् पंडित थे। इनके लिखे हुए तीन ग्रंथ 'श्रृंगार-शतक', 'नीति-शतक', और 'वैराग्य' सर्वश्रुत व सर्वमान्य हैं। यह व्याकरण शास्त्र जैसे क्लिष्ट विषय में पूर्ण पारंगत थे। लक्ष्मी और सरस्वती का एक स्थान पर निवास होना यद्यपि सम्भव नहीं है, किन्तु भर्तृहरि एक अपवाद थे और इनके जीवन में लक्ष्मी



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

और सरस्वती दोनों का ही सुन्दर समागम हुआ था। गुरु गोरखनाथ के उपदेश से विरक्त होकर भर्तृहरि इसी गुफा के स्थान पर तपश्चर्या करने के लिए बैठ गए और यही उनका समाधि स्थान है। भर्तृहरि के जीवन में वैराग्य उत्पन्न होने के विषय में बड़ी ही रोचक व बोधप्रद कथाएँ प्रचलित हैं। यह कहा जाता है कि उनकी रानियों में पिंगला नामक रानी से उनका विशेष अनुराग था। एक प्रसंग पर पिंगला के अनुराग तथा सतीत्व की परीक्षा करने के हेतु, भर्तृहरि ने मृगया के कारण वन में जाने पर, वहाँ से व्याघ्र के रक्त में कपड़े भिगाकर, परिचारकों द्वारा रानी के पास भिजवाकर कहलवाया कि मृगया में राजा भर्तृहरि का देहावसान हो गया। यह दुःखप्रद समाचार प्राप्त होते ही रानी पिंगला उन रक्तसिंचित वस्त्रों सहित सती हो गई। यह दुर्घटना जब भर्तृहरि को ज्ञात हुई तब पिंगला के वियोग से भर्तृहरि अति दुःख-विह्वल हुए। उस समय उनको उपदेश देने के हेतु मत्स्येन्द्रनाथ के शिष्य गोरक्षनाथ एक मृत्तिका का घट लेकर उपस्थित हुए और उन्होंने घट भूमि पर गिराकर फोड़ डाला और रोने लगे। भर्तृहरि ने हँसकर उनसे कहा कि "अरे मूर्ख तू मृत्तिका के यःकश्चित् घट के लिए क्यों रो रहा है। इसके सदृश तो सहस्त्रों घट मैं ला दूँगा, किन्तु पिंगला के समान स्त्री मिलना असम्भव है।" इस पर गोरखनाथजी बोले, "तेरी पिंगला के समान सहस्त्रों पिंगला लाकर खड़ी कर देता हूँ। तू मेरा घट ला दे तब जानूँ!" यह कहकर वास्तव में उन्होंने सहस्रावधी पिंगला की प्रतिमा भर्तृहरि के सम्मुख उपस्थित कर दीं। यह देखकर एक प्रतिमा को अवास्तव महत्त्व देकर उसके लिए शोक करना व्यर्थ है, यह यर्थाथ तत्त्वबोध प्राप्त कर भर्तृहरि को उपरति हुई, व वैराग्य उत्पन्न हुआ, और उन्होंने नाथ-सम्प्रदाय स्वीकार कर वैराग्य की दीक्षा ली। वैराग्य के सम्बन्ध में जो एक दूसरी कथा प्रचलित है, वह इससे कुछ विपरीत है। यह कहा जाता है कि एक समय एक तपस्वी ने घोर तपश्चर्या करके एक अमृतफल प्राप्त किया और वह उसने भक्ति से राजा को अर्पण किया। राजा ने प्रेम के कारण वह अपनी रानी को दिया। रानी ने वह फल मंत्री को दे दिया। मंत्री ने अपनी प्रिय एक अन्य स्त्री को वह फल अर्पण किया, किन्तु इस स्त्री का प्रेम मंत्री पर न होकर राजा भर्तृहरि पर था। उसने फिर वही फल राजा को समर्पण किया। उस फल को वापिस पाकर राजा भर्तृहरि को अत्यन्त विषाद व खेद हुआ, व उनके हृदय में वैराग्य की भावना उत्पन्न हुई। भर्तृहरि ने अपने मन के क्षोभ निम्निलिखित श्लोक में व्यक्त किया है—

यां चिंतयामि सततं मयि सा विरक्ता।
साप्यन्यमिच्छति जनं स जनोऽन्यसक्तः।।
अस्मत्कृते च परितुष्यति काचिदन्या।
धिक्तां च तं च मदनं च इमां च मां च।।

यह गुफा सं. १९८५ में बनवाई गई होगी ऐसा अनुमान है। यहाँ जो शिल्पकला के नमूने हस्तगत हुए हैं उनके देखने से यह भी अनुमान होता है कि मूल में यह जैनों का विहार अथवा दक्षिण देश के शैव सम्प्रदाईयों का शिवालय होगा। और बाद में उस पर नाथ-सम्प्रदाईयों ने अधिकार जमा लिया और उसे "भर्तृहरि की गुफा" के नाम से प्रसिद्ध कर दिया। इस गुफा में जाने का दरवाजा दक्षिण में है। इस दरवाजे से प्रवेश करने पर पहिले बाएँ हाथ को गोरखनाथजी की समाधि आती है। वहाँ से भी अन्दर जाने पर छोटे-छोटे दक्षिणाभिमुख दो दरवाजे हैं उसमें से पहिला पातालेश्वर को जाता है जो कि गुफा के समान एक बड़ी खोह जैसा है। इसके पश्चिम में एक दरवाजा है और यहीं से गुफा का रास्ता है। यहाँ सीढ़ियाँ उतरने पर बड़ा चौक मिलता है जिसके पूर्व में भर्तृहरि की समाधि है। इस जगह एक पत्थर का टूटा हुआ पाट लटका हुआ है, इसके सम्बन्ध में यह आख्यायिका है कि इसको भर्तृहरि ने अपने हाथ से टेका दे रखा है। दक्षिण की गोपीचन्द की मूर्ति है, पश्चिम की तरफ एक बन्द रास्ता है इसके सम्बन्ध में यह कहा जाता है कि यह काशी जाने का रास्ता है। इसी तरह काशी के निकट चुनारगढ़ नामक पहाड़ी स्थान में टीले पर भी एक गुफा है। यह भी भर्तृहरि का स्थान बतलाया जाता है, और इस गुफा के अन्दर एक मार्ग है जो उज्जैन



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आने के लिए है ऐसा कहा जाता है।

**सिद्धवट**—भैरवगढ़ के पूर्व क्षिप्रा के मनोहर तट पर सिद्धवट का स्थान है। जिस प्रकार प्रयाग में अक्षय वट, नाशिक में पंचवट, वृन्दावन में वंशीवट तथा गया में गयावट है उसी प्रकार उज्जैन में यह पवित्र सिद्धवट है। वर्तमान वट १००, या १२५ वर्ष से अधिक का प्रतीत नहीं होता। यह कर्मकाण्ड के लिए प्रमुख स्थान माना जाता है। कहा जाता है कि इस वट वृक्ष पर भी मुगल बादशाहों ने इसके धार्मिक महत्त्व के कारण कुठार चलाया था, और इस वृक्ष को नष्ट कर उस पर लोहे के बहूत मोटे पत्रे (तवे) जड़वा दिए थे, किन्तु उस पर भी अंकुर फूट निकले और आज भी यह वृक्ष हरा-भरा है। इस वट के नीचे महादेव का लिंग व गणपति की मूर्ति हैं और फर्श पर सफेद व काले पत्थर लगे हुए हैं। इसके निकट जो क्षिप्रा की धारा है वह "पापमोचन तीर्थ" कहलाती है। नाग-नारायण-बलि इसी तीर्थ पर हुआ करती है। श्रद्धालुओं का यह भी विश्वास है कि इस तीर्थ पर स्नान करने से भूतबाधा नहीं होती। यहाँ वैशाख शुक्ल चतुर्दशी तथा वैकुण्ठ चतुर्दशी को मेला भी लगता है। इस पापमोचन तीर्थ के सम्बन्ध में ऐसी भी कथा कही जाती है कि सिद्धवट के स्थान से कार्तिक स्वामी ने ताड़कासुर पर शक्तिबाण चलाया था, जो क्षिप्राजी के प्रवाह में लय हो गया। इस बाण के आघात से यहाँ के प्रवाह की गहराई अथाह हो गई।

**श्री महाकाली**—यह श्री महाकाली का मन्दिर उज्जैन शहर के बाहर एक मील की दूरी पर 'गढ़' पर बना हुआ है। इस मन्दिर को किसने व कब बनवाया था इसका निर्णय अब तक ठीक तरह नहीं लग पाया है। तथापि इस मन्दिर के कुछ अंश का जीर्णोद्धार ई.सं. ६०६ व ६४८ के बीच में सम्राट् श्री हर्ष ने करवाया था। लिंगपुराण में इसकी उत्पत्ति के विषय में लिखा है कि रावण के वध के पश्चात् जब श्री रामचन्द्रजी अयोध्या पधार रहे थे, तब किंचित् विश्रांति के लिए श्रीरामचन्द्रजी ने अवन्तिका में निवास किया था तथा हरसिद्धि देवी के पश्चिम में रुद्रसागर के तट पर उन्होंने मुकाम किया। इस रात्रि को भगवती कालिका भक्ष्य के शोध में भ्रमण करती हुई इस स्थान पर आ पहुँची, और उसने हनुमान को पकड़ने की चेष्टा की। परन्तु हनुमानजी के अत्यंत भीषण रूप धारण करने से, देवी भयभीत होकर जब भागी तब उनके काया का एक अंश गलित होकर गिर गया और वह जिस स्थान पर गिरा वही स्थान कालिका के नाम से विख्यात है। शक्ति-संगम-तंत्र में निम्नलिखित उल्लेख मिलता है—

अवंती संज्ञके देशे कालिका तत्र तिष्ठति।।

कहा जाता है कि महाकवि कालिदास की यह आराध्य देवी थी, और उनके उग्र तप से देवी ने प्रसन्न होकर उन्हें प्रत्यक्ष दर्शन दिया, और देवी के प्रसाद से ही कालिदास को विद्वत्ता एवं कवित्व की प्रतिभा प्राप्त हुई।

इस समय मन्दिर में देवी की उग्र व भव्य मूर्ति विद्यमान है। किन्तु वयोवृद्ध जनों का कहना है कि वास्तव में मूर्ति की स्थापना बाद में हुई। केवल यह स्थल ही माननीय व पूजनीय है। मन्दिर के अन्दर जाने पर छह हाथ चौड़े व पैंतीस हाथ लम्बे दो दालान दोनों तरफ आते हैं। प्रवेशद्वार के आगे ही पाँच हाथ की दूरी पर एक देवी के वाहन सिंह की प्रतिमा बनी हुई है। मन्दिर के सामने एक विशाल गहरी बावड़ी बनी हुई है, और समीप ही बलिदान का स्थान बना हुआ है। देवी की मूर्ति के समीप ही चामुण्डा देवी की मूर्ति और ग्यारह रुद्र में के नवें गिरीश की मूर्ति विराजमान है। इस मन्दिर के पीछे "स्थिर विनायक" का मन्दिर है जिसे श्रीमान् सरदार किबे (इन्दौर निवासी) ने बनवाया है। यहाँ चौरासी लिंग में के पचपनवे "सिंहेश्वर महादेव" हैं। इस स्थान पर इमली के वृक्षों का एक घना वन होने से यह स्थान बड़ा रमणीय मालूम होता है। शारदीय नवरात्रि में नौ दिन तक यहाँ महोत्सव होता है, और अष्टमी के दिन हवन और बलिदान किया जाता है। ऐसी किंवदन्ती है कि किसी पुरातन काल में यहाँ कुमारियों का बलिदान होता था।

**कालभैरव**—पुराणों के अष्टभैरवों में यह कालभैरव



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रमुख है। यहाँ पूजन की सरकार की तरफ से व्यवस्था है। यह मन्दिर भैरवगढ़ नाम से प्रसिद्ध पुरातन उज्जयिनी में स्थित है। यह भैरवगढ़ नामक उपनगर वर्तमान उज्जयिनी से तीन मील के अन्तर पर क्षिप्रा नदी के तट पर बसा हुआ है। यहाँ अधिकतर छीपे लोग रहते हैं। इस स्थान के प्रमुख देव 'भैरव' हैं। पश्चिमोत्तर दिशा की ओर अधिकांश भाग नगर के कोट से घिरा हुआ है। क्षिप्रा उत्तर तट पर काल भैरव का विशाल मन्दिर बना हुआ है। भव्य व ऊँचे प्रवेशद्वार पर सरकारी नक्कारखाना बजता है। द्वार से अन्दर प्रवेश करने पर दीपस्तंभ खड़ा हुआ दिखाई देता है। कालभैरव की मूर्ति अत्यंत भव्य तथा प्रभावशाली है। मूर्ति के मुख में कोई छिद्र नहीं है फिर भी मूर्ति को मद्यपान कराते समय जब मद्यपात्र मूर्ति के मुख से लगाया जाता है तब पात्र आप ही आप खाली हो जाता है, ऐसा कहा जाता है। यह मन्दिर राजा भद्रसेन का बनाया हुआ है, ऐसा कहते हैं। यहाँ भैरवअष्टमी को यात्रा लगती है और भैरवजी की सवारी निकलती है। मन्दिर की बाईं ओर से बाहर निकलने पर किले की ओर जाने का मार्ग है। यह किला लगभग ३०० हाथ लम्बा और ३० हाथ ऊँचा है। इसी जगह सम्राट् अशोक ने उज्जैन का कारागृह बनवाया था। वर्तमान समय में भी कारागृह (जेलखाना) यहीं बना हुआ है, जिसमें कैदियों के हाथ से कती बुनी दरी व अन्य वस्त्रादि बनवाये जाकर उनकी बिक्री की जाती है। इस किले के समीप से दो मार्ग जाते हैं, एक कालियादेह महल को व दूसरा सिद्धवट की ओर।

**मंगलनाथ**—अंकपात के निकट क्षिप्रा-तट के एक टीले पर मंगलनाथ का मन्दिर है। यह महादेव नवग्रह में के हैं और चौरासी महादेव में तैंतालीसवें महादेव हैं। जो लोग पंचक्रोशी को जाते हैं वे अष्टतीर्थ की यात्रा करके यहीं आते हैं, और फिर उनके कुटुम्ब के लोग यहाँ उनसे मिलकर अपने घर ले जाते हैं। मत्स्यपुराण में लिखा है कि—

अवंत्या च कुजो जातो मगधे च हिं माशुनः

तथा संकल्प में भी—

अवंतीदेशाद्भव भो भोम्

इत्यादि अनेक प्रमाणों से मंगल की जन्मभूमि उज्जैन मानी जाती है। यहाँ मंगल की उत्तपत्ति हुई है। अतः सर्वदा मंगल ही होता रहता है। हर मंगलवार को दिनभर पूजा होती रहती है और यात्रा भी होती है। इसके निकट इन्दौर निवासी श्रीमान् सरदार किबे साहब का बनाया हुआ सुन्दर गंगाघाट भी है।

**क्षीरसागर**—सप्तसागर में क्षीरसागर तीसरा सागर है और गोगेश्वर की टेकरी के निकट है। यहाँ शेषशाई भगवान् की प्रतिमा है। यह स्थान लेखक के वंश परम्परागत "हवेली" नामक भवन के निकट है तथा लेखक के आधीन भूमि पर स्थित है। ऐसी दन्तकथा प्रचलित है कि जब श्रीकृष्ण भगवान् सांदीपन ऋषि के आश्रम में आये थे तब उन्होंने यहाँ दुग्धपान किया था। सप्तसागर की यात्रा करने पर यहाँ खीर-पुरी का दान किया जाता है। यहाँ का जल किसी समय दुग्ध जैसा श्वेत था, इसी कारण इसका नामाभिधान क्षीरसागर किया गया था। आसपास के घाट, मन्दिर, वृक्षों की घनी छाया, छोटी पहाड़ी, आदि प्राकृतिक सौन्दर्य से यह स्थान बड़ा ही रमणीक प्रतीत होता है।

**वेधशाला**—यह वेधशाला उज्जैन के दक्षिण में क्षिप्रा नदी के दक्षिण तट के उन्नत भूभाग पर स्थित है। इसे अधिकांश लोग 'यंत्र महल' के नाम से जानते हैं। पुरातन काल में उज्जैन ज्योतिषविद्या का प्रमुख केन्द्र था और यहीं से विषुवत रेखा का आरम्भ माना गया था। जयपुर के राजा सवाई जयसिंह ने, जब उज्जैन में बादशाह की ओर से सूबा थे, तब ई. सन् १७३० में यह वेधशाला बनवाई थी। ये राजा स्वयं ज्योतिष विद्या के विद्वान् तथा उसके बड़े प्रेमी थे उनकी इच्छा थी कि भारतीय ज्योतिष में ग्रहों का गणित यर्थाथ हुआ करे, इसी हेतु उन्होंने भिन्न स्थानों से ग्रहों के वेध लेने के लिए जयपुर, काशी, दिल्ली तथा मथुरा में वेधशालाएँ बनवाईं। उज्जैन भारतीय ज्योतिष का केन्द्र तथा उसका मुख्य विद्यापीठ था जैसा कि वर्तमान समय



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

में 'ग्रीनविच' को मानते हैं, और इसी कारण यहाँ भी जयसिंह ने वेधशाला स्थापित की थी। इस वेधशाला से उन्होंने सात-आठ वर्ष तक ग्रहों और ताराओं के वेध लिये और उनके अनुसार एक ग्रंथ भी तैयार करवाया था। इसके पश्चात् लगभग २०० वर्ष तक इस वेधशाला की ओर ध्यान नहीं दिया गया और परिणामस्वरूप यह वेधशाला जीर्ण हो गई थी। इस परिस्थिति की ओर शास्त्र व कला प्रेमी ग्वालियर नरेश कै. माधव महाराज का चित्त उज्जयिनी की पंडिताश्रम सभा की ओर से आकर्षित कराया जाने पर, उन्होंने जयपुर के वेधशाला के प्रसिद्ध ज्योतिषी गोकुलचन्द भावन को बुलवाकर उनके निरीक्षण में इस वेधशाला का जीर्णोद्धार करवाया, और इस समय यह वेधशाला सुव्यवस्थित अवस्था में है। यहाँ एक सुपरिण्टेण्डेण्ट और निरीक्षक रहते हैं। दर्शकों को यंत्रों का परिचय कराने का यहाँ पूरा प्रबन्ध है। इस वेधशाला में चार यंत्र हैं। (१) सम्राट् यंत्र—इससे सूर्योदय से सूर्यास्त तक घंटे, मिनिट और २० सेकण्ड तक का काल मालूम होता है। (२) दिगंश यंत्र—ग्रह नक्षत्रादिकों के दिगंश मालूम होते हैं। इसके मालूम होने से उनके स्थान का पता चल जाता है। (३) नाड़ीवलय यंत्र—इससे ग्रह नक्षत्रादिकों के दक्षिणोत्तर गमन का ठीक समय जाना जाता है। (४) दक्षिणोत्तर-भित्ती-यंत्र—इस यंत्र द्वारा ग्रह नक्षत्रादिकों के मध्याह्न वृत्त पर आने के समय उनके नतांश व उन्नतांश आदि का बोध होता है। (५) पलभा यंत्र—इस यंत्र द्वारा सूर्य की छाया से दिन में ठीक समय जाना जाता है।

**अगस्तेश्वर**—अगस्तेश्वर का मन्दिर हरसिद्धि के पीछे ही है। यह मन्दिर इतना प्राचीन है कि इसके निर्माण के सम्बन्ध में कोई प्रमाण उपलब्ध नहीं है। अनुमान यह है कि यह मन्दिर जूने महाकाल के मन्दिर इतना प्राचीन तो अवश्य ही होगा।

**चिंतामणि गणपति**-यह मन्दिर क्षिप्रा नदी के पार करीब तीन मील के अन्तर पर फतेहाबाद जाने वाली रेलवे लाइन पर है। यह मन्दिर गत काल में होलकर शाही के अधीन था, किन्तु अब रियासत ग्वालियर के अन्तर्गत है। इस मन्दिर को पूजनीया रानी अहिल्याबाई होलकर ने बनवाया था। गणपति की प्रतिमा को स्वयम्भू बतलाते हैं। यह मूर्ति बहुत सुन्दर है और इसके पास ही ऋद्धि-सिद्ध हैं परन्तु वह सिन्दूर से ढक जाने से दो खड़े हुए स्तम्भों के समान दिखती है। मन्दिर के सम्मुख एक बावड़ी पक्के पत्थर की बनी हुई है जिसे बाणगंगा कहते हैं। इसके बारे में ऐसी कथा कहते हैं कि रावणवध के बाद श्रीरामचन्द्र जी जब अयोध्या लौट रहे थे, तब उन्होंने यहाँ विश्राम किया था। प्यास लगने पर उन्होंने लक्ष्मण जी को जल लाने को कहा, समीप में जल न मिलने के कारण भूमि पर तीर मारा जिसके लगते ही वहाँ जल निकल आया। इसी कारण इसका नाम "बाणगंगा" है। फाल्गुन मास में अन्त के दोनों बुधवार को, और चैत्र शुक्ल के दोनों बुधवार को यहाँ मेला भरता है।

**पवित्र क्षिप्रा नदी**—यह नदी महू छावनी से ११ मील पूर्व से उद्‌गम पाकर महतपुर से आगे चलकर चर्मण्वती में मिली है। इसकी लम्बाई लगभग १२० मील बतलाई जाती है। अवन्ती-महात्म्य में पुण्य-सलिला भगवती क्षिप्रा का वर्णन निम्न प्रकार से दिया है—

नास्ति वत्स महीपृष्ठे शिप्रायाः सदृशी नदी। यस्यास्तीरे क्षणाण्मुक्तिः किं. चिरात्सेवितेन वै।। तथा—
शिप्राशिप्रेति यो ब्रूयाद्योजनानां शतैरपि। मुच्यते सर्व पापेभ्यो .।।

कालिकापुराण में इसकी उत्तपत्ति की कथा दी है जिससे उसका नाम क्षिप्रा प्रतीत होता है। रघुवंश की प्राचीन हस्तलिखित पोथी में 'शिप्रा' शब्द का प्रयोग किया है। मेघदूत के श्लोक ३१ में भी उसका 'सिप्रा' नाम से उल्लेख है। परन्तु उसके टीकाकार ने **"क्षिप्राग्रहणं शैत्यद्योतनार्थ"** इस प्रकार शिप्रा शब्द का प्रयोग किया है अतएव मूल नाम 'सिप्रा' होकर वह 'शिप्रा' हो गया और उसका अपभ्रंश 'क्षिप्रा' भी किया जाता है। इसके सम्बन्ध में ऐसी कथा है कि महाकालेश्वर एक समय क्षुधातुर होकर विष्णु के पास भिक्षा याचना करने को गये, तो उन्होंने तर्जनी अंगुली दिखला दी। शिव ने क्रुद्ध होकर अंगुली को छिन्न कर दिया और जो रक्त



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रवाह शुरू हुआ उसके नीचे शिव ने अपना कपाल कर दिया। जब वह रक्त नीचे प्रवाहित हुआ तब से यह क्षिप्रा कहलाई है। यहाँ संकल्प में भी यही कहा जाता है कि विष्णु देहातसमुत्पन्ने शिप्रे तथा शिप्राकस्मात—शिवपतित रक्ताति ति भवति शप्रा' शवेन पतितं यत रक्तम तत प्रभवति तस्मात्।

दूसरी कथा कालिकापुराण के अनुसार यह है कि मेघातिथि ऋषि ने अपनी कन्या अरुंधती दान में जिस समय दी उसी संकल्प का जल हिमालय से क्षिप्रा (सरका) था, उसके नीचे पड़ जाने से यह नदी उत्पन्न हुई।

क्षिप्रा तट पर सर्वत्र विशाल घाट बँधे हुए हैं। आस-पास सर्वत्र मन्दिर, छत्री आदि बनी हुई हैं। नरसिंह घाट, रामघाट, पिशाचमोचन तीर्थ छत्रीघाट गन्धर्व तीर्थ, गंगाघाट आदि विशेष महत्त्व के घाट हैं। गंगा दशहरे का उत्सव नौ दिन तक नदी तट पर ज्येष्ठ शुक्लपक्ष में प्रति वर्ष होता है। सहस्रावधि स्त्री-पुरुष एकत्रित होते हैं और यत्रतत्र कथा पुराण प्रवचनादि होते रहते हैं, जो दृष्य बड़ा ही भक्तिभाव उत्पादक रहता है। कार्तिकी पौर्णिमा व वैशाखी पौणिमा को यहाँ घाट पर बड़ा मेला लगता है। गणेशजी से लगा हुआ पंचमुखी हनुमानजी का मन्दिर है। यह भी मूर्ति सप्त-धातुमयी है और संगमरमरी कच्छप-शेष और कमलपुष्प के सुन्दर पीठ पर विराजमान है। यहाँ ज्योतिष की पाठशाला भी है। यह मन्दिर भारत के सुप्रसिद्ध इतिहास रा.ब. चिन्तामणिराव विनायक वैद्य की सहायता से बना हुआ है। यहाँ आकाश के कक्षाक्रम से नवग्रह स्थापित हैं।

**वीर दुर्गादास की छत्री**—क्षिप्रा नदी के तीर पर स्मशान के निकट एक टीले पर एक सुन्दर छत्री बनी हुई है जो वर्तमान समय वीरान सी पड़ी हुई है। यह छत्री राठौर वंशी वीर दुर्गादास की होने बाबत प्रमाण उपलब्ध हो चुके हैं। दुर्गादास का देहान्त यहीं हुआ था। इसी कारण प्रत्येक राजपूत वीर के लिए यह स्थान अत्यन्त पवित्र क्षेत्र के समान दर्शनीय माना जा सकता है।

**बिना नींव की मस्जिद**—अनन्तपेठ में होकर उसके दरवाजे पर जड़े हुए शिलालेख से ज्ञात होता है कि यह मसजिद हिजरी सन् ८०६ ई. सन् १३९७ में मालवे के सूबेदार दिलावरखान गोरी ने बनवाई थी। यह एक जैन मन्दिर को तुड़वाकर उसकी सामग्री से बनवाई जाने से इसके लिए नींव खोदने की आवश्यकता नहीं पड़ी थी, इसी कारण यह बिना नींव की मसजिद के नाम से प्रसिद्ध है।

**ख्वाजा शकेब की मसजिद**—यह सखीपुरे में रंगबावड़ी (पुष्कर सागर) से समीप है। कहा जाता है कि मुगल बादशाहों के सूबेदारों में ख्वाजा शकेब नाम का एक सूबेदार यहाँ था, उसने इसे बनवाया था। यहाँ की मुसलमानी इमारतों में यह एक प्रसिद्ध इमारत है।

**बोहरों का मकबरा**—उज्जैन में बोहरों की बस्ती बहुत है। इसलिए यहाँ उनके धर्माध्यक्ष के प्रतिनिधि रहते हैं जो प्रायः उनके वंशज होते हैं। यह मकबरा उनके विशेष अधिकारी पुरुषों की कबरों पर बना हुआ है। यह इमारत भी प्रेक्षणीय है।

**अगिया बेताल का मन्दिर**—इस मन्दिर के निकट एक छोटा सा तालाब है, जिसको आग्यातलाई के नाम से सम्बोधित करते हैं। इस मन्दिर को 'अगिया वेताल' 'वीर वेताल' या 'पीर वेंताल' का मन्दिर भी कहते हैं जो वास्तव में 'अग्निवेताल' नाम का अपभ्रंश होना प्रतीत होता है। "वेताल पंचविंशति" ग्रंथ में विक्रमादित्य के राज्यारोहण के सम्बन्ध में एक रोचक कथा वर्णित है, उससे इस मन्दिर का सम्बन्ध होना प्रतीत होता है। उस कथा का संक्षेप में आशय यह है कि एक समय ऐसा था कि जब उज्जैन के सिंहासन पर एक दिन से ज्यादा समय तक कोई राजा बैठ नहीं सकता था। इसका कारण यह था कि प्रति दिन जनता में से एक राजा चुनकर सिंहासन पर बैठाला जाता था और रात्रि में एक वेताल, धूम्रपटल व अग्नि के लपटों सहित विकराल रूप धारण कर राजप्रसाद में प्रवेश करके राजा को प्रतिदिन अपना भक्ष बना लेता था। एक दिन विक्रम नामक एक निर्धन राजपूत की बारी सिंहासन बैठने की आई। तब उसने इस अग्निवेताल को अन्य उपायों से सन्तुष्ट करने के हेतु नाना प्रकार के मिष्ठान्न



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तैयार रखे। अग्निवेताल ने इन पदार्थों से अपनी क्षुधा तृप्त की और सन्तुष्ट हुआ तथा इस चतुर संयोजक को अभय दान देकर सम्मुख प्रकट होने की आज्ञा दी। तब विक्रमादित्य प्रकट हुए और राजा का भक्षण प्रतिदिन न करने का वर माँग लिया, जिसे अग्निवेताल ने इस शर्त के साथ स्वीकार किया कि उसके भक्षण का प्रबन्ध अन्य प्रकार से किया जाता रहेगा। इस प्रकार अग्निवेताल विक्रमादित्य का सहायक बन गया। इसी अग्निवेताल के नाम से यह मन्दिर बनवाया गया। यह कथा, चौबीसखम्बा देवी की कथा से कुछ मिलती जुलती है, किन्तु विक्रमादित्य के नाम से सम्बन्धित इतनी कथाएँ प्रचलित हैं कि वास्तव में उनमें की कौन सी यथार्थ हैं, यह निर्णय करना कठिन है।

**उज्जैन के अन्य दर्शनीय स्थान**

१. नगरकोट की रानी, २. अनन्तनारायण का मन्दिर, ३. महाराजबाड़ा, ४. त्रिवेणी संगम, ५. रणजीत, ६. नागनाथ, ७. सत्यनारायण का मन्दिर, ८. अष्टेवाले का मन्दिर, ९. खातियों का जगदीश मन्दिर, १०. श्रीनाथजी ढाबा, ११ जैन मन्दिर (दिगम्बर ढाबा), १२. अवन्तीपार्श्वनाथ, १३. राममन्दिर-सराफा, १४. रूमी का मकबरा, १५. वीर मछन्दर, १६. सतीघाट।

**पंचक्रोशी यात्रा में आने वाले देव**—१. पिंगलेश्वर, २. कायावरोहणेश्वर, ३. बिल्वेश्वर, ४. दूधेश्वर, ५. नीलकंठेश्वर।

**महाकाल यात्रा**—१. कोटेश्वर, २. महाकाल, ३. कपालमोचन तीर्थ, ४. कपिलेश्वर, ५. हनुमतेश्वर, ६. पैपलाद्य, ७. स्वप्नेश्वर ८. विश्वतोमुख, ९. सोमेश्वर, १०. वैश्वानरेश्वर, ११. लकुलीश, १२. गद्यानेश्वर, १३. विघ्ननायक, १४. वृद्धकालेश्वर, १५. विघ्वनाशक, १६. प्राणीशवल, १७. तनयेश्वर, १८. दण्डपाणि, १९. महेश्वर २०. महाकाल, २१. दुर्वासेश्वर, २२. कालेश्वर, २३. वाघिरेश्वर, २४. यात्रेश्वर।

**नगर प्रदक्षिणा के मुख्य देव**—१. पद्मावति, २. स्वर्णश्रृंगा, ३. अवन्तिका, ४. अमरावती, ५. उज्जयिनी।

**सप्तसागर यात्रा**—१. रुद्रसागर, हरसिद्धी के पास, २. पुष्करसागर, नलिया बाखल में, ३. क्षीरसागर, डाबरी में ४. गोवर्धनसागर, बुधवारिये में, ५. रत्नाकरसागर, भोपाल लाईन में उंडासेस गांव में, ६. विष्णुसागर, अंकपात में तथा ७. पुरुषोत्तमसागर, अंकपात दरवाजे में।

**देवी के स्थान**—१. एकानंशा, सिंगपुरी में, २. भद्रकाली, चौबीसखंबे पर तथा ३. अवन्तिका, महाकालेश्वर में। नवदुर्गा अब्दालपुरा में, चतुषष्टीयोगिनी नयापुरा में, विन्ध्यवासिनी गढ़ पर खेत में अथवा सिंगपुनी में कालिका के नाम से प्रसिद्ध है। वैष्णवी सिंगपुनी में पं. कालूरामजी त्रिवेदी के मकान में कपाली जोगीपुरा में, छिन्न-मस्तका अब्दधलपुरा में, वाराही कार्तिक चौक में, वाराही माता की गली में, महाकाली, महालक्ष्मी, महासरस्वती कार्तिक चौक में एक ही मन्दिर में।

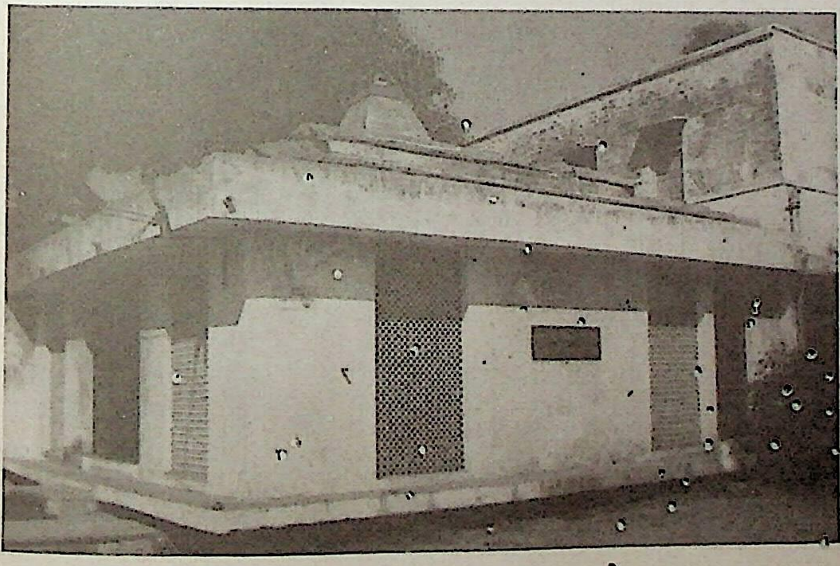

सीन्दीपनी आश्रम



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

# सम्राट विक्रमादित्य

हरसिद्धी मन्दिर के उत्तरी द्वार से जाने वाले मार्ग पर निकट ही विक्रमादित्य की मूर्ति स्थित है।

मन्दिर के खुले रहने का समय प्रातः सात से रात्रि नौ बजे तक है।

इस मूर्ति में सम्राट् विक्रमादित्य "सिंहासन बत्तीसी" पर बैठे हुए हैं। इस सिंहासन में बत्तीस पुतलियाँ लगी हुई हैं। बाँयीं ओर कामाक्षा देवी एवं दांयीं ओर महाकवि कालिदास की मूर्ति हैं।

गंधर्वसेन पुत्र विषमशील (विक्रमादित्य) ने ईसवी सन् पूर्व अट्ठावन के लगभग शकों को पराजित कर अवन्तिका राज्य प्राप्त किया था। इस पराक्रम के कारण उनका नाम विक्रमादित्य प्रसिद्ध हुआ एवं विक्रम संवत् का शुभारम्भ हुआ। विक्रम संवत् वर्ष चैत्र सुदी एक अर्थात् गुड़ी पड़वा से आरम्भ होता है। इस संवत् को धार्मिक, ज्योतिष ग्रन्थों एवं व्रत-त्यौहारों आदि के संकल्पों में तथा व्यापारी वर्ग के वार्षिक हिसाबों में आज भी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। सिंहासन बत्तीसी के नाम से प्रकाशित कहानियों में विक्रमादित्य के गुणों का वर्णन है।

उज्जयिनी के महाराज विक्रमादित्य सम्राट् थे। वे बहुत प्रतापी, न्यायी, दानी एवं विद्या प्रेमी थे। इनकी सभा में अनेक विद्वान थे जिनमें से नौ प्रमुख विद्वानों को नवरत्न का सम्मान दिया गया था, विक्रमादित्य के नवरत्नों के नाम थे—(१) धन्वतरी (वैद्य) (२) क्षपणक (न्यायशास्त्री एवं दर्शन शास्त्री) (३) अमरसिंह (साहित्यकार) (४) शंकू (शिक्षाशास्त्री) (५) घटखर्पर (कवि) (६) वेतालभट्ट (नीतिशास्त्री) (७) कालिदास (महाकवि) (८) वराहमिहिर (ज्योतिषशास्त्री) एवं (९) वररुचि (वैयाकरण)।

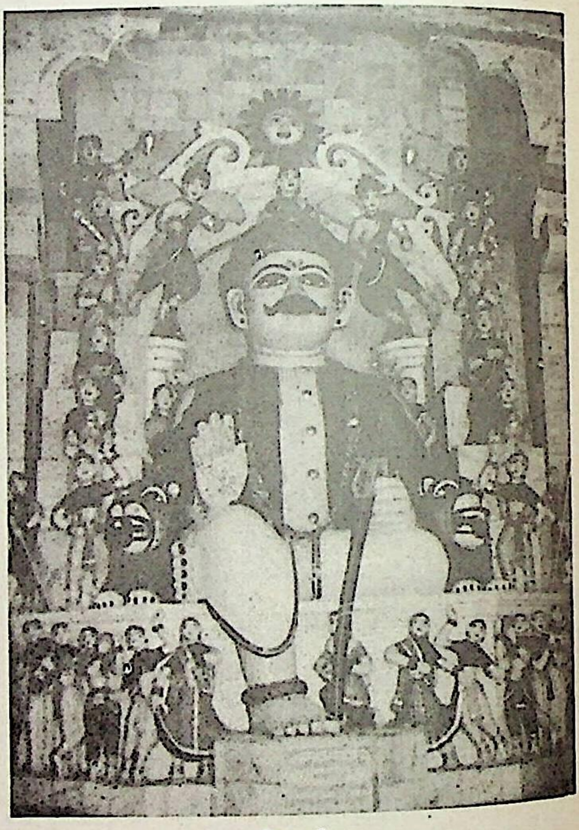

विक्रमादित्य



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

# विक्रमादित्य की आराध्या हरसिद्धी देवी

बड़े गणपति से ०.३ किलोमीटर ठीक पश्चिम में हरसिद्धी देवी का मन्दिर स्थित है। मन्दिर खुले रहने का समय प्रातः पाँच से रात्रि ग्यारह बजे तक है।

उज्जैन के प्राचीन एवं पवित्र स्थानों में हरसिद्धी देवी के मन्दिर का अत्यधिक महत्त्व है। इस स्थान पर सम्राट् विक्रमादित्य ने कई वर्षों तक कठिन तपस्या करके देवी का साक्षात् दर्शन किया था एवं वरदान पाया था। हरसिद्धी वैष्णवी देवी है। पुराणों में इस स्थान का धार्मिक महत्व बतलाया गया है। शिवपुराण के अनुसार दक्ष यज्ञ में सती की कोहनी का स्थान है अर्थात् सम्पूर्ण शरीर देवी नहीं वरन् देवी के शरीर का एक अंग यहाँ विराजमान है। स्कंदपुराण में देवी के प्रकट होने की कथा है। तांत्रिकों के ग्रन्थों में इसे "सिद्ध पीठ" कहा गया है।

मन्दिर के अन्दर हरसिद्धी देवी की मूर्ति सिन्दूरयुक्त है। इनके पीछे एवं ऊपर की ओर श्वेत संगमरमर की मूर्ति अन्नपूर्णा देवी की है। नीचे की ओर महाकाली की मूर्तियां हैं। कुछ आगे की ओर बांयें-दांयें काले-गोरे भैरव की मूर्तियाँ हैं। सभामण्डप की छत पर "श्री चक्र" बना हुआ है। यहाँ पर अत्यन्त बड़े-बड़े दो नगाड़े भी रखे हुए हैं जिन्हें आरती के समय बजाया जाता है।

मन्दिर के ठीक सामने आंगन में दो विशाल दीप स्तम्भ बने हुए हैं। नवरात्रि के अन्तिम चार दिन इन पर तेल के दीपक प्रज्ज्वलित किये जाते हैं। दीप स्तम्भ के पास एवं वट वृक्ष के नीचे एक तलघर है। तलघर में महाकाली एवं महामाया की मूर्तियां हैं। यहाँ पर अखण्ड दीपक जलता है। तलघर के ऊपर विक्रमादित्य की मूर्ति एवं हरिहरात्मक यंत्र है। मंदिर के उत्तर में करकोटकेश्वर महादेव का मन्दिर है। मन्दिर के चारों ओर परकोटा है। परकोटे में आने-जाने के लिए चारों दिशाओं में चार द्वार हैं।

मन्दिर में नित्य सुबह छः बजे एवं रात्रि सात बजे आरती होती है। रात्रि की आरती के समय देवी के दर्शन की अनुभूति होती है।

**श्री महाकालेश्वर**

महाकाल, भारत के द्वादश जेर्तिलिंगों में से एक है। किन्तु यही एक मात्र जेर्तिलिंग दक्षिणमुखी है, जिसका तांत्रिकों में बहुत महत्व है। समस्त मृत्युलोक का प्रतिनिधित्त्व करने वाले महाकाल की कथा शिवपुराण के ४६वें अध्याय में वर्णित है।

चाँदी की सुन्दर कारीगरी पूर्ण जलाधारी में प्रतिष्ठित विशाल नागवेष्ठित महाकालेश्वर मूर्ति के तीन ओर पार्वती, गणेश एवं कार्तिकेय की मूर्तियां और मुख्य द्वार के सम्मुख नन्दी की प्रतिमा हैं।

भगवान भूत भावन महाकाल का दिन में तीन बार श्रृंगार होता है तथा प्रातः ४ बजे भस्मारती के अतिरिक्त ३ बार आरती होती है। श्रावण मास के सोमवार को महाकाल की सवारी निकलती है।

मन्दिर के पश्चिम भाग में कोटि तीर्थ नामक पवित्र एवं सुन्दर जलाशय है।



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

# उज्जैन की वेधशाला

☐ रामचन्द्र विनायक वैद्य

अप्रत्यक्षाणि शास्त्राणि विवादस्तेषु केवलं।
प्रत्यक्षं ज्योतिषं शास्त्रं चन्द्रार्कौ यत्र साक्षिणौ।।

आकाशस्थ ज्योतियों का निरीक्षण करके उनके गतिस्थिति का प्रत्यक्ष ज्ञान कर लेना और वर्तमान ग्रहगणित के नियमों में इस स्थिति के योग्य परिवर्तन कराने में सहायता पहुँचाना, यही संसार की प्रत्येक वेधशाला स्थापन किये जाने का प्रधान हेतु रहा है।

**उज्जैन का ज्योतिष विषयक महत्त्व**—उज्जैन नगरी का ज्योतिष विषयक महत्त्व भारतीयों को कितने प्राचीन समय से है यह प्रथमतः बतलाना आवश्यक है। अति प्राचीन से कालज्ञान करा लेने का एक अद्वितीय स्थान रहने का सौभाग्य हमारी अवन्ती नगरी को प्राप्त हुआ है। इसीलिए श्री महाकालेश्वरजी का महत्त्व ज्योतिषियों के लिए बहुत है। इसके अतिरिक्त, जिस प्रकार वर्तमान समय में ग्रीनविच में से जाने वाली भ्योत्तर रेखा (meridian) संसार भर के लिये शून्यरेखा मानी जाती है, उसी प्रकार कई शताब्दियों से हमारे भारतीयों ने उज्जयिनी को "शून्य रेखा स्थित" माना है। सूर्य सिद्धान्त (मध्यमा. ६२) में लिखा है—

राक्षसालयदेवौकः शैलयोर्मध्यसूत्रगाः।
रोहीतकमवन्तीं च यथा सन्निहितं सरः।।

हमारे सिद्धान्त में ग्रंथों में उज्जयिनी सापेक्ष ही ज्योतिर्गणित के उदाहरण दिये हुए हैं। सुप्रसिद्ध ज्योतिषी भास्कराचार्यजी पृथ्वी की मध्य रेखा का वर्णन इस प्रकार करते हैं—

यल्लंकोज्जयिनीपुरोपरि। कुरुक्षेत्रादिदेशान् स्पृशन्।
सूत्रं मेरुगतं बुधैर्निगदिता सा मध्यरेखा भुवः।।

सुप्रसिद्ध ज्योतिषाचार्य वराहमिहिर अवन्ती नगरी में ही रहकर अपना ज्योतिष विषयक प्रचण्ड कार्य कर सके। उन्होंने भी उज्जैन को ही शून्य रेखा पर मानकर अपने गणित किये हैं।

## भारतीयों की दीर्घकालीन वेध-परम्परा—

कुछ लोगों का कहना है कि वर्तमानकालीन धातुयंत्र निर्मित वेधशालाओं में जिस प्रकार नियमित रूप से वेधकार्य चलता है वैसा कार्य भारतवर्ष में ही क्या,

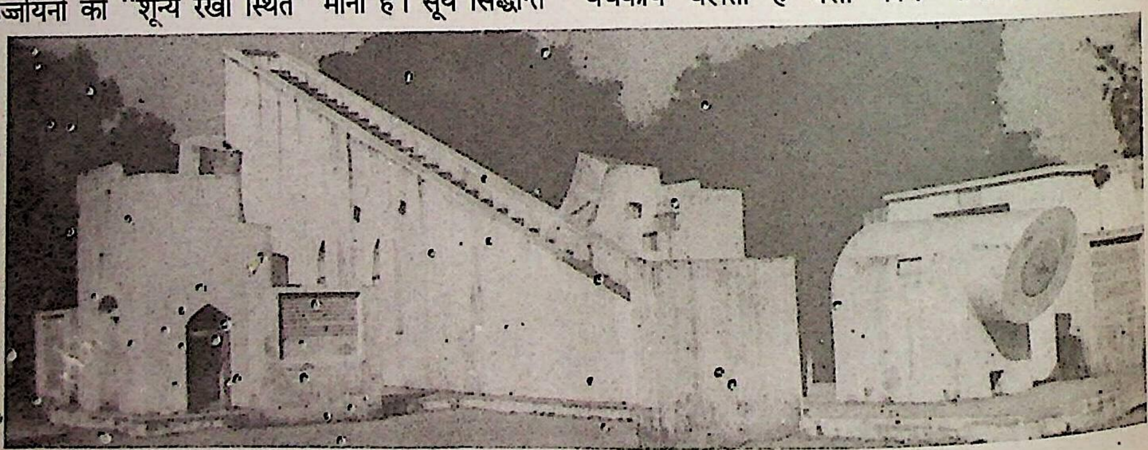

वेधशाला



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

संसारभर के किसी भी देश में प्राचीनकाल में नहीं होता था। भारतीय ज्योतिषियों को वेधज्ञान नहीं था और इस देश में वेधपरंपरा नहीं थी ऐसा आक्षेप यदि कोई करे, तो मेरी समझ से ऐसा कुछ उनकी धृष्टता होगी।

**(१) वेदकाल में वेधों के प्रमाण**—ऋग्वेदकाल से भारतीयों को २७ नक्षत्रों का और उनमें से भ्रमण करने वाले चन्द्रमा की गति का अच्छे प्रकार से ज्ञान था, यह बात निम्नलिखित वेदग्रंथों के प्रमाणों से स्पष्ट होगी—

(१) यथाग्निः पृथिव्यां ....... यथा सूर्यो दिवा चंद्रमसे समनमन्नक्षत्रेभ्यः समनमद् यंथा चंद्रमा नक्षत्रै वरुणाय समनमत्।। ...... (तैत्तिरीय. ७-५-२३)।

(२) संवत्सरस्य यत्फल्गुनी पूर्णमासो मुखत एव संवत्सरमारभ्य दीक्षंते .................. चित्रापूर्णमासे दीक्षेरन्।। (तै. सं. ७-४-८)

(३) कृत्तिकाः प्रथमं।। विशाखे उत्तमं।। तानि देवनक्षत्राणि।। अनुराधाः प्रथमं।। अपभरणीरुत्तमं।। तानि यमनक्षत्राणि।। (तै. ब्रा. १-५-२)

(४) तस्मात्कृत्तिकास्वादधीत।। एता ह वै प्राच्यै दिशो न च्यवंते सर्वाणि ह वा अन्यानि नक्षत्राणि प्राच्यै दिशश्च्यवंते ............ (शपतश ब्रा. २-१-२)

(५) बृहस्पतिः प्रथमं जायमानः तिष्यं नक्षत्रं अभिसंबभूव ..........।। तै. ब्रा. ३-१-१।

**(२) महाभारतकालीन वेधों के प्रमाण**—"चन्द्रमा की रोहिणी पर प्रीत" इस विषय पर तैत्तिरीय संहिता में बड़ी मनोरंजक कथा है। वेदकाल के बाद व महाभारतकाल के समय तक हमारे ज्योतिषियों ने आकाश निरीक्षण का कार्य सतत चालू रखते हुए ज्योतिष विषयक कई महत्व की बातों का ज्ञान प्राप्त कर लिया था। दक्षिणायन, उत्तरायण, विषुवायन, ऋतुपर्याय, ग्रहों की वक्रीमार्गी गति, ग्रहणों का १९ वर्ष का पर्याय, इत्यादि वातें उन्हें अच्छी प्रकार से मालूम हो गईं थीं। महाभारत के निम्नलिखित श्लोकों से यह बात स्पष्ट होती है कि रवि-चन्द्र के अतिरिक्त सप्तग्रहों की गतिस्थिति का भी बहुत कुछ ज्ञान हो गया था।

ते पीडयन् भीमसेनं क्रुद्धाः सप्त महारथाः।
प्रजासंहरणे राजन् सोमं सप्तग्रहा इव।। भीष्म. अ. १३०।
यदासूर्यश्च चन्द्रश्च तथा तिष्यबृहस्पतिः।
एकराशौ समेष्यंति प्रवर्त्स्यति तदा कृतम्।। वन. अ. १८८।
यथा हिमवतः पार्श्व पृष्ठं चन्द्रमसो यथा।
न दृष्टपूर्वं मनुजैर्न तन्नास्ति तावता।। शान्ति अ. २०३।

"चन्द्रमा की दूसरी बाजू अभी तक किसी भी मानव ने नहीं देखी है," यह वर्तमान समय की विश्वमान्य सिद्धान्त महाभारतकाल में हमारे लोगों को मालूम था। इसी प्रकार कृतयुग का आरम्भ व ग्रहस्थिति इनका **सम्बन्ध स्थापन करने योग्य ज्ञान महाभारतकालीन ज्योतिषियों** ने प्राप्त कर लिया था, यह बात उपर्युक्त श्लोकों से स्पष्ट होती है। गर्गसंहिता नामक ग्रंथ से मालूम होता है कि जिस प्रकार नित्य व्यवहार में दिन के लिए तारीख का उपयोग करते हैं, उसी प्रकार महाभारतकाल में चन्द्रमा-स्थित नक्षत्र से दिन का निर्देश किया जाता था। उस समय में नक्षत्रों को तीन प्रकार के विषय-विभाग (प्रत्यक्ष नक्षत्र स्थिति देखते हुए) माने जाते थे। ६ नक्षत्र अर्धभोग, ६ नक्षत्र अध्यर्ध-भोग व शेष १५ नक्षत्र समभोग मानते थे। इस प्रकार महाभारतकाल में भारतवर्ष में वेध लिये जाने के अनेक प्रमाण मिलते हैं।

**(३) संहिता ग्रंथों के वेधों के प्रमाण**—हमारे संहिताग्रंथों में शनि-मंगल द्वारा रोहिणीशकटभेद के अनिष्ट फल का वर्णन दिया हुआ है—

रोहिणीशकटमर्कनन्दनो यदि भिनत्ति रुधिरोऽथ वा शशी।।
किं वदामि यदि नष्टसागरे जगद्शेषमुपयाति संक्षयं।।
बृहत्संहिता।।३४।

भौमार्क्योः शकटभिदा युगांतरे स्यात्—प्र. ला. ११-१२।

शनी का स्पष्ट परमशर २°-४५' और भौम का २°-५३' होता है। यह स्थिति रोहिणीशकटभेद करने योग्य होती है। गणित से मालूम होता है कि शकपूर्व ५००० वर्ष शनी का स्पष्टशर २°-३४' था। उस समय और उसके पूर्वकाल में शनी भौम द्वारा रोहिणीशकटभेद अवश्य हुए होंगे व देखे गये होंगे। गुरु का स्पष्टपरमशर २°-३५' कभी नहीं हो सकता और इसीलिये संहिता ग्रंथों में गुरुकृत रोहिणीशकटभेद के फलों का कोई



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वर्णन नहीं है। शकारंभ के पश्चात् अभी तक शनी-भौम द्वारा रोहिणीशकटभेद कभी नहीं हुआ। इन्हीं संहिता ग्रंथों में कौनसा धूमकेतु कितने वर्ष बाद आता है इसका वर्णन है।[१] वर्तमान समय में जिस प्रकार एनकी, हॅले इत्यादि यूरोपीय ज्योतिष संशोधकों के नाम उन्हीं के द्वारा संशोधित किये हुए धूमकेतुओं को दिये गये हैं, उसी प्रकार ११० वर्ष का प्रवास करने वाले धूमकेतु का नाम उद्दालक, ५०० वर्षवाले का पैतामह, १५०० वर्ष वाले का काश्यप इत्यादि नाम रखे गये होंगे ऐसा विद्वानों का मत है। इन प्रमाणों से यह स्पष्ट होता है कि आकाश का निरीक्षण व स्वस्थ ज्योतियों का चमत्कार दर्शन ७००० वर्ष पूर्व से ही हमारे पूर्वजों ने किया हुआ है।

**(४) सिद्धान्तकाल के वेधों के प्रमाण :** हमारे भारतवर्ष में प्रत्यक्ष आकाश का अवलोकन व तद्द्वारा ज्ञान प्राप्ति कर लेने का कार्य वर्षानुवर्ष सतत चला करता था इसमें सन्देह नहीं। हमारे सूर्यसिद्धान्त ग्रंथ में ग्रहों के भगण दिये हुए हैं, जिन्हें देखकर अन्तःकरण आश्चर्य व आदर से भर जाता है। इसमें एक महायुग में (४३,२०००० वर्षों में) चन्द्रमा के भगण (फेरे, revolutions) ५७७५३३६ बताये हुए हैं—यह संख्या round figure नहीं है। यह ध्यान में रखने योग्य बात है—इससे गणित करने पर ज्ञात होगा कि चन्द्रमा की प्रतिदिन की गति १३.१७६ अंश होती है। आज के विश्वमान्य नॉटिकल आल्मॅनॅक में चन्द्रमा की दैनिक गति १३.१७६४ दी हुई रहती है। सिद्धान्तकाल में ही इतना सूक्ष्म ग्रहगतिमान हमारे ज्योतिषयों ने निकाल रखा था, यह हमारे लिये बड़े गौरव की बात है।

**(५). विक्रम द्विसहस्राब्दी-काल के वेधों के प्रमाण—** प्राचीनकाल की बात छोड़ दी जाय, तब भी गत २००० वर्षों में वेधकार्यकुशल अनेक धुरंधर विद्वान् ज्योतिषी हमारे भारत वर्ष में हो गये हैं। उनमें से कुछ ज्योतिषियों के निम्नलिखित वचन, वेधपरंपरा दिखाने के लिए पर्याप्त होंगे—

(१) आश्लेषार्धादासीत् यदा निवृत्तिः किलोष्णकिरणस्य।
युक्तमयनं तदासीत् सांप्रतमयनं पुनर्वसुतः।।—वराहमिहिराचार्य।

(२) स्वयमेव नाम यत्कृतमार्यभटेन स्फुटं स्वगणितस्य।
सिद्धं तदस्फुटत्वं ग्रहणादीनां विसंवदति।।—ब्रह्मगुप्त।

(३) शृंगोन्नतौ ग्रहयुतौ ग्रहणे तथास्ते। छायानिरीक्षणविधौ उदयेऽत्र देयम्।।—लल्लाचार्य।

(४) यस्मिन्दिने सम्यक् प्राच्यां रविरुदितो दृष्टः तद्विषुवद्दिनं।
तस्मिन्दिने गणितेन स्फुटो रविःकार्यः .... ।।—भास्कराचार्य।

(५) ब्राह्मार्यभटसौराद्येष्टापि ग्रहणकरणेषु बुधशुक्रयोर्महदंतरं दृश्यते। मंदे आकाशे नक्षत्र नक्षत्रग्रहयोगे उदयेस्ते च पंचभागादिकाः प्रत्यक्षं अंतरं दृश्यते। एवं ..... वर्तमानघटनाम् आलोक्य ..... ग्रहगणितानि कार्याणीं
—केशवदैवज्ञ।

(६) पूर्वोक्ता भृगुचन्द्रयोः क्षणलवाः स्पष्टा भृगोश्चोनिता।
द्वाभ्यां तैरुदयास्तदृष्टिसमता स्याल्लक्षितैषा मया।—गणेशदैवज्ञ।

इन सब बातों से यह बात बिलकुल स्पष्ट है कि हमारे देश में अति प्राचीनकाल से वेध लेने के कार्य अवश्य होते थे। यदि शोक की बात कोई हो, तो केवल यही हो सकती है कि इस कार्य का परम्परागत लिखा हुआ इतिहास हमें उपलब्ध नहीं हुआ है। व्यक्तिशः वेधनियमक प्रयत्न हमारे देश में अनेक हुए हैं। किन्तु स्थाई वेधशाला बँधवाकर, उसमें वेध लेकर करणग्रंथ बनाने का सफल उद्योग राजा सवाई जयसिंह ने ही किया, यह इतिहास से मालूम होता है।

**जयपुर के राजा सवाई जयसिंह जी**—राजा जयसिंहजी वि. संवत् १७५० (शके १६१५, ई. स. १६९३) में अम्बर में सिंहासनारूढ़ हुए। वे स्वयं ज्योतिर्गणितज्ञ व

[१] "......... पैतामहः चलकेतुः पंचवर्षशतं प्रोष्य उदितः। .... अथोद्दालकः श्वेकेतुः दशोत्तरं वर्षशतं प्रोष्य ......... दृश्यः। ......... शूलाग्रकांराशिखी दर्शयन् ब्राह्मानक्षत्रं उपसृत्य मानक् ध्रुवं ब्रह्मराशिं सप्तर्षी संस्पृश्य ......... काश्यपः श्वेतकेतुः पंचदशं वर्षशतंप्रोष्य पद्मकेतोश्चारांते ........ नभसस्त्रिभागमाक्रम्य अपसव्यं निवृत्य अथप्रदक्षिणजटाकारशिखः स यावंतो मासानदृश्यते तावद्वर्षाणि सुभिक्षमावहति। ........... अथ रश्मिकेतुः विभावसुजः प्रोष्य शतमावर्तकेतोरुदितः चारांते कृत्तिकासु धूमशिखः ...........।।"
—दीक्षितकृत भा. ज्यो. इति पृ. ३४२।



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वेधकार्यकुशल थे। उन्होंने "सिद्धान्त-सम्राट्" नामक ग्रंथ संस्कृत में व "झिज्महंमद" अरबी भाषा में बनवाया। "झिज्महंमद" ग्रंथ की प्रस्तावना में जयसिंहजी ने लिखा है कि—"वर्तमान समय का भारतीय ज्योतिर्गणित दृक्तुल्य नहीं होता है। इसलिए बादशाह महमंदशाह की आज्ञा से चूना, पत्थर ईंटों के स्थायी बड़े-बड़े यंत्र जयपुर, दिल्ली, उज्जैन, बनारस व मथुरा में बनवाये। ऐसे यंत्र बनवाने का मुख्य कारण यह है कि इनमें जिस प्रकार अंशों के कलात्मक सूक्ष्म विभाग बनाये जा सकते हैं, वैसे छोटे-छोटे पीतल के यंत्रों में नहीं बनाये जा सकते। इसके अतिरिक्त उन यंत्रों के अक्ष, वर्तुल-मध्य, धरातल, इत्यादि वक्र व चलित हो सकते हैं और हवा, पानी, धूप व काल इनका अनिष्ट परिणाम अधिक हो सकता है। इसलिए प्रस्तरमय विशाल यंत्र उपर्युक्त पाँच स्थानों पर उन्होंने बनवाये।" राजा जयसिंहजी उत्तम वेधकुशल ज्योतिषियों को नियुक्त करके ७ वर्ष पर्यन्त इन वेधशालाओं में वेध लिये। इन वेधों का वर्णन 'सिद्धान्तसम्राट्' ग्रंथ में मिलता है।

**श्रीजीवाजी वेधशाला, उज्जैन**—यह वेधशाला संवत् १७७६, ई. स. १७९१ के लगभग बँधवाई गई। राजा जयसिंहजी के पश्चात् इसमें वेधकार्य नियमित रूप से किये जाने का कोई प्रमाण नहीं मिलता। दो सौ वर्ष तक इसकी तरफ किसी का ध्यान नहीं गया। फलस्वरूप हवा, पानी, व धूप इनका अवश्यम्भावी परिणाम होकर इसके यंत्रों की टूट-फूट हो गई। अन्त में उज्जैन की पण्डिताश्रमसभा के प्रयत्नों से श्रीमान् स्वर्गीय माधवराव महाराजा शिन्दे ग्वालियर-नरेश का लक्ष्य इसकी तरफ आकर्षित हुआ और ई. स. १९२३ में जयपुर के विद्वान पण्डित श्री गोकुलचन्द्रजी भावन के निर्देशकत्व में इस वेधशाला का पुनर्जीवन हुआ।

**यंत्रों का वर्णन**

(१) **सम्राट्यंत्र**—इस वेधशाला में प्राचीन मुख्य यंत्र चार हैं, जिनमें सबसे बड़ा व अधिक महत्त्व का यंत्र "सम्राट्यंत्र" है। इसके मध्य में लगभग ४८ फीट लम्बी व २२ फुट ऊँची त्रिकोणाकार दीवाल है। यह दक्षिण से उत्तर की तरफ तिरछी (धरातल से अक्षांश तुल्य २३°-१०' का कोण बनाती हुई) बाँधी गई है। ऐसी स्थिति में इसके ऊपर की तिरछी बाजू पृथ्वी के अक्ष के समानान्तर होती है, जिसमें ग्रहों की क्रान्ति के वैध लेने के लिये जाने के वास्ते एक जीना बनाया है। इस जीने की दोनों बाजूओं पर ०' से ६०' तक दक्षिण व उत्तर की तरफ क्रांतियों की रेखाएँ खुदी हुई हैं। इस दीवाल के दोनों तरफ—पूर्व की ओर एक व पश्चिम की तरफ दूसरी—दो वृत्तचतुर्थांश (Quadrants) विषुवत्वृत्त के धरातल में बाँधे हुए हैं जिन पर घंटे, १५ मिनिट, ५ मिनिट व २० सेकेन्ड की लकीरें खुदी हुई हैं। इन वृत्तों के जिस रेखा के साथ दीवाल की छाया मिलती हुई दिखती है, उससे घंटा-मिनिटात्मक काल का ज्ञान होता है। यह काल स्थानीय स्पष्टकाल (Local apparent time) होता है। इसमें प्रति दिन कुछ विवक्षित मिनिट संख्या जोड़ने से स्टेन्डर्ड टाइम आता है। किसी भी वर्ष के प्रत्येक तारीख के लिये आवश्यक लगने वाले मिनिट संख्या निदर्शक कोष्टक, इस यंत्र के दोनों बाजुओं के दीवालों में, पत्थर पर खुदवाकर लगाया गया है। सम्राट्यंत्र से खासकर रवि-चन्द्रादि ग्रहों के नतकाल व क्रांति का ज्ञान, तथा छाया द्वारा समय का ज्ञान होता है।

(२) **नाड़ीवलययंत्र**—सम्राट्यंत्र के पास ही दक्षिण में एक छोटे से ओटले पर तकिये के आकार का एक यंत्र है जिसका नाम "दक्षिणगोल-उत्तरगोल व नाड़ीवलययंत्र" है। किसी भी क्रांति निकालने के पहिले वेधज्ञ यह निश्चित कर लेता है कि वेध्य ग्रह दक्षिणगोलार्ध में हैं या उत्तर में। जब ग्रह की क्रान्ति १ अंश के पास आती है तब केवल दृष्टि से ग्रह की गोलार्द्ध स्थिति निश्चित रूप से नहीं मालूम होती है। इसका निश्चय नाड़ीवलययंत्र से किया जाता है। इसके दक्षिण व उत्तर भाग (Faces) विषुववृत्त के धरातल में होने से, जिस तरफ देखने से इष्ट ग्रह दृष्टिगोचर होगा, उसी तरफ वाले गोलार्द्ध में वह ग्रह है ऐसा निश्चय होता है। इस दक्षिण व उत्तर के सिरों के मध्य में पृथ्वी के अक्ष के समानान्तर दिशा में एक एक कील लगी है, जिसकी छाया उन सिरोंपर पड़ती है। इन सिरों



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पर एक एक नाड़ीवलय (Ghaticircle) पूर्व काल में खुदा हुआ था। अब बजाय घटिओं के घण्टे मिनिट की रेखाएँ खुदी हुई हैं, जिनसे छायार्क द्वारा स्थूल स्पष्टकाल मालूम होता है।

(३) **दिगंशयंत्र**—नाड़ीवलय यंत्र के पास पूर्व की तरफ समकेन्द्रचक्राकार (concentric) ८ फुट ऊँचाई की दीवालें हैं जिनके व्यासार्ध १० फुट व १६ फुट हैं। इस यंत्र के मध्य में ४ फुट ऊँचा व ४ फुट व्यास का चबूतरा है व इसके बीच में ४ फुट ऊँचाई का सलिया है। भीतर की दीवाल के कोरपर दिग्बिन्दु योग्य स्थानों पर लिखे हुए हैं और भारतीय ज्योतिष-परम्परा के अनुसार पूर्व से दक्षिण ०' से ९०'; दक्षिण से पश्चिम की तरफ ०' से ९०'; इस प्रकार अंश खुदे हैं। इस यंत्र से केवल दिगंश का ही ज्ञान होता था। परन्तु स्व. रावसाहब पं. गो. स. आपटे साहब ने दिगंशयंत्र के मध्यस्थित सलिया पर एक तुरीय यंत्र लगाया है, जिससे किसी भी ग्रह या तारका के दिगंश तथा उन्नतांश एक समयावच्छेद में ज्ञात होते है। इस यंत्र का उपयोग खासकर तिथि के वेध लेने में होता है।

(४) **भित्तियंत्र**—दिगंशयंत्र के नैऋत्य में २२ फीट लम्बी व २२ फीट ऊँची दक्षिणोत्तर दीवाल बँधी हुई है। उसे भित्तियंत्र कहते हैं। इस दीवाल के पूर्व में २० फीट त्रिज्या वाले दो वर्तुलपाद (Quadrantal arcs) खुदे हुए हैं। इनमें ०' से ९०' तक अंश व कलाओं की रेखाएँ खुदी हुई हैं व इनके केन्द्र में दो खूटियाँ हैं जिनका परस्पर अन्तर २० फीट का है। माध्याह्न के समय इन खूँटियों में बँधी हुई डोर व उन खूँटियों की लम्बी छाया के गर्भ में से इस तरह खींची जाती है कि वह डोर वर्तुलपाद को किसी एक रेखा में काटे। इससे मध्याह्नकालीन रवि के नतांश मालूम होते हैं। अन्य ग्रहों के भ्योत्तरकालीन नतांश भी इसी तरह ज्ञात होते हैं। वेधगत नतांशों से (अक्षांश का धनर्ण संस्कार देकर) ग्रहों की क्रान्ति मालूम होती है। जिस दिन व जिस समय रवि की क्रान्ति शून्य होती है वह समय विषुवायन (equinox) का द्योतक होता है। भित्तियंत्र से ग्रहों की वक्रीमार्गी गति का भी ज्ञान प्राप्त होता है।

(५) **शंकुयंत्र**—शके १८५९ में सम्राट् के उत्तर के तरफ नये यंत्र की स्थापना की गई है, जिसे शंकुयंत्र कहते हैं। हमारे वेध-प्रक्रिया में शंकु का व तद्वारा प्राप्त छायार्क-वेध का बहुत महत्त्व है। यह यंत्र ११ फुट त्रिज्यामित चक्रकार ओटले के रूप में हैं। इसके केन्द्र में ४ फुट ऊँचा शंकु लगाया है और ओटले के किनारे पर शुद्ध दिक्साधन करके दिगंश के अंक खुदवाये हैं। रवि-चन्द्र के सूक्ष्म दिगंश व उन्नतांश का ज्ञान इस यंत्र से अच्छी प्रकार से होता है। इस यंत्र के ओटले पर, शंकु छाया का प्रत्यक्ष वेध लेकर, सायनराशिसंक्रमणकालदर्शक रेखाएँ निकली हुई हैं, जिनसे किसी भी दिन छाया की स्थिति देखकर ही, रवि किस राशि में है यह स्पष्टतया मालूम होता है। इसी यंत्र से रवि का सूक्ष्म माध्याह्न काल व तत्कालीन क्रान्ति मालूम होती है।

**चिन्तन :**

पुनर्जन्म का सिद्धान्त वैसे तो खोजने पर अन्यान्य देशों में किसी न किसी रूप में मिल जा सकता है, परन्तु कर्मफल-प्राप्ति का सिद्धान्त कहीं भी नहीं मिलता। यह बात इतनी सच है कि पिछली शताब्दी में पण्डितों में यह साधारण विश्वास-सा हो गया था कि जहाँ कहीं पुनर्जन्म का सिद्धान्त है, वहीं वह भारतीय मनीषा की देन है। सुप्रसिद्ध ग्रीक दार्शनिक पाइथागोरस ने पुनर्जन्म के सिद्धान्त को माना है और उसे लेकर प्राच्य विद्याविशारदों में एक समय में काफी मनोरंजक वाग्युद्ध हो गया है। विलियम जोन्स, कोल ब्रुक गार्वे, होपकिन्स प्रभृति विदेशी विद्वानों ने स्वीकार किया है कि उक्त सिद्धान्त को पाइथागोरस ने किसी भारतीय पण्डित से ही सीखा था।



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

# उज्जयिनी से प्राप्त सिक्कों पर शैवधर्म का प्रभाव

□ डॉ. श्रीमती भारती श्रोती

उज्जयिनी में अति प्राचीनकाल से शैवधर्म का प्रभाव रहा है। किसी समय यहां ८४ लिंगों के मंदिर थे। जो शैव धर्म की लोकप्रियता की पुष्टि करते है। मध्यप्रदेश में शैवधर्म की ४ धारायें प्रचलित थी। शैव, कालावल, पाशुपत व कापालिक। इस स्थापना के लिये किसी तर्क और प्रमाण की आवश्यकता नहीं हैं। गुप्तोत्तर काल में यह नगरी शैवों की तीर्थ स्थली बन चुकी थी। इसके अनेक शासक माहेश्वर अथवा परम माहेश्वर की उपाधि से विभूषित थे। १२वीं शती तक यह नगर शैवधर्म का महत्त्वपूर्ण केन्द्र था। मुस्लिम आक्रमण के प्रभाव से शैव साधना भी आन्दोलित हुई। फलतः साधक वर्ग भी स्थानान्तरित हुये। उज्जयिनी तान्त्रिक पाशुपतों की पीठ स्थली भी रही है। शंकर दिग्विजय से भी स्पष्ट होता है कि यहां कापालिक निवास करते थे।

उज्जयिनी में अति प्राचीन काल से शैव धर्म का प्रभाव रहा है। यह कहना अत्यन्त दुष्कर है कि यहां शैव धर्म का प्रादुर्भाव कब से हुआ। उज्जयिनी में शैव धर्म के प्रभाव को ज्ञात करने के लिये हमें पुरातात्विक व साहित्यिक साधनों का आश्रय लेना पड़ता है।

पुरातत्व के आधार पर उज्जयिनी में शैवधर्म के प्रादुर्भाव के प्रमाण प्रारम्भिक रूप से सिक्के है। इन सिक्कों द्वारा जहां एक और नगर के प्राचीन शैवधर्म का ज्ञान होता है, वही दूसरी और नगर की मूर्तिकला के प्रारम्भिक स्वरूप का ज्ञान होता हैं।

उज्जयिनी में शैव धर्म की स्थापना के प्रारम्भिक प्रमाण के सिक्के है जिन पर शिव आकृतियां उभरी हुई है। इन सिक्कों को पुरातत्ववेत्ता ३७० ई.पू. से २०० ई.पू. के मानते हैं।[1]

कुछ गोल सिक्कों के अग्रभाग पर दंड कमण्डल धारण किये हुये शिव अंकित है, तथा छः श्रंग पर्वत श्रृंखला का पहाड़ी चिन्ह, अर्द्धचंद्र व ध्वजा अंकित है। तथा सवितस लिखा है। पार्श्व भाग में दो वृषभ अंकित है।[2]

जे.एन. बनर्जी ने भी उज्जयिनी सिक्कों पर अंकित पुरूषाकृति की शिव से समीकृत किया है।[3]

कुछ सिक्कों पर तीन मुख वाली खड़ी पुरूषाकृति को कनिंघम ने महाकाल से समीकृत किया है।[4] परन्तु एलन ने इस पुरुषाकृति को कार्तिकेय से समीकृत किया है।[5]

वस्तुतः यह आकृति कार्तिकेय की नहीं हो सकती है। क्योंकि शैवधर्म के ग्रन्थों में शिव को त्रिमुखी कहा है साथ ही पृष्ठ भाग पर अंकित दो वृषभ पर्वत श्रेणियां तथा चन्द्रमा शिव के प्रतीकात्मक स्वरूप है। परवर्ती सिक्कों का अध्ययन करने पर यह ज्ञात होता है कि धास्तव में त्रिमुखी आकृति शिव ही है। क्योंकि कुंषाण कालीन सिक्कों पर त्रिमुखी शिव का अंकन है जिससे स्पष्टतः प्रकट होता है कि उज्जयिनी में ईसा से ३००-२०० वर्ष पूर्व शैवधर्म का प्रभाव था। शैवधर्म के अनुयायी अपने आराध्य देव शिव तथा उनके प्रतीकात्मक स्वरूपों को सिक्कों पर अंकित कर, उनके प्रति अपना भक्ति भाव प्रदर्शित करते थे।

सिक्कों पर अंकित तीन पर्वत श्रृंखलायें व चन्द्रमा



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जिन्हें कुमारस्वामी त्रिशिंग पर्वत मानते है।[६] शिव की एक उपाधि शंशाक शेखर भी है।

शिवलिंग का अंकन भी उज्जयिनी सिक्कों पर हुआ है। डॉ. बनर्जी ने उज्जयिनी सिक्कों पर शिवलिंग के अंकन का उल्लेख किया है।[७]

श्री एलन ने भी उज्जयिनी सिक्कों में शिवलिंग के अंकन का उल्लेख किया है।[८]

सिक्कों पर शिववाहन नंदी का अंकन, त्रिशूल का अंकन शिवलिंग का अंकन आदि शिव से सम्बन्धित है। अतः यह सप्रमाण प्रमाणित होता है कि ईसा पूर्व तृतीय व द्वितीय शताब्दी में उज्जयिनी में शैवधर्म का प्रभाव था।

सन्दर्भ ग्रन्थ :


१. दी इंडियन न्यूमिसमेटिकस क्रानीकल भाग ३-४ पृष्ठ-१८२
२. अरनल ऑफ द न्यूमिसमेटिक सोसायटी ऑफ इंडिया भाग-३२ सन् १९७० पृष्ठ-७७ क्वाइन्स ऑफ अर्ली उज्जयिनी रूल में
३. डेवलपमेन्ट ऑफ हिन्दू आइकानोग्राफी पृष्ठ-११७
४. क्वाईन्स ऑफ दी एन्शियेन्ट इंडिया पृष्ठ
५. ए केटलाग ऑफ दी इंडियन क्वाईन्स पृष्ठ-२४५-५२
६. कुमार स्वामी। आ.जेड. १९२७-२८५, १७९
७. डेवलपमेन्ट ऑफ हिन्दु आइकोनोग्राफी पृष्ठ-११४
८. ए केटलाग ऑफ इंडियन क्वाईन्स पृष्ठ-८५


## क्षिप्रा-तट

अवन्ती महात्म्य के अनुसार इस भू-मंडल पर क्षिप्रा के समान कोई पवित्र नदी नहीं है। पौराणिक कथा है कि भगवान शिव द्वारा त्रिशूल से विष्णु की तर्जनी बिद्ध कर देने से बहे रुधिर की धार से ही क्षिप्रा हुई।

हरसिद्धि के पार्श्व भाग में बह रही सुसलिला पुनीत क्षिप्रा के दोनों ओर सुन्दर घाट बने हैं। इसके तट पर १८ प्रमुख तीर्थ हैं। तथा इसमें स्नान का देश के अन्य सभी तीर्थों में स्नान से अधिक महत्व है। इसमें कार्तिक एवं वैशाख माहों में स्नान का विशेष धार्मिक महत्व है। इसके तट पर प्रतिवर्ष कार्तिक एवं वैशाख माह में मेले तथा गंगा दशहरा होता है। यहीं प्रति वर्ष १२ वर्ष में सिंहस्थ (कुम्भ) होता है।

## मोक्ष-प्राप्ति

माधवे धवले पक्षे सिंह जीवे त्वजे रवौ।
तुलाराशि निशा नाथे स्वाति भे पूर्णिमा तिथौ।।
व्यातीपाते तु सम्प्राप्ते चन्द्र-वासरे संयुक्ते।
कुशस्थली-महाक्षेत्रे स्नानि मोक्षम्वाप्नुयात्।।

## विक्रम-सभा

नररूप रत्नों से सजी थी वीर विक्रम की सभा;
अब भी जगत में जागती है, जगमगी जिनकी प्रभा।
जाकर सुनो उज्जैन मानो, आज भी यह कह रही;
मैं मिट गई, पर कीर्ति मेरी तब मिटेगी, जब मही।
—मैथिलीशरणगुप्त



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

# परमारकालीन व्याकरण-शिक्षा-सहायक नाग-बंध

□ बापू (ल.श्री.) वाकणकर, 'लिपीकार'
इंस्टिट्यूट ऑफ टाइपोग्राफिकल रिसर्च, पुणे-2

पृथ्वी के रत्नों में जो स्थान 'कोहिनूर' हीरे का है, वैसा भारत के हजारों शिलालेखों में अनन्य साधारण स्थान प्राप्त है परमारों के व्याकरण-शिक्षा-सहायक उत्कीर्ण नागबन्धों का जो आज तक बड़ा ही उपेक्षित रहा है। इनमें से वर्ण-माला के व्याकरण से सम्बन्धित एक नाग बंध उज्जयिनी के गुफा स्थित महाकाल मंदिर के ठीक ऊपर तथा उदयेश्वर मंदिर की पीछे की गुमटी में है। इसी की प्रतिकृतियाँ धार की भोजशाला के एक स्तंभ पर तथा उदयपुर (भोपाल के करीब), तथा ऊन के मंदिरों में है। दूसरा दो नागों से गूँथा हुआ नाग बंध धार की भोज की भोजशाला में उपस्थित है।

## परमार—उदय और अस्त

भारतवर्ष के इतिहास में परमार राजवंश का स्थान भी बड़ा महत्वपूर्ण परंतु दुर्लक्षित रहा है। महाराजाधिराज श्री हर्ष के समय से ही हिंदुकुश के परे हूण भारत पर नजर लगाये थे परंतु श्री हर्ष के डर से दबे हुए थे उस काल के इतिहास की कल्पना हमें ह्यु-एन त्संग से ज्ञात है। उसके बाद अरब स्थान जो राजनीति प्रधान पंथ निर्माण हुआ उसके फलस्वरूप हजरत महम्मद के मृत्यु के पचास वर्ष के अंदर ही सीरिया, पैलेस्टाइन, बैझेंटाइन ईजिप्त, इराण, तुर्कस्तान धराशाई हो गए थे। अरबों ने इसवी ६३६ में थाना (बम्बई) पर आकम्रण किया था उसे सातवाहनों ने उखाड़ फेंका था। ई. ७०९ में सिंध पर आक्रमण दाहर ने रोका तथा अफगान हिंदू शहानशहाओं ने ई. ७०० तक रोका था। अचलगढ़ (राजस्थान) से निकले अग्निवंशी परमारों ने दक्षिण दिशा में उतर कर उज्जयिनी में वास्तव्य कर मध्यप्रदेश का संरक्षण ६ शताब्दियों तक किया परंतु राजपूत आपस में लड़ते रह गये और इसका पूरा फायदा उत्तर से आए आक्रमिकों ने पूरी तरह लिया यह बात सर्वविदित है। प्राचीन उज्जयिनी गढ़ कालिका क्षेत्र के किले में थी उसका स्थानांतर महाकालवन में चारों और परकोटा बांधकर हुआ (वहाँ का स्थान आज कोट मोहल्ला कहलाया जाता है।) इस वंश में क्रमशः कृष्णराज, वैरीसिंह, सीयकदेव (८७५ ई.) प्रभावशाली रहे। सिंधुराज (१०१० ई. से १०५५) पृथ्वीवल्लभ मुंजदेव और भोजराज ने अधिक सुरक्षित धारानगरी बसाकर वहां राजधानी स्थानांतरित की, परंतु उज्जयिनी की गरिमा भी बढ़ाई। भोजराजा के बाद उदयादित्यदेव (१०६० ई.) तथा नरवर्मनदेव (११०४ ई.) इन्होंने अपने नाम इस नागबंध पर उत्कीर्ण किये थे। १२३२ में दिल्ली के सुलतान शम्सुद्दीन अल्तमश ने उज्जैन तथा धार पर आक्रमण कर सारे मंदिर तुड़वा दिये, जिसमें महाकाल मंदिर पूरा उध्वस्त किया गया। साढ़े चार सौ वर्ष बाद जब देवी अहिल्या बाई के प्रतिनिधी द्वारा महाकाल का जीर्णोद्धार कराया तब भोजराज के सुकविबंधु रचित 'अवन्ति-महाकाल-प्रशस्ति' के टूटे अवशेष मिले उसमें से यह मूल्यावान नागबंध का बचा हुआ शिलालेख



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

एक गुमटी में सुरक्षित रखा गया था।

### नाग बन्धों का महत्व तथा विशेषता

महाकाल परसिर में स्थित खंडित नागबंध के ऊपर की 'अवन्ति-महाकाल-प्रशस्ती' के ७८ श्लोक नष्ट हो चुके है। यहां ७९ से ८४ तक श्लोक सुरक्षित है। ८३ क्रमांक के श्लोक में वर्णन है कि "कालान्तक महाकाल ओंकारेश्वर की मूर्ति अवन्ति नगरी के हृत्पुण्ड लीक को सुशोभित कर रही है और यह अद्वितीय शांभव कृति भूवरण भोजदेव द्वारा अलंकृत की है।"

प्रशस्ती के नीचे पाणिनीय वर्ण समाम्नाय तथा वैदिक माहेश्वरी सूत्र है, जिस के अन्त में प्रत्याहार के लिये स्वयं पाणिनी महर्षी ने कुछ विशेष 'हलन्त व्यंजन' जोड़े थे। इस के अन्त में उत्कीर्ण श्लोक कहते हैं— "उदयादित्य देव प्रस्तुत यह वर्ण नागकृपाणिका का अनेक राजा तथा कवियों के हृदय पर रोपित है।" दूसरा श्लोक कहता है—"यह असिपुत्रिका शिवमहेश्वर स्थित वर्णों से बनी है जो उदयादित्य देव ने नागबन्धाकृति में वर्णो से अंकित की है। कवि मणियों में श्रेष्ठ सुकविबन्धू ने यह नागबंध निर्माण किया है। (चित्र क्र. १)

इस नागाकृति के शीर्ष पर प्रणवरूप 'ॐ' कार है। फण पर पांच मूल स्वर है, कंठ पर मिश्र स्वर 'ए ऐ ओ औ' हैं। गले पर अर्धस्वर 'ह य व र ल', चौकट में 'क-चं-ट-त-प' वर्गों के वर्ण (जो माहेश्वरी सूत्र के अनुसार भी पढ़े जा सकते हैं—जैसें हयवर, ल, ञ म ङ ण न, झ भ घ ढ ध, ज ब ग ड द, ख फ छ ठ थ, च ट त क प य, श ष स ह।) अंत में अयोगवाह चिह्न-जिह्वामूलीय, उपध्मानीय, अनुस्वार, विसर्ग तथा ह। नागाकृति के पूंछ पर नामों के अंत्याक्षरों को उट्टंकित किया है।

### नागयुगल बंध

दूंसरे प्रकार का दो नागों से बना परमाकालीन नाग बंध धार की भोजशाला में खुदा हुआ है, जिसकी प्रतिकृती साथ में दी हैं। (चित्र क्रमांक २)

इस नागयुगल बंध का विषय है "धातु प्रत्यय माला"।

ऊपर के आधे विभाग में एक वचन, द्विचन, बहुवचन के आत्मनेपदी तथा परस्मैपदी प्रत्यय हैं। नीचे के विभाग में १, ४, ५, ७, ८, ९ वर्गों को 'धातु' खुदे हैं। सबसे नीचे अंत्य 'प्रत्यय' खुदे हुये हैं। विद्यार्थियों को कातंत्र व्याकरण पढ़ाने में इन कोष्टकों का उपयोग होता था। उदयादित्य तथा नर वर्म्म और सुकवि बंधु का जो स्पष्ट उल्लेख उज्जयिनी के नागबंध में प्राप्त होता है, उनके स्थान पर धार के लेख में जो "ह्येषा वक्षसि रोपितः" लिखा है, इससे यह अनुमान निकल सकता है कि मूल उज्जैन का है और धारवाला लेख उसकी नकल है।

यह असामान्य नागबंध दर्शकों तथा अभ्यासकों को आश्चर्य मुग्ध बना देते हैं। अल्तमश ने जिस प्रकार उज्जयिनी का महाकाल मंदिर ध्वस्त कर दिया था, वैसे धार का राजमार्तंड राजवाड़ा नष्ट कर उसके सामान से लाट मस्जिद खडी की, शारदासदन भोजशाला नष्ट कर वहां कमाल मौला मस्जिद बनी। भोजशाला से जो "पारिजात मंजरी" नाटिका प्राप्त हुई है इसमें भोजराजा ने विक्रमादित्य तथा शालिवाहन ने राजाओं जो सरस्वती को आश्रय दिया उसका वर्णन इन शब्दों में किया था—"अतीते विक्रमादित्ये गते स्तं सातवाहने। कवि मित्रं विशश्राम तस्मिन् देवी सरस्वति।" (सर्ग ११, ३०।) पृथ्वी वल्लभ मुंजराजा के बाद केवल १४ वे वर्ष के भोजराजा ने कलाचुरी के राजा गांगेयदेव तथा तैलप चालुक्या राजा के आक्रमण को ध्वस्त कर दिया था। इस विक्रम के कारण ही "कहा राजा भोज कहाँ गांगली तेलन्।" यह मुहवारा बना है। हिमालय तक दिग्विजय करने वाले चोल वंश के राजराजा को भोज ने परास्त किया था। जब सोमनाथ मंदिर लूटकर मुहम्मद गजनवी वापस जा रहा था तो भोजराजा के आधिपत्य में राजपूत राजाओं ने मिलकर उसका प्रतिकार किया तो गजनवी रास्ता बदल कर भागा था। इस घटना का निर्देश धार से प्राप्त शिलालेखों में मिला है। एक लेख में है—"असिकिरण रज्जु-बद्ध जेणं जयकुंजरंतुमं हरति। जय कुंजरस्य थंभो......।" दूसरे शिलालेख में है— तइ रखिखआ तुरुक्क धरणी। अज्ज वणेसुसत्ते। सिर वेड़ताण



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दुहं।"

जैसा विजयस्तंभ दिल्ली के मिहिरावली (कुतुब मिनार) के सामने समुद्रगुप्त ने खड़ा किया जिस पर आज तक जंग नहीं चढ़ता, वैसा ही जंग न पकड़ने वाला दूसरा सौ फूट ऊंचा अखंड लौह स्तंभ ढ़लवाकर भोजराजा ने अपने "राजमार्तंड' मंदिर के सामने खड़ाकर उसके चारो ओर चांदी मढ़वाई थी। उस स्तंभ के जो तीन टुकड़े इतस्ततः मिले वे इकट्ठा कर पुरावस्तु विभाग द्वारा आज लाट मस्जिद के सामने रख दिये हैं

भोजराजा जैसा रण धुरंधर था उतना ही प्रतिभा वान कवि और लेखक भी था। "कैटेलागस कैडेलोगोरम" नामक जर्मन विद्वान औफ्रेक्ट के सूची ग्रंथ में भोजराजकृत ३३ ग्रंथों के नाम छापे है। काव्य, अलंकार शास्त्र, कोश, व्याकरण, धर्मशास्त्र, योगशास्त्र, वैद्यकशास्त्र, पशु चिकित्सा, ज्योतिष शास्त्र, शिल्पशास्त्र जिसमें विमान विद्या भी है, ऐसे भोजराजकृत ग्रंथ थे। अस्तु।

## पर्यटकों का आकर्षण

यदि इस महाकाल मंदिर के शिलालेख को साफ सुथरा तथा सुरक्षित रखा जाय, तो विश्वभर से उज्जैन आने वाले पर्यटकों का यह नागबंध तथा अवन्ति-महाकाल-प्रशस्ति एक अमूल्य ऐसा आकर्षण केन्द्र बन सकेगा।

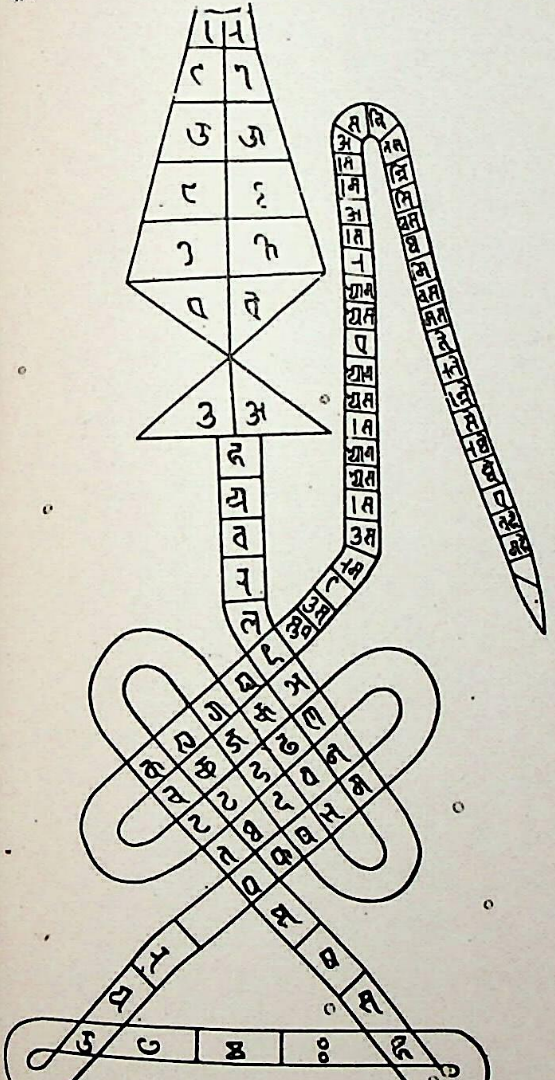

चित्र क्र. १ - महाकाल मन्दिर, उज्जैन स्थित नागबंध

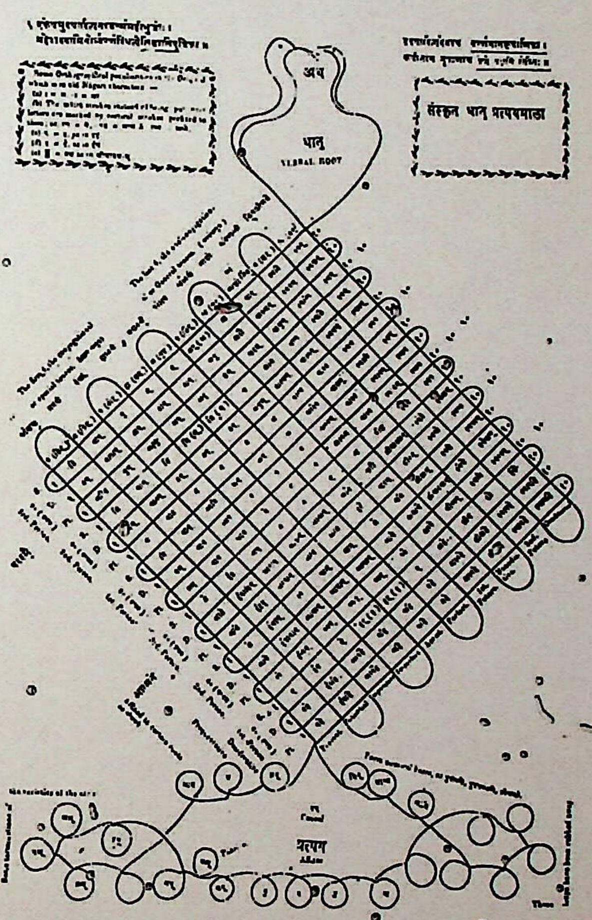


चित्र क्र. २ - धार की भोजशाला में खुदा हुआ परमारकालीन नागबंध



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

# उज्जैन का सिंहस्थ महापर्व

□ इन्द्र कुमार

पुराणों में कुम्भ महापर्व के बारे में अनेक कथाएं वर्णित हैं। वर्णन शैली तथा प्रस्तुतीकरण की दृष्टि से उनमें वैविध्य होते हुए भी उनकी कथावस्तु में साम्य है। इन कथाओं का निष्कर्ष यह है कि एक बार जब देवताओं और दानवों ने समुद्र मंथन किया तब समुद्र से जो रत्न निकले, उनमें अमृत से भरा एक कलश भी था। अमृत कलश को दैत्यों से बचाने के लिये देवताओं ने इसकी सुरक्षा का दायित्व, बृहस्पति, चन्द्रमा, सूर्य और शनि को सौंप दिया। देवताओं की कूटनीति दैत्यों की दृष्टि में आ गई परिणामस्वरूप वे उसे प्राप्त करने को देवताओं के पीछे भागे। बारह दिन और रात देवों दैत्यों की दौड़ होती रही। इसी प्रकार चारों देवों को पूरी पृथ्वी की परिक्रमा करनी पड़ी। इस बीच अमृत कलश हरिद्वार, प्रयाग, नासिक और उज्जैन के पवित्र स्थल पर गया। इन चारों तीर्थों में रखे गये अमृत की स्मृति की चिरंजीवी आयोजन रखने के लिए धर्माचार्यों ने चारों तीर्थों में बारह वर्ष में 'कुम्भ' महापर्व के आयोजन का विधान बनाया है।

स्कन्दपुराण के अनुसार इन्द्र का पुत्र जयन्त अमृत कलश लेकर भागा था, उसके पीछे लगे देवों और दैत्यों ने संघर्ष किया। परिणामस्वरूप कुम्भ में से अमृत की बूंद प्रयाग, हरिद्वार, नासिक और उज्जैन में गिरी।

इन कथाओं की धार्मिक पवित्रता का गणितीय एवं ज्योतिषी शास्त्रीय महत्ता से घनिष्ठ सम्बन्ध है। ग्रहों तथा नक्षत्रों के परिभ्रमण के अनुसार कुम्भ पर्व का योग निर्धारित किया जाता है। कुंभ महापर्व के लिए ख्यात चारों तीर्थों के लिए ग्रहयोग की विशिष्टता भी पृथक-पृथक है। प्रयाग में होने वाले महापर्व पर मकर राशि में सूर्य, वृष राशि में गुरु तथा माघ मास का होना आवश्यक है।

उत्तरप्रदेश में गंगा तट पर स्थित हरिद्वार और प्रयाग, महाराष्ट्र में गोदावरी तट पर नासिक और मध्यप्रदेश में शिप्रा तट पर उज्जयिनी के कुम्भ महापर्व का चारों स्थानों के कुम्भ महापर्वों में विशिष्ट स्थान है क्योंकि इसमें सिंहस्थ महापर्व भी सम्मिलित है।

उज्जयिनी में सिंहस्थ महापर्व के आयोजन के लिये योगों का होना जरूरी है। वे योग हैं—(१) बैशास मास, (२) शुक्ल पक्ष, (३) पूर्णिमा, (४) मेष राशि सूर्य (५) सिंह राशि पर बृहस्पति (६) तुला राशि पर चन्द्र (७) स्वाति नक्षत्र (८) व्यतिपात योग (९) सोमवार (१०) उज्जयिनी स्थल सिंहस्थ महापर्व की विशिषटता के कारण ही उज्जयिनी तीर्थ देवताओं के लिये भी दुर्लभ माना गया है। यदि इस महायोग का संयोग नहीं हो पाया तो बारह वर्ष की अवधि बीत जाने पर भी सिंहस्थ नहीं होता। इसी प्रकार इस पर्व पर सिंह राशि गुरु का स्थित होना परमावश्यक है। यदि सिंह पर बृहस्पति नहीं आए तब भी सिंहस्थ का आयोजन संभव नहीं हो सकता। संवत् २०१२ में सिंह का गुरु से मेल नहीं हो पाया था इसलिये सिंहस्थ नहीं मनाया गया।

सिंहस्थ महापर्व के सुअवसर पर देवता ऋषि-मुनि सिद्ध महापुरुष तथा तपस्वी उज्जयिनी आते हैं। देश-विदेश से करोड़ों तीर्थयात्री व्यापारियों तथा सांस्कृतिक मंडलों



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

महाकाल ज्योतिर्लिगं प्राकृतिक छटा में

Raj Guru Math Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

का मिलन यहां होता रहा है।

सभी धर्मों के मतावलंबी साधू सन्यासी सिंहस्थ महापर्व पर जनकल्याण की भावना से प्रेरित होकर उज्जयिनी में अपने पंथ का अनुगम करने का उपदेश देने आते हैं। एक मास के समागम में क्षिप्रा स्नान का पुण्य प्रत्येक नागरिक अर्जित करता है।

सिंहस्थ महापर्व की परम्परा अत्यन्त प्राचीन है तथा यह मानवीय ज्ञान के विकास के साथ ही विकसित भी है इस महापर्व के राजकीय व्यवस्था की परम्परा की शुरुआत सिंधिया शासकों ने की। यह महापर्व भारतीय ज्योतिष खगोल धर्म दर्शन और राष्ट्रीय एकता का सच्चा प्रतिनिधि है। भारत में मृत्यु के पश्चात् विभिन्न योनियों में आत्मा का विचरण तथा पुर्नजन्म की मान्यता है। पुराणों में मृतकों की आत्मा की शांति के लिये श्राद्ध कर्म का विधान है। पितरों के श्राद्ध के लिये रुद्रसर, मानसरोवर, वैद्यनाथ, सरस्वती, क्षिप्रा नदी तथा महाकाल तीर्थ सबसे उत्तम माने गये हैं। ऐसी मान्यता है कि गया तीर्थ में किया गया श्राद्ध सर्वोत्तम है। इसी के समकक्ष क्षिप्रा नदी के तट पर किया गया सिंहस्थ कालीन श्राद्ध माना गया है।

उज्जयिनी मूल्यतः धर्म प्रधान नगरी के रूप में प्रसिद्ध रही है। शिव को रुद्र के रूप में प्रतिष्ठित करके वैदिक धर्म का नया स्वरूप यहां पल्लवित होता रहा है। कालान्तर में यह नगरी शैव मतावलंबियों तथा भारतीय संस्कृति के भिन्न स्तंभों का केन्द्र बन गई।

**शिव का प्रशान्त रूप :**

बैठे संयमी त्रिलोचन शिव
पर्यङ्क-बंध-स्थिर पूर्वकाय, ऋजु आयत झुके विशालकन्ध,
उत्फुल्ल कमल-से लाल-लाल
उत्तत करतल रख अङ्क मध्य,
उध्दत भुजंग वृत्त-जटाजूट,
कणविसक्त रुद्राक्ष सूत्र, द्विगुणित अटूट,
कण्ठ द्युति से नीलातिनील
मृगचर्म वर्म-सा कस अढोल,
लोचन उनके भ्रूभंग-विरत,
किञ्चित प्रकाश से स्तिमित-उग्रतारक, अडोल,
अस्पन्दित पक्ष्म-अराल-जाल,
नतनिम्न-प्रान्त नासाग्रबद्ध,
अंतश्चारी चंचल प्राणानिल के
निरोध से स्थिर नितान्त
घनघुम्मर वृष्टि-पूर्व अम्बुद
या निस्तरंग निस्पंद जलाशय
याकि निवात-निकम्पित दीपशिखा-से अचल-शांत

—संकलित



RajGuru ... Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

# कुम्भ-सिंहस्थ पर्व का योग कब होता है?

☐ उर्वशी सुधाकर

प्राचीन काल में देवताओं एवं दानवों ने अमूल्य रत्न व अमृत पाने हेतु "रत्नाकर" समुद्र का मंथन किया था। समुद्र मंथन हेतु मन्दराचल पर्वत को मथनी एवं सर्पराज वासुकी का रस्सी के रूप में उपयोग किया गया था। समुद्र मन्थन के फलस्वरूप भिन्न-भिन्न चौदह रत्नों के साथ अमृत कुम्भ (कलश) भी निकला। अमृत से भरे कलश को देवता एवं दानव दोनों प्राप्त करना चाहते थे। देवताओं के संकेत पर इन्द्र का पुत्र जयंत कलश को लेकर भागा। दानवों के गुरु शुक्राचार्य के संकेत पर दानवों ने उसका पीछा किया। देवता एवं दानवों में घमासान युद्ध हुआ। अमृत के कलश को बचाने एवं छिपाने हेतु सूर्य, चन्द्र एवं बृहस्पति को हस्तान्तरित किया गया। इस युद्ध एवं हस्तान्तरण में कलश से अमृत की कुछ बूँदें प्रयाग (इलाहाबाद), हरिद्वार, नासिक एवं उज्जैन पर गिरी।

उक्त युद्ध देवताओं के बारह दिन अर्थात् मनुष्यों के बारह वर्ष तक चला था। इस तरह बारह वर्षों में चार कुम्भ पृथ्वी पर अमृत बूँदें गिरने के स्थानों पर होते हैं तथा आठ कुम्भ पर्व देवलोक में होते हैं। अमृत कलश को चन्द्रमा ने गिरने से, सूर्य ने फूटने से तथा बृहस्पति ने दानवों के हाथों में जाने से बचाया था। इन कारणों से इन तीन ग्रहों के विशिष्ट योग आने पर, जहां चार स्थानों पर अमृत बूँदें गिरी थीं, वहाँ कुम्भ पर्व मनाया जाता है।

स्कन्दपुराण के अनुसार उज्जैन के कुम्भ पर्व में ये दस योग विशिष्ट होते हैं—१. वैशाख मास, २. शुक्ल पक्ष, ३. पूर्णिमा, ४. मेष राशि पर सूर्य का होना, ५. सिंह राशि पर बृहस्पति का होना, ६. चन्द्र का तुला राशि पर होना, ७. स्वाति नक्षत्र, ८. व्यतिपात योग, ९. सोमवार, १०. स्थान उज्जैन। ये समस्त योग बारह वर्षों में एक बार आते हैं। यह योग बारह वर्ष पूर्व तीस अप्रैल उन्नीस सौ अस्सी को या विक्रम संवत् २०३७ वैशाख शुक्ल पूर्णिमा को आया था।

सिंह राशि पर बृहस्पति के होने तथा मेष राशि पर सूर्य के होने से सिंहस्थ होता है। इस तरह से उज्जैन के कुम्भ में सिंहस्थ का भी समावेश रहता है। अतः उज्जैन के कुम्भ की सिंहस्थ नाम से प्रसिद्धी है।

### कुम्भ-सिंहस्थ महापर्व का महात्म्य

पुराणों के अनुसार अमृत कलश से गिरी बूँदों से वे स्थान तीर्थ हो गये एवं यहां की पवित्र नदियाँ (गंगा, यमुना, सरस्वती, गोदावरी तथा क्षिप्रा) अमृतमयी हो गई हैं।

स्कन्द पुराण के अवन्तिकाकाण्ड में वर्णन है—"सिंहस्थ कुम्भ के दस महायोगों के अवसर पर यदि क्षिप्रा में स्नान किया जाय तो मुक्ति प्राप्त होती है।" इस महापर्व के अवसर पर देवतागण भी धरती पर आते हैं तथा पावन नदी में स्नान करके जल की पाप नाशक शक्ति में वृद्धि करते हैं।

---

**सप्तपुरियाँ :**

अयोध्याः मथुरा, माया काशी, काञ्ची अवंतिका।<br>पुरीः द्वरावती चैव सप्तैता मोक्षदायिकाः।।



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

# सिंहस्थ स्नान की परम्परा

☐ डॉ. भगवतीलाल राजपुरोहित

भारतीय आध्यात्मिक जीवन में जल का बड़ा महत्व है। प्रत्येक उत्सव धार्मिक कृत्य और पर्व के समय स्नान एक आवश्यक कार्य है। यह स्नान घर अथवा कुएं आदि की अपेक्षा समीपवर्ती सरोवर, कुंड, नदी या समुद्र में करना अधिक पुण्यदायक माना जाता है। दैनिक सन्ध्या पूजा में भी जल का होना आवश्यक है। आचमन, मार्जन, तर्पण, देवार्चन सबके लिए जल अपेक्षित है। विशेष पर्वों पर और उनमें भी विशेष स्थानों पर स्नान करना अधिक महत्त्वपूर्ण है। संवत्सर के आरंभ, चन्द्र-सूर्य ग्रहण, मकर एवं मेष की संक्रान्ति, माघ, वैशाख एवं कार्तिक की पूर्णिमा, रामनवमी, कृष्ण जन्माष्टमी, गंगा-दशहरा आदि के अवसर पर लाखों नर-नारी तीर्थ स्थानों में एकत्र होकर स्नान करते हैं। ग्रहों की विशेष स्थिति पर कुंभ और सिंहस्थ के स्नान की प्रथा इसी परम्परा की एक महत्त्वपूर्ण कड़ी है।

केवल जल से किया गया स्नान ही स्नान नहीं है। मनु स्मृति में चार प्रकार के स्नान का उल्लेख है—

आग्नेयं भस्मना स्नानं, सलिलेन तु वारुणम्।
आपोहिष्ठेति च ब्राह्यम् वायव्यं गोरजं स्मृतम्।।

अर्थात् भस्म द्वारा स्नान आग्नेय, जल द्वारा स्नान वारुण, आपोहिष्ठा इत्यादि मंत्र से स्नान ब्राह्य और गोधूलि से किया गया स्नान वायव्य कहलाता है।

अग्निपुराण के अनुसार जल स्नान के नित्य, नैमित्तिक, काम्य, क्रियांग, मलापकर्ष और क्रिया छः प्रकार हैं।

महाभारत में कहा गया है कि स्नान करने वाले को बल, रूप, स्वर और वर्ण की शुद्धि स्पर्श और गन्ध की शुद्धता, ऐश्वर्य, कोमलता तथा सुन्दर स्त्री प्राप्त होती है।

वैदिक काल से ही जल के देवता वरुण की पूजा चली आ रही है। वास्तव में पवित्र नदियों में स्नान से पापों का नाश होने की यह भावना वरुणदेव के प्रत्यक्ष रूप के दर्शन की भावना से जुड़ी हुई है। विविध स्थानों में स्नान का महत्व उसकी ऐतिहासिकता, पवित्रता तथा परम्परा पर आधारित होता है। कुम्भ का पर्व प्रयाग, हरिद्वार, नासिक तथा उज्जैन इन चारों स्थानों पर क्रमशः मनाया जाता है। निर्धारित विशेष समय तथा निर्दिष्ट पवित्र स्थान के कारण पर्व का महत्त्व बढ़ जाता है।

इन पर्वों का महत्त्व इतना अधिक माना गया है कि पुराणों के अनुसार देवतागण भी स्नान के लिए धरती पर उतर आते हैं।

सेन्द्रासुरगणाः सर्वे सेन्द्रादित्या मरुद्गणाः।
स्नातुमायान्ति गौत्म्यां सिंहस्थे च बृहस्पतौ।।
(स्कन्दपुराण)

पुराणों में सिंहस्थ सम्बन्धी अनेक सन्दर्भ हैं। विशेष योग उपस्थित होने पर स्नान की महत्ता का स्कन्दपुराण में स्पष्ट उल्लेख है—

सिंह राशिं गते जीवे मेषस्थे च दिवाकरे।
तुला राशिं गते चन्द्रे स्वातिनक्षत्र संयुते।।
सिद्धियोगे समायाते पंचात्मा योगकारकः।
एवं योगे समायाते स्नानदानादिका क्रिया।। (स्कन्दपुराण)



RajGuru Math, Shivala Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

द्वादशाब्दे तु भो भद्रे! शंकरेण कृतं स्वयम्।
(स्कन्दपुराण)

कुम्भ सम्बन्धी पौराणिक कथा इस प्रकार है—

देवताओं और दानवों द्वारा समुद्र मंथन से १४ रत्न प्राप्त हुए जिनमें अंतिम था अमृत से भरा हुआ कुम्भ या कलश। देवताओं ने सोचा कि यदि दानवों को अमृत मिला तो वे अमर हो जाएंगे। इस स्थिति को बचाने के लिए देवताओं के परामर्श से इन्द्र का पुत्र जयन्त उस कलश को लेकर भागा और दानव उसके पीछे चल पड़े। दानवों ने बलपूर्वक कलश छीनना चाहा। इस प्रयत्न में कलश से छलककर अमृत की बूंदें हरिद्वार, प्रयाग, नासिक और उज्जैन में गिरीं। अतः इन स्थानों पर स्नान करना और वह भी अमृत गिरने के समय में मोक्षदायक माना जाता है। कलश से अमृत गिरने के कारण ही इस पर्व का नाम कुंभ पड़ा। सिंह राशि में बृहस्पति के स्थित होने के कारण उज्जैन में होने वाले कुंभ पर्व को सिंहस्थ के नाम से पुकारा जाता है। स्कन्दपुराण में कहा गया है—

पृथिव्यां कुम्भपर्वस्य चतुर्धा भेद उच्यते।
चतुःस्थले निपतनात् सुधाकुम्भस्य भूतले।।

विष्णुपुराण में हरिद्वार के सम्बन्ध में कहा गया है—

पद्मिनीनायके मेषे कुम्भराशिगते गुरौ।
गंगा द्वारे भवेद् योगः कुम्भनामा तदोत्तमम्।।

प्रयाग के सम्बन्ध में कहा गया है—

मकरेच दिवानाथे वृषराशिस्थिते गुरौ।
प्रयागे कुंभयोगो वै माघमासे विधुक्षये।।

नासिक के सम्बन्ध में कहा गया है—

कर्के गुरुस्तथा भानुश्चन्द्रश्चंद्रक्षये तथा।।
गोदावर्यां तदा कुंभो जायतेऽवनि मंडले।।

उसी प्रकार उज्जैन के सम्बन्ध में कहा गया है—

मेषराशिंगते सूर्ये सिंहराश्यां बृहस्पतौ।
अवन्तिकायां भवेत्कुंभः सदामुक्तिप्रदायकः।।

उज्जैन के स्नान का महत्त्व अधिक इसलिए भी है कि इसमें सिंहस्थ तथा कुम्भ दोनों पर्व मिलते हैं। उज्जैन के कुम्भपर्व में ये दस योग मुख्य होते हैं— १. वैशाख मास, २. शुक्लपक्ष, ३. पूर्णिमा, ४. मेष राशि पर सूर्य का होना, ५. सिंह राशि पर बृहस्पति का होना, ६. चन्द्र का तुला राशि पर होना, ७. स्वाति नक्षत्र, ८. व्यतिपात योग, ९. सोमवार, १०. स्थान उज्जैन।

माधवे धवले पक्षे सिंहे जीवे त्वजे रवौ।
तुलाराशौ क्षपानाथे स्वातिभे पूर्णिमातिथौ।।
व्यतिपाते तु सम्प्राप्ते चन्द्रवासरसंयुते।
एते दश महायोगाः स्नानान्मुक्तिफलप्रदाः।।

स्कन्दपुराण में उज्जैन तथा क्षिप्रा की प्रशस्ति मुक्तकंठ से की गई है। क्षिप्रा नदी के सम्बन्ध में निम्नलिखित विवरण दिया गया है—

उज्जैन में अत्रि नामक एक ऋषि ने तीन हजार वर्ष तक कठोर तपस्या की। तपस्या के इन तीन हजार वर्षों में उन्होंने अपने एक हाथ को ऊपर ही उठाये

---

**शाश्वतबाणी :**

हिन्दूशास्त्र मनुष्य के लिये केवल कर्मफल भोग और ऋण चुकाने की ही व्यवस्था नहीं करते, वे कुछ धनात्मक कार्य करने का भी विधान करते हैं। ये धनात्मक कार्य ही पुरुषार्थ हैं। पुरुषार्थ चार है—धर्म अर्थ, काम और मोक्ष। इन्हीं पुरुषार्थों की प्राप्ति के उपाय बताने के लिये समूचा संस्कृत साहित्य लिखा गया है। जो कुछ भी इस साहित्य में पुरुषार्थ की प्राप्ति के लिये लिखा गया है, वह दुनिया के साहित्य में बेजोड़ है। जो कुछ कर्मफल का और ऋणों के चुकाने का निर्देश देने के लिये लिखा गया है, वह केवल समाजशास्त्री के कुतूहल का विषय है। पुरुषार्थों में सबसे श्रेष्ठ पुरुषार्थ-परम पुरुषार्थ मोक्ष है। मोक्ष के विधायक वेद उपनिषद, आरण्यक, दर्शनशास्त्र आदि विषय केवल भारतीय साहित्य की ही नहीं संसार के साहित्य के गर्व और गौरव की वस्तु है।



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

रखा। तपस्या के पश्चात् जब उन्होंने अपने नेत्र खोले तब देखा कि उनके शरीर से दो स्रोत प्रवाहित हो रहे हैं—एक आकाश की ओर चला गया, जो बाद में चन्द्र बन गया और दूसरा धरती की ओर, जिसने बाद में क्षिप्रा नदी का रूप धारण किया।

सर्वत्र च दुर्लभा क्षिप्रा सोमस्सोम ग्रहस्तथा।
सोमेश्वरः सोमवारः सकाराः पंचदुर्लभाः

(स्कन्दपुराण)

क्षिप्रा स्नान का महत्त्व अवंतिका खण्ड में इस प्रकार वर्णित है—

कार्तिके चैव वैशाखे उच्चे नीचे दिवाकरे।
क्षिप्रास्नानं प्रकुर्वीत क्लेशदुःखनिवारणम्।।

सिंहस्थ कुम्भ के उपरोक्त वर्णित दस महायोगों के अवसर पर यदि क्षिप्रा में स्नान किया जाय तो मुक्ति प्राप्त होती है। इससे यह प्रमाणित होता है कि उज्जैन के सिंहस्थ कुम्भ स्नान को कितना पवित्र माना गया है।

पुराणों तथा धार्मिक परम्परा के अनुसार उज्जैन और सिंहस्थ कुंभ का अविनाभाव सम्बन्ध रहा है। भारतीय कला भवन, हिन्दू विश्वविद्यालय वाराणसी के आचार्य एवं सुप्रसिद्ध कलाविद् डॉ. आनन्दकृष्णजी के पास मालवा कलम का एक मुगलकालीन चित्र है जिसमें दिखाधा गया है कि क्षिप्रा तट पर साधुओं के दो दलों में युद्ध हो रहा है जिसे अकबर निरपेक्ष भाव से देख रहा है। मानों धार्मिक मामलों में हस्तक्षेप नहीं करना चाहता इसीलिए वह मूक दर्शक है।

इस सिंहस्थ कुम्भ की राजकीय व्यवस्था का विधिवत् सन्दर्भ मराठाकाल से प्राप्त होता है। विक्रम-स्मृति-ग्रन्थ (पृ. ५५५-६) में श्री भास्कर रामचन्द्र भालेराव ने इसका विवरण देते हुए उस व्यवस्था का संकेत किया है। महाराज राणोजी शिन्दे के राज्यकाल में सिंहस्थ मेले की प्रतिष्ठा और राजकीय व्यवस्था का आरम्भ हुआ।

गुरु ग्रह मेषादि बारह राशियों में से प्रत्येक राशि पर हर बारहवें वर्ष आता है और बारह मास तक उसी राशि पर रहता है। सिंह राशि पर गुरु होने पर वैशाख शुक्ल पूर्णिमा को क्षिप्रा नदी में स्नान करना पुण्यमय माना जाता है। तदनुसार प्रति बारहवें वर्ष सिंहस्थ के मेले पर बैरागी, गुंसाई, उदासी, नाथ सम्प्रदायों और अघोरी पंथ तथा उन पंथों के अन्तर्गत सभी शाखा-उपशाखाओं के अनुयायियों का समूह उज्जैन में आता है। अनुयायियों और अखाड़ों का दृश्य दृश्य देखते ही बनता है। एक प्राचीन प्रमाण से तो वृश्चिक राशि पर गुरु होने पर उज्जैन में मेला होने का उल्लेख पाया जाता है किन्तु अनंत्तर सिंहस्थ गुरु में नासिक तीर्थ में एकत्रित साधु पड़ौस में ही पवित्र पर्व वैशाख शुक्ल पूर्णिमा को उज्जैन ही आने लगे। महाराजा राणोजी के समय से ही राजकीय सहायता से सिंहस्थ समारोहपूर्वक होने लगा। अतएव बहुत संभव है कि महाराष्ट्रस्थ नासिक में एकत्रित साधुओं को उज्जैन में खासतौर पर आमंत्रित्त कर सिंहस्थ गुरु के योग पर होने की प्रथा प्रचलित की गयी हो। एक प्राचीन प्रथा के अनुसार उज्जैन में कुम्भ तब होता है जब सूर्य तुला में बृहस्पति वृश्चिक में होता है।

डॉक्टर काणे के 'धर्मशास्त्र का इतिहास' (भाग-५, पृ. २२६-७) के अनुसार जब बृहस्पति सिंह राशि में रहता है तो शत्रु पर आक्रमण, विवाह, उपनयन, गृह-प्रवेश, देवप्रतिमा-स्थापना आदि शुभकर्म नहीं होते (मलमासतत्त्व पृ. ८२८, भुजबल-निबन्ध पृ. २७४, शुद्धिकौमुदी, पृ. २२२)। ऐसा विश्वास है कि सिंहस्थ बृहस्पति में सभी तीर्थस्थान गोदावरी में आ जाते हैं अतः उस समय उसमें स्नान करना चाहिए। (ऐसा काल एक वर्ष तक रहता है)। सिंहस्थ गुरु में विवाह एवं उपनयन के संपादन के विषय में कई मत हैं। कुछ लोगों का कथन है कि विवाह एवं अन्य शुभ कर्म मघा नक्षत्र वाले वृहस्पति (अर्थात् सिंह के प्रथम १३।। अंश) में वर्जित हैं। अन्य लोगों का कथन है कि गंगा एवं गोदावरी के मध्य के प्रदेशों में विवाह एवं उपनयन सिंहस्थ गुरु के सभी दिनों में वर्जित है किन्तु अन्य कृत्य मघा नक्षत्र में स्थित गुरु के अतिरिक्त कभी भी किये जा सकते हैं। अन्य लोग ऐसा कहते हैं जब



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सूर्य मेष राशि में हो तो सिंहस्थ गुरु का कोई अवरोध नहीं है। (स्मृति कस्तुभ पृ. ५५४-५९)। ऐसा विश्वास किया जाता है कि अमृत का कुम्भ जो समुद्र से प्रकट हुआ, सर्वप्रथम देवों द्वारा हरिद्वार में रखा गया, तब प्रयाग में और तब उज्जैन में और अंत में नासिक के पास त्र्यंबकेश्वर में।

उज्जैन पर मराठों के आधिपत्य के बाद सिंहस्थ पर्व की व्यवस्था में एक नया अध्याय प्रारम्भ हुआ। उज्जैन में सिंहस्थ पर्व पर आने वाले स्नानार्थियों की सुविधा के लिए विशेष व्यवस्था की गई। वह व्यवस्था आज भी कायम है और इस अवसर पर शासन द्वारा यात्रियों को यथासंभव सभी सुविधाएँ उपलब्ध कराई जाती हैं।

## कुंभ का योग

घटे गुरौशशिसूर्या दामोदरे स्थिता यदा।
धारायांच तदा कुम्भौ जायते खलु मुक्तिदः।।

—तुला राशि पर जब बृहस्पति, सूर्य और चंद्र का संयोग हो एवं तिथि अमावस्या हो तब उज्जयिनी में मुक्तिदायक कुंभ योग होता है।

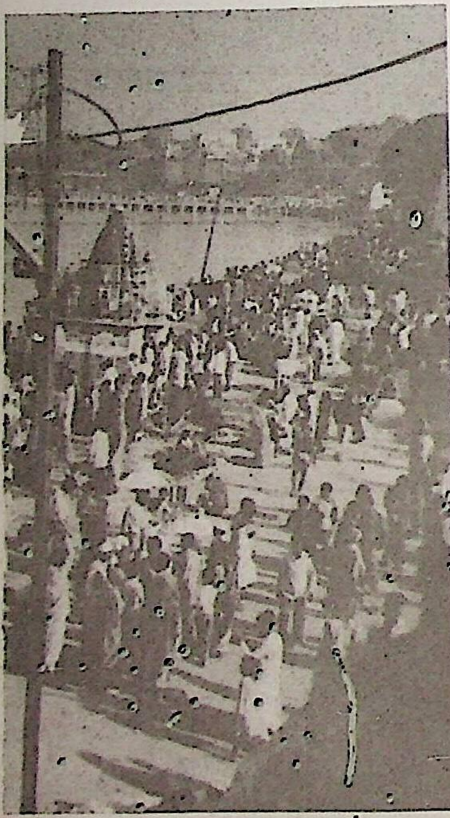

## विक्रमादित्य के नवरत्न

महाराजा विक्रमादित्य के दरबार के नवरत्न थे—१. धन्वन्तरी (वैद्य) २. क्षपणक (न्यायशास्त्री एवं दर्शन शास्त्री) ३. अमरसिंह (साहित्यकार) ४. शंकु (शिक्षाशास्त्री) ५. वैताल भट्ट (नीतिशास्त्री) ६. घटखर्मर (कवि) ७. कालिदास (महाकवि) ८. वराहमिहिर (ज्योतिषशास्त्री) ९. वर रुचि (वैयाकरण)

## समुद्र-मंथन से मिले चौदह रत्न

श्री, रंभा, विष, वारुणी, अमिय, शंख, गजराज,
धन्वन्तरि, धनु, धेनु, तरु, शशि मणिअरु, बाजि।

महाकालः सरिच्छिप्रा गतिश्चैव सुनिर्मला।
उज्जयिन्यां विशालाक्षी वासः कस्य न रोचते।।
स्नानं कृत्वा नरौ यस्तु महानस्याहि दुर्लभम्।
महाकालं नमस्कृत्य नरो मृत्युं न शोचयेत।।



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitized by eGangotri/Sarayu

डॉ. वि.श्री. वाकणकर

Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

# कला साधक इतिहास पुरुष डॉ. वाकणकर

□ डॉ. दुर्गा शर्मा

यह समय की विडम्बना ही थी कि उस समय पढ़ाये जाने वाले इतिहास का प्रारंभ सिकन्दर के आक्रमण और पोरस की हार से होता था किन्तु इतिहास की इस घटना को मानने के लिए विष्णु का मन कतई राजी नहीं हुआ। फलस्वरूप भारत का सच्चा इतिहास जानने की जिज्ञासा दिन प्रतिदिन बढ़ती गई। वाकणकर को किशोरावस्था में मिले संस्कार, उनसे उत्पन्न सारे के सारे विचार शनै-शनै वाचन, सर्वेक्षण, देशाटन और अभ्यास में परिवर्तित हो गये।

मृदुभाषी कुशल व्यवहारिक और संघर्षशील वाकणकर बाल्यकाल और किशोरावस्था में अनेक बाधाओं से जूझते हुए पूर्णतः स्वावलम्बी ढंग से आगे बढ़े। उनका ज्ञान पूर्णतः स्वार्जित रहा, इस अत्यंत परिश्रमशील, और अध्यवसायी ने हजारों मीलों की कष्टमय यात्रा धैर्यपूर्वक की व भारतीय इतिहास की सच्चाई को जानने के लिए एक निष्ठ भाव से शोध कार्य कर वह बढ़ा, निरन्तर बढ़ते रहना ही उनकी अपनी विशेषता रही।

**प्राचीन इतिहास प्रेमी एक छात्र :**

महाविद्यालयीन छात्र दिनों में अमरीका दूतावास की ओर से एक प्रदर्शनी का आयोजन उज्जैन में हुआ। इसके संयोजक प्रोफेसर डेविड ने एवं छात्र एवं विद्वज्जनों की उपस्थिति में संबोधित कर कहा था कि मुझे खुशी है कि आपके यहाँ डॉ. शिवमंगलसिंह 'सुमन' जैसे विद्वान् हैं किन्तु मैं यह जानना चाहता हूँ कि आपके विश्वविद्यालय में एक भी ऐसा छात्र है जिसके मन में प्राचीन इतिहास जानने की ललक है, उसने कम से कम सौ वर्ष पुरानी पाण्डुलिपियों की खोज की हो।

प्रो. डेविड के इस कथन से सन्नाटा छा गया, सुमन जी भी निरुत्तर हो गये। जब सुमन जी की दृष्टि सबसे अंतिम पंक्ति में बैठे वाकणकर पर पड़ी तो वे बड़े आत्मविश्वास और प्रसन्न मुद्रा में उसी क्षण पुकार उठे, अरे वाकणकर तुम वहाँ बैठे हो। आओ इधर मंच पर आओ मैं तुम्हारा परिचय कराना चाहता हूँ। मुझे गर्व है कि विक्रम विश्वविद्यालय के हमारे इस छात्र ने न सिर्फ सौ वर्ष पुरानी पाण्डुलिपियां खोजी हैं वरन् उन पर कार्य भी किया है। फिर क्या था प्रदर्शनी कक्ष का सारा सन्नाटा तालियों की गड़गड़ाहट में गूँज उठा।

प्रो. डेविड वाकणकरजी के कार्य और उनके संग्रहालय से बहुत प्रभावित हुये। अमरीकी दूतावास की ओर से पहली बार इनकी प्रदर्शनी का आयोजन बम्बई में हुआ। फिर दिल्ली में और तीसरे ही सप्ताह में प्रदर्शनी का आयोजन अमरीका में हुआ। उस अल्पावधि में वाकणकर जी की ख्याति नगर, प्रांत और देश की सीमा को लांघ कर समुद्र पार पहुँच गई।

डॉ. वाकणकर (गुरुजी) ने माधवनगर उज्जैन में सन् १९५३ में भारतीय ललित कला संस्थान की स्थापना की। आगे चलकर इसी संस्थान में शैलचित्र शोध संस्थान की स्थापना सन् १९८३ में की। विक्रम विश्वविद्यालय उज्जैन में पुरातत्व विभाग और संग्राहलय संस्थापक की श्रेय गुरुजी को ही जाता है। स्वयं एक संस्था व विश्वविद्यालय के रूप में जाने-माने इस निर्माता ने अनेक संस्थाओं को कुछ करने की दिशा में जन्म दिया। साथ ही उन्हें संरक्षण भी प्रदान किया। अनेक सेमिनारों में शोध पत्र वाचन किया तथा अध्यक्षीय



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उद्बोधन देकर भारतीय इतिहास की अस्मिता से जन सामान्य और विदों को विस्मित किया।

**राष्ट्रवादी चिंतक :**

भारतीय राष्ट्रवादी इस चिंतक ने सरस्वती शोध अभियान की प्रमुख भूमिका निभाई, इसी से प्रभावित होकर प्रख्यात इतिहासविद् डॉ. रघुवीरसिंह ने कहा, "डॉ. वाकणकर की एक महत्त्वपूर्ण उपलब्धि यह भी रही है कि उन्होंने सैकड़ों किलोमीटर की यात्राएं कर ऋग्वेद में सादर वर्णित और महाभारत तथा पुराणों में 'पुण्यात्मा' के रूप में पूजित पुण्य सलिला नदी सरस्वती के हिमालय में उद्गम स्थल को लेकर, उसके सिरसा जिले में दृशब्दती (हार्कडा) नदी में विलीन तथा अन्तः सलिला होकर अंततः सिंधु में मिलने तक के अधिकांश मार्ग को देखदाख कर उसे मानचित्र पर अंकित कर दिया।"

**पुरातत्व अन्वेषक :**

वाकणकरजी ने प्राच्य विद्या विकास की दिशा में सन् १९५५ से ८० तक महेश्वर, नावड़ाटोड़ी, भोपाल, उज्जैन, भानपुरा, गांधीसागर बांध, मोड़ी, मनोटी, आवरा, कायथा, चम्बल घाटी, भीमबेटका, मन्दसौर, इंदौर, दंगवाड़ा, रूनीजा आदि अनेक स्थलों पर पुरातात्विक उत्खनन किया। उन्होंने भारतीय इतिहास की परतों की गहराई में कई गुफाओं को प्रकाशित किया, परती जमीन तोड़ी, कई भूस्तर में बेधक दृष्टि से अन्वेषण किया। इतना ही नहीं आपने तीस परमार कालीन, तीन ऑलिकर, तीन अशोकन ब्राम्ही एवं मौखरी अभिलेखों का वाचन किया, उन पर शोध कार्य किया।

१९६१ में बर्मिंघम विश्वविद्यालय इंग्लैण्ड और इकोल दी फोयेर सार्बोन विश्वविद्यालय, पेरिस में उत्खनन तथा प्रोफेसर गुहा तथा मादाम हेरी मार्टीन के साथ कार्य किया। सन् १९६१ से ६३, १९६६ और ८० में इंग्लैण्ड, फ्रांस, इटली, स्पेन, जर्मनी, ग्रीस, स्विट्जरलैण्ड, आस्ट्रिया में पुरातत्व व कला विषयक कार्य किये। १९६६ में अमरीका के छब्बीस विश्वविद्यालयों एवं संस्थानों में भारतीय शैल चित्रकला और चालकोलिथिक संस्कृति पर व्याख्यान हेतु आप आमंत्रित किये गये। प्री. कोलंबियन राक आर्ट इन यू.एस.ए. का सर्वेक्षण किया। १९८० में कापो द पोंत, इटली में भी आपको आमंत्रित किया गया।

१९८४ में 'भारतीय संस्कृति में कला की विश्व को देन' विषय पर अमरीका में आयोजित प्रदर्शनी की संरचना में उभरते हुए एवं जाने-माने चित्रकारों को प्राथमिकता देकर अपने सहधर्मी-कर्मी व शिष्यों को ऊँचाई प्रदान करने की दिशा में वाकणकरजी की भूमिका उनके विशाल व्यक्तित्व की पहचान बनी। प्रदर्शनी के साथ-साथ अमरीका के अनेक नगरों में वाकणकरजी के व्याख्यानों का आयोजन हुआ।

देश-विदेश के प्राचीन, अर्वाचीन स्थापत्य, शिल्प, दृश्य और व्यक्ति चित्रों के लगभग 2 हजार रेखांकन रचकर डॉ. वाकणकरजी ने भारतीय चित्रकला जगत् में एक कुशल चित्रकार के रूप में कीर्तिमान स्थापित किया।

**जीवन साधक :**

सन् १९८७ में डॉ. वाकणकर पक्षाघात से पीड़ित होने पर भी उनकी कलम नहीं रुकी, वे अपने ध्येय के प्रति किसी भी तरह विचलित नहीं हुए। बिस्तर पर लेटना उन्हें कदापि नहीं भाया, इसीलिए थोड़ा-सा स्वास्थ्य लाभ पाते ही वे अपनी आकांक्षा के अनुरूप साउथएन की यात्रा पर निकल पड़े, वहां शोधपत्रों का वाचन कर विश्व विद्वज्जनों से अपनी धारणा और मान्यता पर विश्वसनीयता अर्जित की।

डॉ. वाकणकर मानते हैं कि भारत की एक ऐतिहासिक परम्परा है जो धुंधले अतीत से प्रारंभ हुई और संघर्षों के बीच जीवित रही। किन्तु इस इतिहास की परम्परा की घोर उपेक्षा और तथ्यों के तोड़मरोड़ने में इस देश के प्रति जितना अन्याय पाश्चात्य विद्वानों ने किया, उतना शायद ही किसी देश के साथ हुआ होगा। दुर्भाग्य तो यह भी है कि इन पाश्चात्य विद्वानों के राग में राग अलापने की अहम् भूमिका का निर्वाह देश के कतिपय विद्वानों द्वारा हुआ। ऐसी विषाक्त परिस्थिति का दुष्परिणाम यह हुआ कि देशवासी वर्षों तक उसी मानसिकता का दास बने रहे।



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वाकणकरजी भारतीय इतिहास की विसंगति को दूर करने में जीवन पर्यन्त जुटे रहे। उन्होंने अपने लेखों, अन्वेषणों, शोध-पत्र वाचन एवं ऐतिहासिक गोष्ठियों में नवीन किन्तु प्रामाणिक अनेक तथ्य प्रस्तुत कर पाश्चात्य विद्वानों की थोथी मान्यताओं पर प्रहार किये।

वे भारतीय इतिहास के पुनः लेखन की दिशा में कुछ आधारभूत कारण मानते थे। उनके अनुसार किसी भी देश का इतिहास लिखने के लिए राष्ट्रीय कोटि-कोटि जनों की मान्यताओं का साक्षत्कार करना नितान्त आवश्यक मानते हैं। किन्तु विदेश दृष्टि और उसका अन्धानुकरण किसी देश का वास्तविक इतिहास नहीं रच सकता। फिरंगी विचारकों ने ठीक शासकीय मान्यता से भारत का किन्तु विसंगतिपूर्ण इतिहास रचकर भ्रमित किया।

**कायथा उत्खनन :**

भारतीय इतिहास केवल राजनीतिक घटनाओं तिथियों का कालक्रम आंकलन ही नहीं है, वह संस्कृति का सामाजिक रूप है। कला, धर्म-दर्शन, सामाजिक, आर्थिक परिस्थिति व समसामयिक अन्य संस्कृतियों से आदान-प्रदान का एक बहुआयामी राष्ट्रीय अस्मिता है।

उक्त दिशा में वाकणकरजी औलिकर, मौखरी, परमार एवं राष्ट्रकूट नरेशों की राजनीति एवं सांस्कृतिक स्थितियों के अनेकों नवीन प्रमाण शिलालेखों, ताम्र-पत्रों, मुद्रायें एवं हस्तलिखित ग्रंथों के रूप में प्रस्तुत किये। आपने मालवा के परमारों की स्थापत्य मूर्ति व चित्रकला पर अनेकों शोध-पत्र लिखकर परमार वंश के सांस्कृतिक दाय को भी प्रस्तुत किया।

इतना ही नहीं डॉ. वाकणकर ने भारतीय प्रागैतिहास के विभिन्न कालखण्डों को अपने वैज्ञानिक स्वरूप से प्रस्तुत कर उसे विश्व की प्रागैतिहासिल संस्कृति में अग्रणीय स्थान दिलायां। विश्व विख्यात पुरातत्व शास्त्री जे.डी. क्लार्क, वर्कले, अलचीन एवं ग्रेगरी एल. पोर्शल ने वाकणकरजी की मान्यताओं को अपने ग्रंथों में स्थान ही नहीं दिया, अपितु उन्होंने स्वीकार किया कि यह तपस्यापरक संशोधन नई पीढ़ी के लिए वरदान सिद्ध होगा।

डॉ. ए.एल. बाथम ने गुरुजी के कायथा उत्खनन से प्राप्त नये तथ्यों व पुराणों से उनका तादात्म्य बिठाने की मान्यता को अपने ग्रंथ 'दि वण्डर देट वाज इण्डिया' में स्थान दिया। भोज के समरांगण सूत्रधार व 'युक्ति कल्पतरु' के आधार पर वायुयान के निर्माण की भारतीय अन्वेषणात्मक पद्धति को भी स्वीकार किया। गेहूँ विषयक भारतीय खोज, मोड़ी ताम्र-पत्र व भोज के शिलालेख पर किये शोध को डॉ. सुनीति, डॉ. दिनेशचन्द्र सरकार जैसे अग्र पंक्ति के इतिहास लेखकों ने स्वीकार कर अपने लेखन में समाविष्ठ किया।

**दंगवाड़ा से कालीबंगा तक :**

भारतीय इतिहास के आधार पर डॉ. साहब ने पुरातत्वीय उत्खनन से प्राप्त सामग्री भी माना है। स्वतंत्र भारत में पुरातत्व की कुदाल से जो नया इतिहास पर्त दर पर्त अपनी कहानी अपनी जुबानी कह रहा है, उससे मैके, सरजॉन मार्शल, ज्यूनर व पिगट की मान्यता अब झूठी प्रमाणित हो रही है। ताम्रशमीय यज्ञ की प्राचीन परम्परा के प्रमाण दंगवाड़ा से लेकर 'कालीबंगा' तक उजागर हो गये हैं। लाथक का बहुआयामी व्यापार अपनी गौरवगाथा कह रहा है और रोमन सिक्कों की प्राप्ति से भारतीय वाणिज्य उद्योग का सार्वभौम स्वरूप और अधिक स्पष्ट हो गया है। पुरातत्व ने अब यह सिद्ध कर दिया है कि आर्य कहीं बाहर से नहीं आये और न ही उन्होंने सिंधु सभ्यता को नष्ट किया। भारतीय पुरातत्व जगत् में वेटद्वारका और सिंधु घाटी में किये नवीन उत्खनन द्वारा अब कितने ही निष्कर्ष बदले हैं, कितने ही अंधकाराच्छन्न युग कपाटों को उन्मुक्त कर नया विचार-जगत प्रस्तुत किया। प्रत्येक वर्ष नई सामग्री का प्राप्त होना हमें बाध्य कर रहा है कि भारतीय इतिहास नये सिरे से लिखा जाये, उसका सही मूल्यांकन किया जाये।

ऐसा भारतीय संस्कृति का पुजारी, राष्ट्रीय जन चेतना का सजग प्रहरी, उसकी अस्मिता को जन-जन तक पहुँचाने का शंखनादी, निरन्तर चरैवेति लक्ष्य लिये जो चलता रहा। जंगल हो या खण्डहर, वहां वह भटकता रहा, उसमें खोजता रहा भारतीय संस्कृति के अर्वाचीन विलुप्त प्रमाण।



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

# संस्कृति - पुरुष डॉ. वाकणकर

□ —डॉ. विष्णु भटनागर

कहा गया है कि गति जीवन है, परिवर्तन भी जीवन है। तो अन्ततः लगता है कि जीवन का अंतिम परिवर्तन मरण है। स्थिरता, निश्चलता, गतिहीनता यही मृत्यु है। व्यक्ति के मरण पर हम इसकी देह के अस्तित्व को मिटा देते है। मगर जिसके गुण और कृतित्व विकीर्ण हो जाते हैं उसे मरण मिलकर भी नहीं मिलता वह कभी धीमे, कभी तेज, कभी संयुत भाव से, कभी आवेश में उनमें चलायमान रहता है, जो उसे जीवित बनाये रखना चाहते हैं। पुरानी मान्यताओं के सामने कितने भी प्रश्न चिन्ह लग गये हों, व्यक्ति पूजा पर कितना भी संक्रांतिकाल आया हो, मगर संस्कृति और इतिहास को बनाये रखने के लिए प्रेरक व्यक्ति का अस्तित्व स्वीकारा गया है। फिर वह व्यक्ति पूज्य होने पर अमरत्व पा लेता है। उसके मूल स्वरूप की भले ही इतिश्री हो गई हो, मगर अपने गुण और इच्छा में उसके स्वरूप को समाहित करने वाले अपने तईं उसे बदलते मूल्यों में बहुत रूपों में उभारते हैं। फिर बनता जाता है इतिहास और परत-दर-परत पड़कर किंवदन्तियां हो जाती हैं।

गुरू का वह स्थान जो गुरूकुल परम्परा के युगों में था आज न रहा हो, पर गुरू का अस्तित्व उपरोक्त कारणों से मिटता नहीं है। गुरू और शिक्षक—ये शब्द पृथक-पृथक व्याख्यायित होते हैं। गुरू का आभा मण्डल विस्तृत होकर अनेकों को आभासित करने की क्षमता रखता है। उसमें गुरू के प्रति शिष्य की प्रतिबद्धता कालातीत है। वह अलग-अलग जगह पनपती है। गुरू का प्रभाव दूरगामी प्रभाव है। अंग्रेजी दिनांक ३ अप्रैल को गुरूवर्य पद्मश्री डॉ. वि.श्री. वाकणकरजी की पुण्यतिथि है, जो भारतीय तिथि के अनुसार चैत्रवद्य प्रतिपदा के दिन आती है। पुण्यतिथि श्राद्ध दिवस की मानिंद है। यों तो गुरू का स्मरण प्रतिपल प्रतिदिन का विषय है। इसमें दिनांक और तिथि आड़े नहीं आती। इनकी निश्चित समारोह-प्रसंग के कारण उपस्थित होती है।

लेकिन वे भारतीय संस्कृति-सभ्यता और इतिहास के व्याख्याकार थे और इन चीजों को महत्व देते थे, हालांकि वे तो इतिहास के पूर्व की बातें प्रागेतिहास के अन्तर्गत करते थे और जीवन भर उसी के शोध और व्याख्या में उन्होंने जीवन व्यतीत किया। इसे व्यक्त करते हुए वे कहते थे कि मेरा अधिकांश समय आदिवासियों, ग्रामीणों, वनवासियों के बीच जंगलों में व्यतीत होता है, जिनका वास्ता इतिहास और आधुनिक सुख-साधनों से न होकर अभावों और प्राचीन सभ्यता-संस्कृति के मध्य समाहित है। उनकी बहुमुखी प्रतिभा के मूल में विदुषी राष्ट्र सेविका पत्नी श्रीमती लक्ष्मी वाकणकर का अप्रतिम योगदान रहा है।

डॉ. वाकणकरजी का ज्ञान ऋषि-तुल्य-परम्परा का था। किसी एक विषय की सीमा में वे कैद नहीं रहे। उन्होंने कला के माध्यम से पुरातत्व को रसोवैसः का सिद्धान्त दिया। इतिहास की शुष्कता को साहित्य का माधुर्य प्रदान किया। वे प्राचीन व आधुनिक लिपियों एवं अनेक देशी-विदेशी भाषाओं के जानकार थे। उन्होंने पुरातत्व जगत् को कम खर्चीली उत्खनन प्रणाली, मैदानी कर्मकाण्ड और नयी भारतीय शब्दावली प्रदान की।



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अंग्रेजी शब्दों के स्थान पर उन्होंने हिन्दी के शब्दों का प्रयोग किया और आवश्यकता पड़ने पर नये शब्दों का गठन भी किया। मेरे विचार से तो उन्होंने पुरातत्व के विषय में जितना हिन्दी भाषा को समृद्ध किया है उतना, अन्य किसी पुराविद् ने आज तक नहीं किया। इस विचार से वे पुरातत्व जगत् में अकेले अहिन्दी भाषी हिन्दी सेवी सिद्ध होते हैं इस बात को हिन्दी सेवी संस्थाओं को समझना चाहिए।

सुदीर्घकाल तक उनके संसर्ग में रहने और अत्यन्त नजदीक से उनकी कार्य प्रणाली को देखने का सौभाग्य पाने के उपरान्त मैं यह दावा करने की स्थिति में हूँ कि यदि उन्होंने प्रिन्स ऑफ वेल्स म्युज़ियम बम्बई और अमेरिका के संग्रहालय की नौकरी के प्रस्ताव को स्वीकार लिया होता, तो मालवा का पुरातत्व अपनी सम्पदा को गर्भ में ही छिपाये रह जाता और उसे विश्व में सर्वाति प्राचीन प्रागैतिहासिक शैल चित्रकला के अप्रतिम भण्डार का स्वामी होने का सेहरा बीसवीं सदी में बाँधने को नहीं मिलता। अजन्ता-एलोरा, सिन्धुघाटी, मोहनजोदड़ो की खोज ने विश्वकला जगत् में अपने अप्रतिम सौन्दर्य कला-सभ्यता-संस्कृति की मिसाल कायम की, उसे और प्राचीन समय में ले जाकर अहर्निश परिश्रम से डॉ. वाकणकरजी ने कला-पुरातत्व के जगत में शिखर पर पहुँचाया। उनका यह योगदान भारत रत्न, कालिदास सम्मान और शिखर सम्मान से भी ऊँचे सम्मान के कलश को चमचमाता रहेगा।

विक्रम विश्वविद्यालय के पुरातत्व उत्खनन एवं संग्रहालय विभाग में संयोजक के पद पर रहकर उन्होंने इस विभाग को अपने अध्यवसाय और अहर्निश परिश्रम से समृद्ध किया तथा अपनी उत्खनन विषयक उपलब्धियों से विश्व में इसका नाम अंकित कराया।

सादगी पूर्ण रहन-सहन, खानपान, जीवनयापन और सरल स्वभाव के इस महर्षि ने विश्व-भ्रमण कर ज्ञानार्जन किया और निःस्वार्थ भाव से उसे बाँटा और समय की शिला पर अमिट हस्ताक्षर किये।

हमारी भारतीय शास्त्र परम्परानुसार उन्होंने कठिन परीक्षा दी और जब समय आया तब सुविधाओं की उपेक्षा कर इहलोक से कूचकर गये। सिंगापुर के प्रथम प्रशान्त हिन्दू सम्मेलन में मार्च १९८८ के अंतिम सप्ताह में प्रस्थान के पूर्व उन्हें अन्तर्राष्ट्रीय पुरातत्व सम्मेलन आस्ट्रेलिया का भारतीय प्रतिनिधि चुना गया था। वे सितम्बर १९८८ में उसमें भाग लेने जाना चाहते थे इसलिए उन्होंने यू.जी.सी., भारत के विदेश विभाग और संस्कृति विभाग, मध्यप्रदेश संस्कृति विभाग और आस्ट्रिया के सम्मेलन संयोजकों को विदेश यात्रा व्यवस्था हेतु निवेदन किया था। उनका शोधपत्र स्वीकृत हो चुका था। मगर यात्रा व्यवस्था की आर्थिक चिन्ता के लिये वे सिंगापुर चले गये थे, जहां ३ अप्रैल १९८८ को अचानक हृदयगति रूक जाने पर उनका देहावसान हुआ। जबकि विडम्बना देखिये कि यहां उज्जैन में उनके निवास भारती कला भवन की डाक में आस्ट्रेलिया सरकार, भारत के संस्कृति विभाग आदि से उनकी विदेश यात्रा की आर्थिक व्यवस्था की सुविधा स्वीकार कर ली गई थी। आस्ट्रेलिया के सम्मेलन संयोजकों ने तो उन्हें अपने कार्यकारिणी मण्डल में सम्मिलित चयनित कर विशेष सुविधा प्रदान की थी। दूसरा पत्र मेरे हाथ में ही रह गया, जो कि मध्यप्रदेश के राज्यपाल प्रो. चाण्डी का था, जिसके द्वारा उन्होंने कुलाधिपति के नाते विश्वविद्यालयों के प्राध्यापकों के चयन मण्डल में उन्हें नामजद करने की पहल कर उनकी स्वीकृति चाही थी। मगर शायद परमपिता परमेश्वर को यह मंजूर न था। वे निरन्तर भ्रमण करते हुए भ्रमण-ब्रह्मलीन हो गये।

तीन माह की रोग शैय्या से मुक्ति पाकर जब वे स्वस्थ हुए तो उन्होंने जुलाई १९८६ में अपनो अचल सम्पति दान करके "वाकणकर भारती संस्कृति अन्वेषण न्यास उज्जैन" की स्थापना की। जिसका उद्देश्य उन्होंने पुरातत्व संग्रहालय, स्थायी कला दीर्घा, शैलचित्र शोध कार्य, कला, कर्मशाला, कला शिक्षण संदर्भ ग्रंथालय का निर्माण रखा। इसके निर्माण हेतु उन्होंने न्यासी मण्डल घोषित किया और जनहित हेतु जन सहयोग यात्रा पर निकल पड़े। देश भर में उनका सारस्वत सम्मान हुआ।



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

नवबंर १९८८ में न्यासियों ने उनका स्वप्न साकार करने के निमित्त पुराने भवन के स्थान पर नवीन भवन निर्माण का कार्यारंभ कर दिया। आज उसमें स्थायी पुरातत्व संग्रहालय, संदर्भ ग्रंथालय, शोधकक्ष, स्थायी कला दीर्घा और स्थानीय एवं बाहर के कलाकारों के लिये कला प्रदर्शनी हेतु कलावीथिका निर्मित हो गई है। इसके ऊपर भारती कला भवन ललित कला संस्थान पूर्व की भाँति चल रहा है। जिसकी स्थापना उन्होंने १९५३ में की थी। श्रद्धेय डॉ. वाकणकरजी की स्मृति को स्थायी स्मारक के रूप में बनाये रखने के लिए, उनके स्वप्न को साकार करने हेतु सन्नद्ध यह न्यास द्रुत गति नव-निर्माण कार्य में जुटा हुआ है। देश-विदेश में अनेक सक्रिय महानुभाव उनके कार्य को स्मरणीय बनाने में जुटे हुए हैं। अमेरीका में विश्व हिन्दू परिषद् डॉ. वाकणकरज़ी के संयोजन में निर्मित "विश्व को भारत की देन" प्रदर्शिनी का विभिन्न स्थानों पर प्रदर्शन करती है। आप्टे स्मारक समिति के तहत सरस्वती शोध अभियान का द्वितीय चरण प्रारंभ हो रहा है, जिसके प्रथम चरण को उन्होंने डॉ. वि.श्री. वाकणकरजी के नेतृत्व में पूरा किया था। इस यात्रा की ३६ घण्टों की वीडियो फिल्म यत्र-तत्र प्रदर्शित की जाती है। दिल्ली के विद्वान प्रोफेसर डॉ. वेदज्ञ आर्य ने सैकड़ों छायांकनों द्वारा वाकणकरजी की स्मृति को संजोया है। जिसका प्रदर्शन मई १९८८ में दिल्ली की श्रीधराणी कला दीर्घा में हुआ। रतलाम में वसन्तोत्सव पर उनकी स्मृति में कला प्रतियोगिता होती है। बिलपांक में विद्वान सम्मान किया जाता है। न्यास भी सारस्वत सम्मान देता है। संस्कार भारती आगरा, जिसके वे महामंत्री थे, अनेक सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन कर रही है। भारती कला भवन उज्जैन एक अखिल भारतीय कला प्रदर्शनी अपने संस्थापक डॉ. वाकणकरजी की स्मृति में प्रतिवर्ष आयोजित करने का संकल्प कर चुकी है। जिला पुरातत्व संघ उज्जैन ने पद्मश्री डॉ. वाकणकर स्मृति में पुरातत्व संग्रहालय की स्थापना कर दी है। जिसका विधिवत् उद्घाटन गणतंत्र दिवस १९८९ को हो चुका है। इस संघ के वे उपाध्यक्ष थे। इतिहास संकलन समिति द्वारा इतिहास पुरातत्व-ज्योतिष संगोष्ठी उनकी स्मृति में २२ अप्रैल १९८९ को आयोजित की गयी थी। वे इस समिति के मध्य भारत एवं गुजरात क्षेत्र के संयोजक रहे थे। न्यास के द्वारा उनकी स्मृति में लोकप्रिय व्याख्यान माला, उनके साहित्य का प्रकाशन, पुरातात्विक उत्खनन, संगोष्ठियाँ आदि का आयोजन होने वाला है। उन्होंने भारतीय इतिहास के पुनर्लेखन की आवश्यकता पुरजोर की थी। मगर इस दिशा में कारगर पहल होनी चाहिये ताकि आजादी के इतने वर्ष बाद भी नई पीढ़ी भ्रामक इतिहास पढ़ने से बचे, जो अंग्रेजों ने जानबूझकर षड्यंत्रपूर्वक लिखा था।

---

[लेखक डॉ. वाकणकर के अनन्य शिष्य हैं, इनके साथ उन्होंने देश भर में अनेक पुरातात्विक एवं कला यात्राएँ की हैं। वे वरिष्ठ कलाकार, कला निदेशक, साहित्यकार, अन्वेषक के साथ ही विभिन्न पत्रिकाओं के सम्पादक रहे हैं। 'वाकणकर भारती संस्कृति अन्वेषण न्यास' के सचिव हैं — सं.]

## क्षिप्रा का महत्व

नास्ति वत्स महीपृष्ठे सिप्रायाः सदृशी नदी।
यस्यास्तीरे क्षणान्मुक्तिः किं चिरात्सेवनेनवौ।।

पृथ्वी पर क्षिप्रा के समान और कोई नदी नहीं है, जिसके समीप जाने से क्षण भर में ही मुक्ति प्राप्त हो जाती है।

## महाकालेश्वर की महिमा

महाभारतं ततौ गच्छैन्नियतो नियतासनः।
कोटि तीर्थमुपस्पृश्य ह्यमेषफलं ज्ञकेत।।

महाकाल के निकटस्थ कोटि तीर्थ का स्पर्श होने से अश्वमेघ यज्ञ का फल होता है।



RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

Consistent, Stronger, Optimal-Setting.

VIKRAM
Premium
CEMENT

Vikram Cement. A unit of Grasim Industries Limited.

BOMBAY OFFICE:
808 Dalamal House, Nariman Point, Bombay 400 021.
Ph: 243484, 243507. Tlx: 011 85455 BRLA IN. Gram: VIKCEMENT.
FACTORY:
Vikramnagar, Tehsil Jawad, P O Khor, District Mandsaur, MP 458 470.
Ph: 240, 224, 225, 236, 232 (Khor). Tlx: 0730 3274 VKRM IN. Gram: VIKRAM (Jawad).

Nexus/GIL/4a

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2


* हार्दिक शुभकामनाएं *

महाकाल की

उपस्थिति से उपकृत, गौरवान्वित, ज्योतित

डम डम डमरू के निनाद से निनादित

घंटा घड़ियालों के मधुर ध्वनि से अनुगुंजित

युग युगीन उज्जयिनी

के

प्रकाशन पर

रायरु डिस्टलरी, ग्वालियर


RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2


FROM FOREST TO HIGH FASHION

**GRASIM INDUSTRIES LTD**

STRIVES TO SET
THE NEW INTERNATIONAL STANDARDS OF
EXCELLENCE

In addition to manufacture of regular staple fibre GRASIM INDUSTRIES LTD has developed various types of special Viscose Fibres to fulfil the specific requirements of the Industry with entirely indigenous know-how and manufactured on commercial scale.

GRASI - HIGH :

High Tenacity, Elongation and Snow-white Colour Suitable for 100% USF, P/U Yarns where Better Yarn Quality & Productivity is desired.

GRASI - SUPER :

The Tenacity, Elongation & Finish of the Fibre is adjusted to give smooth spinnability with better quality & productivity.

GARSIBOW :

Suitable for Real Melange effect for Spinning 100% USF Yarn & also in Blend with Polyester, Acrylic, Cotton and other Fibres.

GARSIRIB :

Ribbon-Cut (Fl at Cross-Section) Fibre in Coarse Denier to impart Novel effects in the Fabrics with increased lustre.

MICRO - FIBRE :

Developed and Marketed in 0.8 - 1.0 Denier, Provides good sheen, soft silky feel and good aesthetic appeal. It can be used advantageously for SuperFine Fabrics & Dress Materials & Suitings.

GRASIM INDUSTRIES LIMITED
(STAPLE FIBRE DIVISION)
P.O. BIRLAGRAM, NAGDA (M.P.) - 456 331

TELEX : 0733 - 233 GNGD IN
FAX : (07842) 2214

TELEPHONE : 2360 - 2369
TELEGRAM : GRASIM


RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

WITH BEST COMPLIMENTS FROM :

**Lilasons Breweries Limited**

Industrial Area, Govindpura,

Bhopal - 462 023.

Gram : "COLDBEER"

Telex : 0705 - 341 LILA IN

Phone : Off.: 546600 PBX

546601 Lines

Res.: 551611, 551956, 565601.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2


# • हार्दिक शुभकामनाएं •

सांदीपनी की गुरु गरिमा से मंडित भृर्तहरि की ज्ञान सुरभि से सुरभित, विक्रम के शौर्य पराक्रम से अभिषेकित कालिदास की उपमाओं से अभिभूषित

युग युगीन उज्जयिनी

के

प्रकाशन पर

**केड़िया ग्रुप ऑफ इन्डस्ट्रीज़**


RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2


WITH BEST COMPLIMENTS FROM

**J.K. TYRE**
BANMORE TYRE PLANT
(PIONEER TYRE MANUFACTURERS)

**J.K. INDUSTRIES LTD.,**
(BANMORE TYRE PLANT)
C-1, INDUSTRIAL AREA
BANMORE,GWALIOR.



*WITH COMPLIMENTS FROM-*

**" VINDHYACHAL DISTILLERIES PRIVATE LIMITED**
PLOT NO. 269-270
APARTMENT NO. 201-204
ZONE-II, MAHARANA PRATAP NAGAR
BHOPAL - 462 011 GRAM: ETHANOL

PHONE - Office : 555383,555384,555366
- Resi. : 552810,555425

WORKS : VILLAGE - PILUKHEDI
TEHSIL - NARSINGHGARH
DISTT - RAJGARH
PHONE - KURAWAR 4352
SHYAMPUR 242"


RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वनवासियों की सेवा में

# म.प्र. राज्य लघु वनोपज सहकारी संघ

**संघ वनवासियों को तेन्दूपत्ता, हर्रा एवं सालबीज के संग्रहण हेतु निम्नानुसार पारिश्रमिक देता है : -**

| | |
|---|---|
| तेंदूपत्ता | 25.00 रुपये प्रति सौ मानक गड्डी |
| हर्रा | 1.00 रुपये प्रति किलोग्राम |
| सालबीज | 1.20 पैसे प्रति किलोग्राम |

वर्ष 1991 सीजन से संघ द्वारा प्रदेश के समस्त तेन्दूपत्ता संग्राहकों के लिये एक **अभिनव सामूहिक बीमा योजना** लागू की गई है। इस बीमा योजना का आधा प्रीमियम संघ द्वारा एवं आधा भारत शासन द्वारा दिया जा रहा है। प्रदेश के लगभग 15 लाख तेन्दूपत्ता संग्राहकों में से **किसी की भी मृत्यु होने पर उसके परिवार को रुपये तीन हजार की राशि भुगतान** की जावेगी। यदि यह मृत्यु दुर्घटनावश होती है, तो परिवार को दी जाने वाली बीमा राशि रुपये छः हजार होगी।

**वर्ष 1991 में तेन्दूपत्ता व्यापार में 100 करोड़ से अधिक का मुनाफा : -**

वर्ष 1991 में कुल भण्डारित मात्रा 46.00 लाख मानक बोरा में, से अब तक 38 लाख मानक बोरा तेन्दूपत्ता रु. 283 करोड़ में बेचा जा चुका है। इस विक्रय से अभी तक रु. 103 करोड़ का शुद्ध लाभ हुआ है।

**म.प्र. राज्य लघु वनोपज व्यापार एवं**

**विकास सहकारी संघ मर्यादित, भोपाल**

# इन्दौर विकास प्राधिकरण, इन्दौर

सुन्दरलाल पटवा
मुख्यमंत्री
म.प्र. शासन

मुख्यमंत्री
श्री सुन्दरलालजी पटवा के मार्गदर्शन
में प्राधिकरण चहुंमुखी विकास की
ओर अग्रसर

देवीसिंह राठौर
अध्यक्ष
विकास प्राधिकरण

**उपलब्धियाँ**

- ओ.डी.ए योजना से संबद्ध सामुदायिक, स्वास्थ्य एवं भौतिक विकास की गतिविधियों में तेजी तथा शेष कम्युनिटी हॉलों का निर्माण पूर्णता की ओर।
- रिंग रोड का कार्य द्रुत गति से लक्ष्य प्राप्ति की ओर बढ़ रहा है।
- ऐतिहासिक राजबाड़ा, छत्रियों एवं टोरी कॉर्नर चौराहा के सौंदर्यीकरण के साथ-साथ मेघदूत-उपवन में विद्युत साज-सज्जा, विद्युत चलित फव्वारे तथा बच्चों के खेल उपकरण की व्यवस्था के प्रति सजग।
- आम नागरिकों को आवासीय सुविधा सुलभता से प्राप्त हो इस दृष्टि से गृह निर्माण संस्थाओं को स्वयं की भूमि के विकास में सुविधा।
- ओ.डी.ए के अंतर्गत गंदी बस्तियों में 8 करोड़ के निर्माण कार्य तथा 8 करोड़ की जल-मल निकास एवं पेयजल लाईन डालने की योजना का शीघ्र क्रियान्वयन।

उपाध्यक्ष - रमेश राठवाल　　अध्यक्ष - देवीसिंह राठौर

संचालक मंडल - श्री गजानंद त्रिवेदी, श्रीमती उज्जवला बारगल, श्री मधु वर्मा, श्री ललित पोरवाल, श्री चन्द्रप्रकाश माखीजा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2


शुभकामनाओं सहित

# भारत कामर्स एण्ड इन्डस्ट्रीज (लि.)

बिरला ग्राम, नागदा (ज़ि. उज्जैन)


RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

चम्पालाल गोस्वामी

अध्यक्ष

शत् शत् अभिनन्दन

## देवास विकास प्राधिकरण, देवास

सिंहस्थ-92

देवास विकास प्राधिकरण उज्जैन में महाकुंभ पर्व में पधारने वाले समस्त सन्त महात्माओं एवं श्रद्धालुजनों का अभिनन्दन करते हुए "सिंहस्थ-92" की सफलता की हार्दिक मंगलकामना करता है।

मां चामुण्डा की नगरी देवास के सुनियोजित विकास की ओर सतत अग्रसर देवास विकास प्राधिकरण की प्रमुख उपलब्धियां एवं भावी योजनाएँ -

**उपलब्धियाँ**

- महत्वपूर्ण एवं दर्शनीय स्थल बिलावली शिवमंदिर में विश्रामालय का निर्माण।
- चामुण्डा माताजी की टेकरी के लिए प्रवेश द्वार निर्माण आरम्भ।
- चामुण्डा माताजी की टेकरी पर जैन मंदिर से माताजी के मंदिर तक कांक्रीट पथ एवं रेलिंग का निर्माण।
- आवास नगर आवासीय योजना में विभिन्न श्रेणी के 1267 भवनों के प्रथम चरण का निर्माण कार्य आरम्भ।
- प्री-मेट्रिक ट्रायबल छात्रावास भवन देवास का निर्माण।
- पोस्ट-मेट्रिक ट्रायबल छात्रावास भवन सोनकच्छ का निर्माण।

**भावी योजनाएँ**

- भोपाल रोड चौराहा सौन्दर्यीकरण एवं विकास।
- पुराने म.गां. चिकित्सालय परिसर में प. दीनदयाल.उपाध्याय काम्प्लेक्स की योजना।
- मक्सी रोड से भोपाल रोड के मध्य की भूमि पर एक नए देवास के निर्माण की योजना।

रमणलाल चौधरी
उपाध्यक्ष

रजनीकान्त गुप्ता
मुख्य कार्यपालन अधिकारी

चम्पालाल गोस्वामी
अध्यक्ष

सदस्यगण प्राधिकारी मण्डल - श्री दानामल राजानी, श्री मोहनलाल तिवारी, श्री तिलकराज त्रेहन, श्रीमती लीलाबाई पाटीदार, श्री विजयसिंह रघुवंशी।



JIYAJEE FABRICS

*With Best Compliments*

## JIYAJEE

SUITING-SHIRTING

JIYAJEE KNOWS
TRUE FABRIC EXCELLENCE
ONCE YOU DISCOVER

JIYAJEE

YOU KNOW IT TOO
AH ! THE JOY OF DISCOVERING

JIYAJEE


RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2


# अनेकानेक शुभकामनाओं के साथ

- शुभचिन्तक

हार्दिक शुभकामनाएं

*हम सब मिलते हैं तो*
*देश मजबूत बनता है, संवरता है*
*श्रीलोन एवं श्रीस्टर*
*जब मिलते हैं अन्य धागों से*

*तो बनते हैं रंग बिरंगे*
*कोमल कमनीय एवं मजबूत वस्त्र*
*जो कि संवारते हैं, निखारते हैं*
*आपके रंग रूप और व्यक्तित्व को*

**राष्ट्र के वस्त्रोद्योग के विकास में एक महत्वपूर्ण नाम-**

श्री

*श्रीलोन एवं श्रीस्टर सिन्थेटिक धागों के निर्माता*

**श्री सिन्थेटिक्स लिमिटेड**

नौलखी, मक्सी रोड, उज्जैन

दूरप्रेष-श्रीलोन
टेलेक्स-0733-208

दूरभाष -
3335-9


RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

*With Best Wishes From*

GRASIM GWALIOR SUITING

IN A CLASS OF ITS OWN

**GRASIM INDUSTRIES LTD**

BIRLANAGAR, GWALIOR (M.P.)

WITH BEST COMPLIMENTS FROM

**THE SIMPLEX MILLS COMPANY LIMITED**

**(PAPER DIVISION)**

GONDIA-BALAGHAT ROAD,

GONDIA-M.S.-441601

Phone-3001

*MANUFACTURERS OF :*

WRITING & PRINTING PAPER.

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

शुभकामनाओं सहित

# काश्यप स्वीटनर्स प्रा. लि.

निर्माता

## सारबीटॉल ७०% आई. पी.

कार्यालय:
बिसाजी मेन्शन
एम.जी.रोड
रतलाम
फोन : २००१६, १७,१८
ग्रांम-काश्यप
टेलेक्स - ०७३०१-२०२
KSYP-IN

निर्माण स्थल:
महू नीमच रोड
बदनावर जि. धार
फोन : ७,८ व १४

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

*With Best Compliments*

# PRESTIGE

**PRESTIGE FOODS LIMITED**

REGD. OFFICE : 30, JAORA COMPOUND,
M.Y.H.ROAD,
INDORE-452 001 (INDIA)
PHONE : PBX (0731) 464201-204
TELEX : 0735-205 PFM IN
TELEFAX : (0731) 466716
CABLE : "PRESTIGE" INDORE (INDIA)

**LARGE SCALE TRADING HOUSE**

**RECOGNISED BY**

**GOVERNMENT OF INDIA**

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2


**सिंहस्थ पर यात्रियों को ढेर सारी सुविधाएँ देने की तैयारी.......**

# उज्जैन नगरपालिक निगम

**व्यय कर रहा है 16.89 करोड़ रुपए......**

- एम.आर.-4 एम.आर.-5 रिंग रोड़ निर्माण।
- शहर की टूटी-फूटी सड़कों की मरम्मत और डामरीकरण।
- पहली बार रबराइज्ड टेकनिक से सड़क निर्माण।
- फायर ब्रिगेड भवन निर्माण।
- चौराहों और प्रमुख सड़कों के अतिक्रमण हटाकर उनका विकास।
- घंटाघरों, छत्रीचौक, रामघाट, महाकाल मंदिर पर आकर्षक विद्युत साज-सज्जा।
- सिंहस्थ मेला क्षेत्र में 4000 सार्वजनिक शौचालय, 500 पेशाबघर, 6 अस्थायी बस स्टैंड, 16 रसोईघर, 10 धर्मशालाएँ।

*नागरिकों से अनुरोध है कि*

**निगम के करों का यथासमय भुगतान करें ताकि नगर का सुनियोजित विकास संभव हो सके।**

**आयुक्त**
**उज्जैन नगर पालिक निगम**

**प्रशासक**
**उज्जैन नगर पालिक निगम**

**जनसंपर्क विभाग के सौजन्य से**



# युग युगीन उज्जयिनी

के

प्रकाशन पर

***हार्दिक शुभ कामनायें***

# सोम डिस्टलरी प्रां. लि., भोपाल.


RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

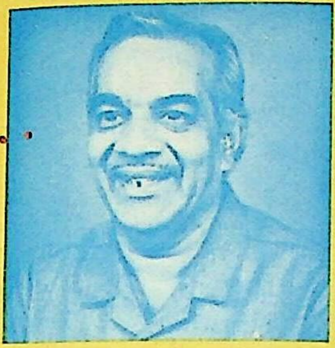

बाबूलाल जैन
वाणिज्यिक कर मंत्री, म.प्र.
अध्यक्ष
स्थानीय सिंहस्थ समिति

सिंहस्थ के कार्य
सिंहस्थ के
पूर्व
पूर्ण करने को
कटिबद्ध

श्री सत्यनारायण जटिया
सांसद
उपाध्यक्ष
स्थानीय सिंहस्थ समिति

*

महापर्व पर
पधारने वाले
लाखों-लाख श्रद्धालुओं हेतु
सर्व सुविधा जुटाने को
तत्पर

*

## स्थानीय सिंहस्थ समिति,
## उज्जैन (म.प्र.)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2


# उज्जैन विकास प्राधिकरण, उज्जैन

## हार्दिक शुभकामनाएँ

### उज्जैन नगर के चहुमुखी विकास हेतु प्राधिकरण की विभिन्न योजनाऐं।

1. *आर्थिक दृष्टि से कमजोर आयवर्ग* के लिए 120 भवन का निर्माण कार्य पूर्ण एवं भवनों का आवन्टन पूर्ण।
2. एक करोड़ की लागत से शासकीय विभागों की कार्यालय समस्या हल हेतु नवीन कार्यालय भवन का निर्माण पूर्णता पर।
3. *ऋषिनगर योजना* में मुख्य मार्ग क्रं.2 पर 12 बहुमंजिल आवासीय फ्लेट्स का निर्माण प्रगति पर।
4. ऋषिनगर में 8.5 लाख की लागत से कम्युनिटि हॉल का निर्माण कार्य पूर्ण एवं मांगलिक कार्यों हेतु कम्युनिटि हॉल उपलब्ध।
5. *हुडको ऋण योजना* अंतर्गत भवनों के निर्माण की जवाहरनगर योजना में भवनों का निर्माण कार्य प्रारम्भ, कार्य प्रगति पर।
6. नगर के मध्य में एक कम्युनिटि हॉल के निर्माण की योजना।
7. *महानंदानगर स्ववित्तीय योजना* के अंतर्गत द्वितीय चरण में 90 भवनों का निर्माण कार्य पूर्ण एवं भवन हितग्राहियों को आवन्टित।
8. दशहरा मैदान में शीघ्र ही एक नवीन शॉप कम रेसीडेंस योजना प्रारंभ की जा रही है।
9. सिंहस्थ पर्व पर महाकाल मंदिर परिसर में धर्मशाला एवं प्रवचन हॉल का निर्माण कार्य प्रारम्भ एवं कार्य द्रुतगति से प्रगति पर।
10. हरसिद्धि मंदिर परिसर में धर्मशाला निर्माण कार्य प्रगति पर।
11. नानाखेड़ा में नवीन बस स्टेण्ड का निर्माण कार्य प्रगति पर।
12. माधवनगर क्षेत्र में निर्मित होने वाले 100 शैय्या वाले अस्पताल भवन का निर्माण कार्य प्रगति पर।
13. चिन्तामण गणेश मंदिर परिसर में धर्मशाला एवं परकोटे का निर्माण कार्य प्रारंभ।
14. सिद्धवट पर धर्मशाला भवन का निर्माण पूर्ण एवं धर्मप्राण जनता हेतु उपलब्ध।

बालमुकुन्द अग्रवाल
उपाध्यक्ष
उज्जैन विकास प्राधिकरण, उज्जैन

बी.एस. डोंगरे
अध्यक्ष
उज्जैन विकास प्राधिकरण, उज्जैन

संचालक मंडल

कोमलसिंह परिहार, श्रीमती कलावती इन्नानी,
प्रकाश चित्तौडा, वीरेन्द्र कावड़िया, डॉ. प्रभुलाल जाटवा

● जनसम्पर्क ●


RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

राजमाता विजयाराजे सिंधिया
अध्यक्ष
केन्द्रीय सिंहस्थ समिति

## हार्दिक स्वागत

सुन्दरलाल पटवा
मुख्यमंत्री
म.प्र. शासन

सिंहस्थ महापर्व

पर

उज्जैन

पधारने वाले

लाख लाख श्रद्धालुओं का।

*

वंदन

संतो सिद्धों साधको का

# केन्द्रीय सिंहस्थ समिति

## उज्जैन (म.प्र.)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala-Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon